

शुभदा

[१८ वीं सदी के राजनीतिक और सामाजिक
वर्षों पर आधारित उपन्यास]

लेखक माधव चतुरसेन शास्त्री

शुभदा

•

आचार्य चतुरसेन शास्त्री



हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय

वाराणसी-१

SHREYAS : ACHARYA CHATURVEDI SHASTRI
NOVEL

विद्यार्थी प्रेस (प्राइवेट) लि० काकण्डिर, बरनसी-१ में मुद्रित

प्रकाशक :

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय

पो बक्स नं० ७

पियाबमोहन बागचरी-१

संस्करण प्रथम

अक्टूबर १९५२

अध्यक्ष-शिषी

मनीरंजन काजिनाम

मूल्य :

४६० ५० न पें

शुभदा



वर्षा ऋतु थी। भाया का महीना। गंगा के पश्चिमी तट पर तनिक हट कर गौरीपुर गाँव था। गंगा घट से गाँव तक बसा की एक लम्बी कतार दूर तक बसी गई थी। गंगा पूरे बग में बह रही थी। घाट पुराना था। टूटा-फटा था—पर अभी दो-चार पक्की सीढ़ियाँ उसमें बनी थीं। उनमें कुछ पानी में डूब गई थी। घाट पर इस समय यही भीड़ भाड़ थी। बहुत से स्त्री-पुरुष घाट पर जमा थे। घाट से गाँव तक आत्मिया का सँघा लगा था।

गौरीपुर के जमादार रायामोहन मजूमदार के पुत्र की ज्वानक ही शैव से मृत्यु हो गई थी और अब उसकी मधुविवाहिता वामपत्नी सती हो रही थी। राय यानावरण दोक और हाहाकार से भर हुआ था। घाट पर पिता बनी हुई थी और उस पर मृत स्वरूप का सब रगा हुआ था। बहुत से ब्राह्मण भावदयक उपचार कर रहे थे। पिता के निरन्तर घाट की पर्यर की सीढ़ी पर पर लटकए वह बिनकुम अबोध यानिका लगभग बसुप-सी बटी थी उसका नर-निष्ठ शृंगार किया गया था। मधो रंगीन धुनरी पहनाई गई थी। माँग में सिद्धुर दिया गया था। हाथों में मुहाग का धूँदा था। उसकी आयु अभी बस लख वर्ष की होगी। उसके मुख पर अभी भी बासभाव था। विवाह हुए अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ था और वह अभी पितृगृह में ही थी जहाँ से दो-तीन कोम पर था। आज भार ही में उनका बचप्य का समाचार मिला था और उस वहाँ से पति के साथ सहगमन करने की बुलाया गया था। उमी की प्रतीक्षा में कई पन्था तक बिठा नहीं प्रगलित की गई थी। यानिका को होश नहीं था। उसे ज्ञान

और घतूरा अधिक माथा में पिताया हुआ था। वह सीधी नहीं बैठ सकती थी। वो प्रोफ़ा ब्राह्मणियाँ उसे बानां आर स मजबूती से पकड़ बठी थी।

इसी समय चिता की सब तयारी सम्पूर्ण हो गई। किनी न उच्च स्वर से कहा—‘सती को गंगा स्नान करा कर चिता पर लाओ। ब्राह्मणिया ने उसे उठाकर एक डुबकी दी। एक घण्टा उसने आँसू पोसी पर कर रोमकी आँसू बन्द हो गई। एक प्रकार स समीपत हुए उस चिता तप ने आया गया। चिता पर उगे मृत पति के चरण गोर में मकर घटा दिया गया। गोद में बहुत-सा कपूर घृत में डुबा कर रग दिया गया। जगह-जगह घृत और राम चिता पर छिड़क दी गई। एकाएक सब बाज छप दाम दमाम जाग म बज उठ। चिता में आम लग गई। चिता उबनना-पिच-पदाधों के समान स एक धागगी ही जल उठी। बाजा के शब्द से या भाग की अनस्य उबासा स या मृत्यु के प्रत्यक्ष दशन स वह वालिका एताएक पैतय हो गई। वह जोर से चीखार कर सुन्नती हुई चिता स बंद पनी।

यह दग पाँच-सात ब्राह्मण धन ब्रह्मन् महात्मन आग बड़। अथर्म पाप बलियुग धार बलियुग धारिणर उतरक मूर्ख स निकल। उतर हाथ में गीमे बाँगा की बनी एक एक टठरी थी। जो बलाचित् एने ही समय स विग यनी हुई थी। उगी टठरी से उठाने धागिका का बबाध गिया। वर टठरी स नोप से छुपगान और भारनाद करने लगी। पर इमी समय उन ब्राह्मणा न उगे हाथों-हाथ उठा कर चिता में मार दिया। चिता की भाग अय बनय हो चुकी थी। वालिका का मगा जान वहाँ गापक हो चुका था। वह मृत्यु का प्रत्यक्ष एग रही थी। उसकी दाजों आँसू पटो हुई थी और वह दोनो हाथ ऊपर उठा कर फिर चिता से भागना चाह रही थी कि एतन ही में उन

ब्राह्मणों ने बड़ी बाँसा की छठरी उसके ऊपर डाल कर उसे दबोच दिया । एकाएक बासिका के बानों और बन्नों में आग लग गई । बाजे फिर जोर से बज उठे । बासिका का-खीन्कार बाजों के तुमुम नाद में रौ गया ।

इसी समय बन्दूक का शब्द हुआ । एक-दा-तीन-चार । सगाठार बन्दूकों के छटने और गोतियों से आहत हुए स्त्री-मृरुपों ने खीन्कार सौंठपन्थित मीड में हथधन मच गई । जिसका जिधर मुँह उठा माग निवसा । निरन्तर बन्दूका की वाङ् दायते हुए तीन-चार फिरगी चिता ने निकट तक चम आए । एक ने साहस करके चिता पर चढ़ कर बालिका का उठा कर गेंद की तरह बाहर फेंक दिया । दूसरे फिरंगी ने उस हाया-हाय में लिया । वह साहसी फिरंगी भी चिता में बूढ़ पड़ा । इस समय तब सब मोग बहूँ में भाग चुके थे । फिरंगिया ने फिर उन पर गोतियों की शर बागी और मूर्च्छित बालिका को लेकर गगा की ओर रुग किया । गगा तब पर एक नाव बँधी थी । उस पर तीन चार मींती लड़े थे । उनका सहारा दकर आगहिवा का नीका पर दिनाया । नौवा गगा ने बीच घाट में लजी में चम ली । गगा के बीच में एक बोगा लड़ी थी । बोगा में कोई बीम मगम्त्र गार थे । बीच में एक छोटा-सा छप्पर का घर था । बासिका का मवर फिरंगी उस पर में चने गए । एक ने हुकम दिया, बागा नाम दा और बहाव में जाने ला । गिगाहिवा का हुकम दिया—कोई नाक टागा पीछा करने ता गोवी चना हो । बोगा तबी में जम ली ।

जो साहसिक फिरंगी बानिजा को बिछा से उठा लाया था, उसका नाम मेकडानल्ड था । कलकत्ते की ग्यारह नम्बर गौरी रेजीमेंट में वह सेप्टिनेंट था । कोणा में उसकी रेजीमेंट की एक टुकड़ी थी । कोणा सरकारी थी और वह गंगा में गन्त के लिए निवसती थी । उन दिनों गंगा में जो जल-बनैतियाँ होती थीं उन्हीं की दाय रेख तथा व्यापारी नावों की सुरक्षा धारि के लिए यह कोणा गंगा माग्न तक गन्त लगाया करती थी । सेप्टिनेंट मेकडानल्ड इसका अफसर था । ज्योंही कोणा गौरीपुर घाट के निकट पहुँची—सेप्टिनेंट में गुमा कि वहाँ एक स्त्री ने मर्ती किया जा रहा है । वह तुरन्त आठ-दस सैनिका को संग ले विनारे पर उतर आया और ठीक समय पर उसने बानिजा की रक्षा उस भयकर मौठ से कर ली । कोणा पर पौत्री डापटर भी था । उसने बानिजा का समुचित उपचार किया । अभी उसका शरीर का कोई गम्भीर शक्ति नहीं पहुँची थी । सिर्फ बाल झुमस गए थे और कपड़ों में आम लग गई थी तथा वह इस समय गहरी मूर्च्छा में थी । डापटर ने उपचार के बाद गर्म पानी में मिसाकर पाई बाँधी उसका मुँह में डाली और कहा—अब इस आराम करने दिया जाय ।

कोणा पर कोई स्त्री न थी । इससे सेप्टिनेंट मेकडानल्ड बहुत ब्यस लाग से कोठरी से बाहर आए और एक बगाली सत्तासी से कहा—बिनारे पर कोई गाँव आने पर कोणा रोव दा और एक हिन्दू बाई जस बने से भाओ ।

गाँव आया । फिरंगिया की नाव पर कोई भोरत आम को रात्री नहीं हाती थी । बड़ी बन्निबाई से एक बुड़िया रात्री हुई । वह कोणा पर धारण बानिजा की गुन्ना डापटर के वह अनुसार करने मगी । सेप्टिनेंट मेकडानल्ड बाहर भा मनुष्ट भाव से पादप पीन लग ।

रात भर कोशा बसती रही। सूर्योदय होने से कुछ पूव ही बालिका की मूर्च्छा भंग हुई। उसने दाई को देखकर पूछा—“म कहाँ हूँ।”

“तुम फिरंगियाँ की नाव पर हा।”

“तुम कौन हो ?”

“मैं तुम्हारी दासी हूँ अब तुम सो जाना मैं साहब को खबर करती हूँ।”

वह बसती गई। मूषना पाकर मेडिकल और डाक्टर भीतर आए। बालिका हाथ भाग पर भी हतजात थी। सामने दो गोरो का धात देग पीग मार कर फिर घहोग हा गई।

डाक्टर ने आवश्यक हिदायतें दाई का दी और बाहर चल गए।

रात भर और फिर रात भर कोशा बसती बसती गई। दाई मूर्च्छित अवस्था में ही ब्राडी मिसा रूप उसका मुँह में बासती रही।

प्रातःकाल होने पर उस लोग आया। मूषना पाकर डाक्टर और मेडिकल भीतर आए।

डाक्टर न दग कर कहा—“अब कोई मय नहीं है। माप बाते बीजिए। इतना कहकर डाक्टर बाहर चल गए। मेडिकल टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी में बातें करने लग। उन्तान पत्रा—

“कभर सही, अब डर का बात न। तुम अच्छा हागा तो भम तुमकूँ टुम बालगा भजन मरेगा।”

“साहब आप कौन हे ?”

“भम मेडिकल मकदानलड। कम्पनी सरकार का धादमी।”

“म पक्षी कैम भाई।”

“टुम कुछ पाड करना हाय ?”

“इतना पाग भाता है—कोई बुरा गुमना दया था। ब मुझे जना रहे प। बडी भारी भाग थी। उस भाग में सारी दुनिया जस रही थी। बिमने मुझ उस धाम से बचाया।”

जो साहसिक फिरगी वासिका को चिता से उठा लाया था उसका नाम मेकडानन्द था । कलकत्ते की म्यारह नम्बर गोरी रेजीमेंट में वह सेप्टिमेंट था । कोशा में उसकी रेजीमेंट की एक टुकड़ी थी कोशा सरकारी थी और वह गंगा में गप्ट के लिए निकसी थी । उन दिनों गंगा में जो अस-इकैतियाँ होती थीं उन्हीं की वजह से रक्षा तथा व्यापारी नावों की सुरक्षा आदि के लिए यह कोशा गंगा सागर तक गप्ट भगाया करती थी । सेप्टिमेंट मेकडानन्द इसका अफसर था । ज्योंही कोशा गौरीपुर घाट के निकट पहुँची—सेप्टिमेंट में सुना कि वहाँ एक स्त्री को सती किया जा रहा है । वह तुरन्त बाठ-बस सैनिकों को सग से किनारे पर उतर लाया और ठीक समय पर उसने वासिका की रक्षा उस भयकर मौत से कर ली । कोशा पर फौजी डाक्टर भी था । उसने वासिका का समुचित उपचार किया । अभी उसके शरीर को कोई गम्भीर क्षति नहीं पहुँची थी । सिर्फ बास झुलस गए थे और कपड़ों में आग लग गई थी तथा वह इस समय महरी मून्सों में थी । डाक्टर ने उपचार के बाद गर्म पानी में मिलाकर थोड़ी थोड़ी उसके मुँह में डाली और कहा—अब इसे आराम करने दिया जाय ।

कोशा पर कोई स्त्री न थी । इससे सेप्टिमेंट मेकडानन्द बहुत व्यग्र भाव से कोठरी से बाहर आए और एक बगामी लसासी से कहा—किनारे पर कोई गाँव आने पर कोशा गोक दो और एक हिन्दू बाई जैसे वने से आओ ।

गाँव आया । फिरंगियों की नाव पर कोई औरत आने को राजी नहीं होती थी । बड़ी कठिनाई से एक बुढ़िया राजी हुई । वह कोशा पर आकर वासिका की सुधूपा डाक्टर के कहे अनुसार करने लगी । सेप्टिमेंट मेकडानन्द बाहर आ सतुष्ट भाव से पाइप पीन लगे ।

रात भर कोशा बसती रही । सुपौंव होने से कुछ पूर्व ही बामिका की मूर्च्छा भग हुई । उमन बार्न को दलकर पूछा—“म वहाँ हूँ ।”

‘तुम फिरिया की नाब पर हो ।’

तुम वौम हो ?

‘मे तुम्हागी दासी हूँ’ अब तुम सा जामो मे साहव को खबर करती हूँ ।

वह धमी गई । मूषना पाकर सफिटनेट और डाक्टर भीतर आए । बामिका हाग आने पर भी हतज्ञान थी । सामने दो गोरी को आने दग नील मार कर फिर बहोग हा गई ।

डाक्टर न आवश्यक् हिणपने दाई को दी भीर बाहर खने गए ।

दिन भर भीर फिर रात भर कोशा बसती धमी गई । दाई मुषिद्ध मपन्धा में ही पांठी मिना दूम उमक मुंह में डालती रही ।

प्रात वाम होने पर उस होम आया । मूषना पाकर डाक्टर भीर सफिटनेट भीतर आए ।

डाक्टर न दग कर कहा—अब दाई भय नहीं है । आप बाते कीजिए । इतना कहकर डाक्टर बाहर खन गए । सफिटनेट टूटी-पूटी हिन्दुस्तानी में बाते करने लगे । उन्होंने कहा—

‘फअर सदी भय डर का बाट ने । तुम मच्छा हागा वो भम तुमकू टुम बालगा भेजन मरगा ।

माह्य आप वौम हूँ ?

अम सफिटनेट मेवदानन्द । बम्पनी सरबार का भादमी ।’

म यहाँ वैन आई ।

‘तुम कुच याद करला हाय ?

‘इतना याद आता है—कोई बुरा मुषना बेया था । व मुने बला रह्य । बड़ी भारी धाग थी । उस धाग में सारी कुनिया जल रही थी । जिसने सो उस हाग से बचाया ।’

“पनमेसुर गाब ने फेयर सेडी” बम मोठ ठीक पहुँचा । बमारा मिहनत कारगर हुआ । दुमारा जान बच यया ?”

बेचारी बामिका इसना भी नहीं समझ सकी कि साहब को बस्यबाव देना चाहिए । उसने भीतमुद्रा से कहा—

‘सेकिम व भोग कौन वे ?’

‘घयतान हाय । बट अभी दुम सो जाब कमजोर है । वाट फिर होगा ।

‘बे मुझे फिर लो नहीं बलायेंगे ?’

‘नो नो हियर वे कौन गाँट कम । दुम इत्मीमान से र्हो ।

मूवती बूप हो गई । उसने आँसू बन्द कर लीं । उसकी आँसू से आँसू डरक बसे ।

साहब तेजी से बाहर बसे गए ।

काधा बसती गई । बामिका फिर होश में आई । थोड़ा डूब और मद्धमी का घोरबा उसे दिया गया । तब साहब ने उससे फिर बात की । माया की विक्कत से बात घड़ी कठिमाई से हुई । बाघभीत का सारांश यह था कि मेरा कोई नहीं है । अब मुझे बहाँ मत भेजिए । साहब ने स्वीकार किया—बहाँ तुम्हें नहीं भेजा जायगा ।

अब साहब चिंता में पड़—कहाँ इस स्त्री को भेजा जाय । सैनिक सभिवेश में बह उस बपने साथ नहीं रख सकते थे । परन्तु धीघ ही उन्होंने कसंभ्य निर्णय कर लिया ।

बसकता आ गया । अभी बेटे यहूर दिन शोप था ।

गौरीपुर में कुसीन ब्राह्मणों की पंचायत बुड़ी । भास-भास क दस-बीस गाँव के कुसीन ब्राह्मण आए । सब के नेता प हरिदास तर्क पचानन । पचानन महाशय दस-बीस विद्यामियां का मण्ड साय साए प । ब अपनी दिव्य मण्डली सहित फा पर बीच में बटे बठ गभीरसापूर्वक नाग्यित पी रहे प । दिव्यबग एक क बाब दूसरी विनम बड़ात जा रहे थे । दूसरे ये—धमदास तिरोमणि । आयु इनकी कम थी पर कुसीना के तिरोमणि ये । तीमर थे, चण्डीचरण विचारत्न उनका भी बड़ा बवदबा था । इपर-उपर क ब्राह्मण बहुत जमा थे । सब अपनी-अपनी हाँक रहे प । मामला बहुत गभीर था । गधा मोहन मजुमदार गौरीपुर के जमींदार तो थे ही—जाति में भी बीस बिस्व क कुसीन थे । उनकी सती हूती हुई पुत्रबधू को म्मच्छ उठा ल गए । महा अपर्ध—घोर अन्याय हो गया था । धर्म का वेडा ही एक हा गया । अब प्रान यह था कि राघामोहन मजुमदार का बिरादरी से गारिज किया जाय या नही । राघामोहन भीषा मिर लिए घोटाभिभूत हुए पुपबाप बैठे प ।

तर्क पंचामन ने कहा— 'क्यों रामनाम जब क्या किया जाय । तुम क्या कहत हा ?'

रामनाम में कहा— 'आप बड़ है सब शास्त्रा क माता ह जाति में पूज्य है । आपके सामने में क्या कह सकता हूँ आप ही कहिए ।'

'म अय इधमें क्या कहूँगा । राघामोहन की पुत्र-बधू का अपहरण हुआ है । ब जाति में ता नहीं रहे मरत ।

'कैसे रहे सजते हैं । तिमरी पुत्र-बधू म्मच्छा के हाथों में पहुँच गई ब हम कुसीन ब्राह्मणों की जाति में कैसे म्म मरते हैं ?'

“तो वध, उनका हुक्का-मानी बन्द । नाई-बोबी भी बंद । तुम क्या कहते हो अम्बीचरण ?”

‘आपने शास्त्रीय मर्यादा की ही बात कही है ।’

वध राधा मोहन ने कहा— ‘किन्तु तर्क पंचानन महोदय आप यह तो बताइए कि इसमें मेरा क्या दोष है ?’

‘दोष बहुत है । आपकी पुत्रवधू अष्ट हो गई । इससे उसका पितृकुस भी अष्ट हो गया और स्वसुर कुस भी ।’

तर्करत्न महाशय कुछ तो मरी दशा पर तरस साइए । मेरे कष्ट को देखिए ।’

‘तो भाई तुम्हारे कष्ट के लिए समाज को तो पतित नहीं किया जा सकता । कहो—कुस को वह फिरंगी तुम्हारी बेटी को मेम बना कर गाँव में आ गया तो हम उसे जमाई बोड़े ही मान सेंगे ? हाँ तुम्हारी बात सच है । जैसा चाहे करो ।’

‘तो यही बात ठीक रही—तर्करत्न महाशय परन्तु बहू के पिता के लिए क्या होगा ?’

धरे भाई समुर कुस की भाँति पितृकुस भी तो पतित हो गया । यही ब्यवस्था उसके लिए भी है ।

राधा मोहन मजूमदार के पाँच सौ रुपए तर्क पंचानन महाशय पर पावने थे । उसकी अदासती डिग्री भी हो गई थी । अब उसी बात को याद कर राधा मोहन ने बड़ा क्रोध करके कहा— ‘अम्बीचरण है तर्क पंचानन जी आप हुक्का-मानी नाई-बोबी बंद कर सकते हैं । अदासती प्यादो को तो नहीं रोक सकते । कुर्की-डिग्री तो नहीं रूक सकती ।’

तर्क पंचानन डर गए । उनके हाथ का नारियल वहीं रुक गया । हाथ फाँपने लगे । डिग्री की बात बहुतों को मासूम थी । जिन्

मासूम थी वे उसके पंचानन को चित्राने के लिए बोले—“नहीं डिप्ली-
कूर्की को पंचायत कैसे रोक सकती है।”

अच्छी बात है, तो मैं भव जाता हूँ। त्रुप बरके राधामोहन
उठ खड़े हुए। अब तर्क पंचानन का सकल पाकर घण्टीघरण बोले—

‘ठहरो राधामोहन एक बात है।

बौन-सी बात भव रह गई।

‘तुम वृन्दावन जाकर धुठि कर आओ।

और जो मैं न आऊँ ता ?

‘ता भाई सपरिवार बगगी बन जाओ। तीसरी राह नहीं
है।’

‘क्यों नहीं है। मैं इस जाति विरादरी पर सात मारता हूँ।
आज से मैं ब्राह्मण हूँ ही नहीं मैं ब्रह्मो ममाज में वीक्षित होऊँगा।”

‘अब तो तुम स्वयं ही पतित हो रह हो।

‘पतित तुम हो जो रूप मण्डूक बन हो। तुम रुद्धिवादी, स्वार्थी
हो। पराया दोष देगना तुम्हारा काम है। अपनी धर्म का घहृतीर
तुम्हें नहीं दीगता पर दूसरे की धर्म का तिनका भारी मासम होता
है। मरी पुत्रकपू द्रुपपीत्री बरुषी थी। म उस सती करना नहीं
चाहता था। मेरा एक ही पुत्र था—बह मर गया, तो मने बह को ही
पुत्र के समान प्यार करना चाहा था। मर पर मैं स्त्री नहीं है। कोई
दूसरा भी मरा भारतीय नहीं है। पर तुम क्रूर, हिंसक मडियो न मुझे
बह भयानक काम करन को बिमल किया। पर ईस्वर ने उसकी रक्षा
करनी। म तो मुम हूँ। ईस्वर कर बह जीवित हा और मैं उसे
अपनी पुत्री की भाँति पासन करे तथा अपनी सारी सम्पत्ति उसी के
नाम करे।”

‘और यदि वह गिम्थान हो गई हो ?’

“तो भी क्या हर्ज है। बिस्तान तुम्हारे जैसे नीच, क्षुद्राशय पुर और अधर्मों नहीं हैं। वह बिस्तान भी हो गई होगी, तो भी मैं अपनी सब सम्पत्ति उसी को दूँगा। यही मेरा ध्येय निश्चय है। मैं अब हम गाँव में—जहाँ तुम जैसे नर पिशाचों के अपवित्र चरण पड़त हों खूँगा भी नहीं। मैं बसकसे जा दूँगा। जिससे फिर कभी मुझे तुम्हारा मुँह न देखना पड़े। तर्कपचानन महाशय तुम्हारे ऊपर जो मेरी पाँच सौ रुपए की बिघी है वह मैं छोड़ता हूँ। तुम्हारे ऊपर का भ्रमण माफ़ करता हूँ। और रामदास महाशय गत धर्म जो बसक का काम तुम्हारी बिषवा बेटी से किया था और जिसे तुमने जहर देकर मरवा डाला था तुम्हारी वह कलक गाथा भी मैं किसी से नहीं कहूँगा। जिस पर मेरा सेना-याचना बकाया है वह सब मैं छोड़ता हूँ। किन्तु मैं अब न तुम्हारे साथ गाँव में खूँगा न तुम्हारी इस बृजित विरादरी में।

इतना कह कर रामामोहन तेजी से वहाँ से उठ गए। चर्मप्राण ब्राह्मण चिरोमणि जमा का मुँह ठीकरे के समान स्याह हो गया।

★

४।

बसकसे के उत्तरी विभाग में साल बाजार एक पुराना स्थान है। नवाबी समयवारी के समय यहाँ फौजदारी दामास्ताने में हुयसी न फौजदार आकर कचहरी किया करते थे। जारमीनियम पुतगीज तथा उच्च व्यापारी इसी पश्चिमी भाग में बसे हुए थे। मास बाजार क पश्चिम में 'मास बोधी' है। इसका अंग्रेजी नाम 'टास्क स्क्वायर' है। जिन दिनों की बात हम सिल रहे हैं—उन दिना 'टास्क स्क्वायर' के

एक पार्श्व में एक छोटा-सा सफेदी किया हुआ एकमजिमा मकान था । मकान में रक्खण्ड पादरी जानसन रहते थे । जानसन बड़े मज्जन और दयासु पुरुष थे । व मण्डन की क्रिष्चियन मामज सामांटी की आर म भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करने आए थे और अब उन्हें बसबसे में गहन बीम पप हा गए थे । व एक विद्वान् भीर शान्त प्रकृति व पुरुष थे । बनरस म सभी छाट-बड़े मपत्र अपसर और हिन्दुस्तानी लोग नी उनका बहुत जावर करत थे । गुरु गुरु में बगावी जन फादर गुरु या गुरु उन्गारण मही कर करत थे । ईसाए उम्हान गग नाम का भागमोयकरण करने पादरी बन बना लिया था और व तब भारतीय गिर्ग पादर जानसन व। पादरी माहद सह पर पुकारत थे । धाग यह पादरी घर मभी ईसाई मिशनरिया के लिए धाम हा गया । पादरी जानसन बड़ मरुपरित्र भी थे । बहना शास्त्रि व मप्रजा में अपवाद थे । उनकी पत्नी भी बहुत मरु थी । पत्ने कर एक घना उच्च श्यापारी पी पत्नी थी । उमम मरु पर उहाने पाल्य माहद म विवाह किया । यद्यपि उनकी आयु बियाह व समय पचाम वर्ष की थी और पादरी माहद म वृद्ध अपिष ही थी परन्तु मोना बहुत मरु में रह रहे थे । मम माहद व घन म पादरी माहद म ल श्याप-मा धनाधामय और अस्पनाय गान रग्या था । अनाधामय का प्रबाय गुरु उनरी पत्नी करती थी और अस्पनाय पादरी माहद गुरु पनात थे । उम्हाने विवादस ही में शशी टाटरी की गिगा पाई थी । उमी का ये गरी मरुपणन करत थे । उन दाना कामां म उनका उहृष्य गुरु पूग हा रग था । यत्र स म्ना-पुरुषा और धनाध धामकों को उन्हान गिर्ग बना लिया था ।

नेस्त्रिनेट माडानन् म पिना म उदार की र्ग बानिरा की इही जानकर माहद को मरुशना में रग दिया । पादरी व

वहुत झण्डी बंगला भाषा जानते थे । बासिका के रूप, सील और बुद्धि को देख के बहुत प्रभावित हुए । बासिका का जसती पिता से उद्धार किया गया है, यह सुनकर वे श्रवित हो गए । उन दिनों बंगाल में सती का बड़ा प्रचार था । तथा वहाँ वचपन ही में हिन्दू ब्याह कर देते थे इसलिये वहुधा दुधमुँही बच्चियाँ को निर्दयतापूर्वक जसा दिया जाता था । इससे सभी अंग्रेज हिन्दुओं की इस बुर प्रथा के प्रबल विरोधी थे । इसी से उन्होंने यत्नपूर्वक इस बासिका को अपने यहाँ आश्रय दिया और उसे अंग्रेजी भाषा तथा साहित्य एवं बंगला तथा फारसी की शिक्षा भी सेप्टिमेंट के अनुरोध से देने लगे ।

पादरी साहब के पास कमी-कमी एक हिन्दू मुबक भाया करता था । अभी इसकी आयु बाईस बरस की ही थी । यह बंगाल के उच्च धनी ब्राह्मण परिवार का मुबक था तथा शिक्षित और मेधावी था । कसकले में केवल यही एक तरुण ऐसा था, जो यास विवाह और सती प्रथा का विरोधी था । वचपन ही से इस तरुण का मुकाब धर्म विवेचना की ओर था । इस समय तक भी बंगाल की राजभाषा उर्दू ही थी । और सब प्रतिष्ठित बंगाली उर्दू का बिद्वान् बनने के लिये फारसी भाषा पढ़ना आवश्यक समझते थे । इनके पिता रामकान्तराय बड़ कट्टर हिन्दू थे । माता भी धर्मप्राण साध्वी थी । परन्तु यह तरुण नई प्रतिभा का था । पिता ने उसे फारसी का भासिम बनाने के लिये पटना भेज दिया था वहाँ उसका फारसी के साथ अरबी भी पढ़ी और कुरआन का पाठ भी किया । इस्लाम और उसने तसब्बुह का उस पर प्रभाव पड़ा तथा कुरआन को पढ़ने के बाद उसके मन में एकेपबरबाव का बीज अंकुरित हुआ । यहीं उसकी भेंट प्रसिद्ध दार्शनिक सुरेस्वराय से हुई । उनसे इन्होंने सपनिपद् पढ़ा । और ब्रह्मजिज्ञासा पर मनन किया । देवता और मूर्तिपूजा से ये विमुख हो गए तथा अंग्रेजों के

सम्पर्क और अंग्रेजी पढ़ने से मुफारवादी भी हो गए । इसी से इनके पिता इनसे रुष्ट रहने लगे तो भी इन्होंने अपना मत बदलना नहीं । उन्होंने 'तुहफुलुस मुवाहिदीन' नामक एक पुस्तक फारसी भाषा में लिखी, और उसकी भूमिका अरबी में लिखी—जिसमें एकेश्वरवाद की प्रशंसा थी । ये रंगपुर के कलक्टर के दीवान थे और थक मौकरी छोड़ कर कसकते धा गए थे तथा हिन्दू और ग्रीक भाषा पढ़ रहे थे जिसमें बे यहूदी और ईसाई वादविष का अध्ययन मूस भाषाओं में कर सकें । पादरी जानसन के सौजन्य और सद्बिचार से वे बहुत प्रभावित थे । और बहुधा उनके पास आकर धार्मिक और सामाजिक मामलों में वाद विवाद करते रहते थे । पादरी जानसन का विश्वास था कि एक दिन यह भद्र कुसीन यनी बंगाली ब्राह्मण अबदय ईमामसीह की धारण आएगा । अतः वे उसकी बहुत आशंका करते थे तथा प्रेम से वार्तालाप भी करते थे । तरुण का नाम राममोहन राय था । आगे चलकर यही तरुण राजा राम मोहन राय के नाम से ब्रह्मसमाज के मूल सस्थापक के रूप में संसार में प्रसिद्ध हुए । हास ही में वह शीघ्र धर्म का अध्ययन करने के लिए तिरुवत की हजारों मील की दुरी यात्रा दल करके पार धरम में सीटे थे । इसमें भी इनका नाम भारतीय तथा अंग्रेज दोनों ही में काफी प्रसिद्ध हो गया था ।

राममोहन के खान ही पादरी ने उनका स्वागत करते हुए कहा—
'आज तो मैं बहुत ही हर्षित हूँ ।'

'यह गुन पर मैं प्रसन्न हुआ । किन्तु क्या इस रूप का कोई विशेष कारण है ?'

पादरी माहद ने आशिरा की हृदयविगारक करण कहाणी पढ़ गुनाई । राममोहन ने आशिरा से भेंट की । उसी के मुँह से उसकी

दुर्भाग्य की कहानी सुनी। सुन कर उसकी आँसों से चौघारा आँसू बहने लगे।

फादर जानसन ने कहा— 'यदि सेफ्टिनेट मेकडानलड जान पर श्लेष कर उसके प्राण म बचाता ता वह अब तक जल कर राख का डेर हो गई होती। यह तो तुम जानते ही हो कि आजकल हिन्दू स्त्रियाँ और सास कर विधवाया की किस्ती कुर्वता है। तुम्हारे जैसे तरण को इसके विरुद्ध आवाज उठानी चाहिए। हमारी आवाज बे नहीं सुनते। हमें व विदेशी और विधर्मी कहते हैं। पर तुम तो उसी धर्म में पैदा हुए हो तुम्हारी आवाज बे अनुसुनी नहीं कर सकने।

'मरी अनुपस्थिति में मेरे बड़े भाई का बेहान्त हो गया तथा मेरी माबाज सती हो गई। मेरे दिम पर इसका दाग है। मैं जानता हू कि देश में प्रति बर्ष मैकड़ों-हजारों निरीह स्त्रियाँ इस प्रकार पीबित जमा दी जाती ह। मैं चाहता हू कि इस विषय में मैं ऐसी आवाज बुलन्द करूँ कि वहर भी उसे सुन लें।'

'हमारे घरों में विधवा स्त्रियों को जो आजीवन कष्ट मोगना पड़ता है उसे मझसे अधिक कौन जानता है। वह कष्ट और अपमान इतना बसह्य है कि उसकी अपेक्षा इस प्रकार पिता पर जल मरना बे पसन्द करती है। जम भर दारण बु स मोगन की अपेक्षा यह सज मर का कष्ट उन्हें बखरता नहीं। पर इस अबोध वासिका की तो बात ही जुदी है। जिसने पति को देखा तक नहीं पति घर गई ही नहीं। पति-मल्ली-सम्बध क्या होते हैं यह वह जानती ही नहीं।

'मेने १८२७ की रिपोर्ट में सरकारी आँकड़े दये हैं। उस साम बंगाल में ३०१ स्त्रियाँ पीबित जमाई गई थीं। परन्तु यह अपूरी रिपोर्ट थी। इससे प्रथम १८१५-१८१८ तक तीन वर्षों में कम से कम साढ़े तीन हजार विधवाएँ पीती जलाई गई हैं जिनमें बहुत-सी इमी

वासिना की माँति अक्षय थी । अक्षय कसकसे श्री आस पास कस्यानों में असाई गई बिषयाओ की संख्या इत हज़ार से कम नहीं है ।”

“म तो इसे एक जातीय शय रोग समझता हूँ । यह भारत के माये पर कलक का टीका है फादर ।

“निस्संदह राममोहन यह भारतीयों की जानमून्यता और गिचवट का पिह्ल है ।

मैं तो इसक निवारण के तीन सूत्रों को महत्व देता हूँ । यदि सरकार हमारी सहायता कर तो ही सफलता प्राप्त हो सकती है ?

‘तीनों सूत्र कौन-से हैं ?

“प्रथम सती प्रथा का बानूनन बिराध । दूसर पुनर्विवाह का बानूनन संघ माना जाना । तीसरे स्त्रियाँ के उत्तराधिकार का आरदार समर्पण । बिना इन तीन सूत्रों के भारतीय स्त्रियाँ की दगा नहीं मुघर सकती ।

‘तुम ठीक बतल हो अक्षयप्रसन् । इस काम में मैं तुम्हारे साथ हूँ ।”

‘आपकी बड़ी कृपा है फादर, मैं शीघ्र ही सती प्रथा के विरोध में एक पुस्तक लिखूँगा और मने जा सगला पत्रिका बौमुदा निवासना आरम्भ किया है उसमें तो मन गती प्रथा पर क्या माम एक मन्त्र लिखा है । आपन उसे अवश्य देगा होगा ।

‘वहाँ मने तो नहीं देगा । सकिम इस सब काम के लिए मैं तुम्हारा अभिनन्दन करना हूँ राममान ।”

एक पत्रिका में आदर प्राप्त भेजूँगा ।

‘अच्छ बेचना । पर मने काय है कि तुम एक विज्ञान के कम्पनी बनाओ और सगल घर में उसकी शाखाएँ पन्ना दो । इस बमेटी के गदग्या का यह बतल्य होना चाहिए कि ये जहाँ भी सती होने का

समाचार पाएँ, वहाँ पहुँच कर उसे रोकें और सरकार को भी सूचना दें ।”

“आपका प्रस्ताव उत्तम है । मैं अवश्य ही ऐसा ही करूँगा ।”

‘बहुत बहुत भ्रमवाद राममोहन । तुम्हें कदाचित् मामूम हो कि इस समय कौसिल में दो विवाद ऐसे उठ सके हुए हैं जिनमें हमारे गवर्नर-जनरल सर जिलियम वेंटिंग को बहुत बिसवसपी है । पर वेष्टवासियों में मतभेद है ।

‘कैसा विवाद ?’

‘एक तो यही सती-प्रथा का दूसरे भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रचार का ।

‘मैं तो कह ही चुका—मैं सती प्रथा का कट्टर विरोधी हूँ और उसे समाप्त करने में मुझसे जो कुछ वन पड़ेगा सबीका उठा न रखूँगा ।”

‘और दूसरे विषय में तुम्हारी क्या राय है ?’

‘स्पष्ट है कि इस समय बेबस फारसी या संस्कृत शिक्षा पर्याप्त नहीं है । मैं चाहता हूँ कि मरे वेष्टवासी प्राचीन पद्धति की शिक्षा के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा और नवीन विषयों की भी शिक्षा प्राप्त करें । मैं अंग्रेजी की उपादेयता की ओर भी वेष्टवासियों का ध्यान लीचन का प्रयत्न कर रहा हूँ ।

शाबास मेरे नवयुवक दोस्त । तुम तो एक सच्चा ईसाई की तरह बोल रहे हो फिर क्या कारण है कि तुमने अभी तक बपतिस्मा नहीं लिया और अभी तक उस भाषाक मजहब के चक्कर में पड़े हो ।

‘फावर, मैं पंजा ही नहीं हुआ हूँ । क्या किया जाय । फिर मैं उसे नापाक भी नहीं मानता । कदाचित् आपने उपनिषद् की पवित्र भाषा कभी नहीं पढ़ी या ब्रह्म जिज्ञासा का रहस्य मनुष्य के सामने खोलती है ।

“क्या उसमें ऐसी बातें हैं जो होसी वाइबिस में नहीं ।

“हृ फादर ।

‘हो नहीं सकता है । प्रभु ईसामसीह की नियामत तो होसी वाइबिस ही है ।

‘पर उपनिषद् तो प्रभु ईसामसीह मे बहुत पुरानी है ।

‘पुरानी होने से क्या हुआ । उनमें हागे तो बही मूठे किस्से-कहानियाँ ।

‘उनमें ‘कम्य-कहानी नहीं ह उनमें ब्रह्म का मेरा बताया गया है । जो अदर ह अगाबर ह और अबिनायो है ।

माई माड मर प्यार तुम इतन अच्छे नीजवान होकर कैसे एसी वाहियात बातें कर रह हा ।

राममोहनराय हंस पड़ । उन्हान कहा— फादर मने अपने का कुएँ का मेंबर महीं रखने दिया । मैं एन बहते दरिया के समान हूँ । जहाँ से जो जान मिलता है स सता हूँ । मने कुरान पढ़ा वाइबिस पढ़ा, फिर त्रिभुवत के गौफनाक पहाड़ा में जा कर मौडपरम के रहस्य जाने । बेद-बदान्तां और उपनिषद् का मनन किया, और भी कर रहा हूँ । आप भी ऐसा ही कीजिए फादर । सब धर्मों का सच्चा ज्ञान प्राप्त कीजिए ।”

“शैतान स जाय सब धर्मों को और उनकी गन्दी किताबों को भी । तुम पौरन प्रभु ईसामसीह की शरण आओ जो हमारी सेवा का पार विषया है ।”

‘फादर मर गामन इनम भी महत्वपूर्ण काम है । यह हमारा मर का जन्मरूपन और निराला का काम है । सारा का ग्यान्ति गति और कुरीतिपा के मेंबर में फँसा है । म उनका मानसिप परतम को उपरत करने के लिए अंग्रेजी गिदा का समपन कर रहा हूँ । परन्तु

यह नहीं चाहता कि भारतीय उच्छृङ्खल और नास्तिक हो जाय, और उन्हें भारतीय वस्तु तथा संस्कृति से घृणा हो जाय। मैंने ब्रह्म समाज की स्थापना की है जो आस्तिकवाद का धर्म है। इसका मूल सिद्धान्त एकेस्वरवाद है और आधार उपनिषद् है। इस बन्धन में मैंने सुधार का यह बीज बोया है फादर। रुढ़िवाद और नास्तिकता दोनों ही का उन्मूलन करके देशवासियों के मन में अपनी दशा सुधारने की प्रवृत्ति के अंकुर उत्पन्न करना चाहता हूँ।

★

५

पाँच वर्ष पूर्व घिता स उठाई गई घासिका फादर जानसन के निकट रही। धव उसकी आयु सत्रह वर्ष की हो चुकी थी। वह बसाधारण सुन्दरी और प्रतिभाशालिनी सङ्गी थी। इस बीच उसने न केवल बहुत अच्छी अंग्रेजी सीख ली थी वह सब प्रकार के अंग्रेजी रहन-सहन व्यवहार सीख गई थी। वह धव अपने को पादरी जानसन की बटी समझती तथा उन्हें फादर न कह कर पापा कहती थी। उसके रूप-व्यवहार और योग्यता को देख बहुत अंग्रेज अफसर उसने प्रणयामिसापी हुए थे। परन्तु प्रेम की गौंठ सेफिटनेट-मेकडा तरह के माय उमकी बंध चुकी थी। मेकडानस्ट जब मैजर हो चके थे। वे बहुधा उससे मिलने के लिए आते रहते थे। पर उन्होंने

झभी उससे प्रणय निबेदम नहीं किया था । वे अभी केवल उसके सख्त की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

वासिना ने जो अब एक धार्क्यक यकती वन चुकी थी अपना रहन-सहन तो बदल दिया था पर अपना नाम दुभदा नहीं बदला था । न अपना धर्म-विश्वास बदला था ।

दुभदा ने प्रणयानिस्तारी बनेक उच्च अग्रज जफर म । उन दिनां वे बहुधा भारतीय स्त्रियों म बिबाह कर सत थ । परन्तु वा भारतीय ईसाई भी उम्मीदवार थे जो वाम्तव में उसी क साथ पादरी साहय के घर में रहत थ और उनके घर का काम-काज किया करते थे । दुभदा उनकी दृष्टि भांप गई थी और बहुधा उन्हें यनामा करती थी । इनमें एक था जान रामकृष्ण और दूसरा था टाम बागीनाथ । रामकृष्ण तो जात का दोम था । बागीनाथ मोधी था । जाना ने अब स ६ ७ वय पहल फादर जानमन म यपतिस्मा लिया था और वे उन्हीं क पास रहत थ । उन्हें बनी भागा थी कि ईसाई हान पर उनका क्या किमी गोरी घिट्टी मम म हा जायगा पर ६-मात वर्ष प्रभु ईशामगीह का नाम रत्न और पादरी साहय की मवा करत बीत गए उनकी अभिनाया पूरी नहीं हुई ।

टाम बागीनाथ मम साहब क जूत माप कर रहा था कि जान रामकृष्ण उपर म निरमा । टाम बागीनाथ म कहा— वहाँ कम दाम ?

बाजार जा रहा हू । बहुत मोटा-मुसप गरौन्ना है ।

जर भाई यह मोटा-मुसप सरीदत और जूत माप करत ही क्या हमारी बिनगो बायपा ?”

“तो फिर क्या करें ? अपना निगमा भी ना हमें म्हा जाता कि पादरी साहब का गिरासि म वहाँ मोटरी करें ।”

'अरे नौकरी गई माइ चुस्ते में । तुम यह कहो—ब्याह का क्या डौल है । कोई विनायती छोकरी तो नजर ही नहीं आती । किसी मेम का साहब मरता है और वह बाली होती है सो कोई न कोई साहब झपट्टा मार कर उसे ब्याह ले जाता है । हम देखते ही रह जाते हैं ।

अबो विनायती न सही में तो किसी बंगाली छोकरी से ही ब्याह करने को राखी हूँ । अब विनायती छोकरी की इतजारी क्या बुझावे तक की जाय ।

तो बंगाली छोकरी तो यही है । धूम्रवा नाम भी मखेदार है । गोरी चिट्ठी भी है और तुमस उस दिन हस-हस कर बात भी कर रही थी । मारो हाथ ।

'लेकिन फावर से कैसे कहूँ । शर्म सगली है ।

'तो में कहूँ ?'

'कहो याद, बकर कहा ।

'लेकिन में तो अपने लिए कहूँगा । तुम्हारे लिए क्यों कहूँ ?

'वाह छुन्वरसगाने बमेली कातेस । यह मु ह मीरये होसने ?'

अरे बाहू रे बंदरमु हे ईसूमसीह की कसम अब तू हंसता है

ऐसा सगता है—जैसे घोवर के डेर पर ओसे पड़े हों ।

'ईसूमसीह तुझे गारठ करें । तू जाठ का मोषी है । जा म जानता हो उसे मरे पर बड़ा ।

'मीर तू कहींका नबाब है । तू भी तो डोम है ।

'म तो प्रमु ईसूमसीह की चरण धाकर अंग्रेजों की जाठ म मिस गया हूँ ।

'अंग्रेजों की जाठ में तू कैसे मिस गया ?'

“यह बात तू मोटी बबल का आवमी नहीं समझ सकता । फादर ने हमें समझा दिया है कि हम अपनी कासा त्रिस्तान है । हमारी भीसाह यूरोपियन दोगला होगी और उनकी सन्तान अंग्रेज होगी । बस तीन पीढ़ी में हमारा सामदान अंग्रेज होगा ।

पर पहले अंग्रेज बीबी स दादी भी तो हो ।’

‘हो यह एक जरा-सी बाधा है । पर नडा मत दोस्त आज हम दोनों ही फादर से बात करेंगे ।

‘जकर करेंगे ।

“मगर फादर स ही बात करन स काम नहीं चलेगा । उस छोकरी से भी तो बात करनी होगी । उसका मन टटोलना होगा ।

‘जकर टटोलना होगा । हम दो ह और यह एक । हम दोनों से तो वह ब्याह कर नहीं सकती ?

‘बैसे कर सकती है । तकिन तुम कह रहे थे न—कि यह मुझ देग कर हँस-हँस कर बातें करती है । बन माफ बात है मन उसका मुझी पर पर लट्टू है ।”

‘तो हमसे क्या ? मुझ भी यह एसी नजर स दखती है—कि जँस तीर मार रही हो बस पायल कर देती है ।’

“अब पादरी साहब उसे सबको धरनी बेटी बतात ह । खूठी भी यह मामलिन की ही भाँति है । पगपट अंग्रेजी बोसती है । बपह बना उगार—एक दम विनायती मम जँमे ? मम माहूब नी उसे बराबरी का दर्जा देती ह । दराठ नहीं—मुझे उसना भी जूता माफ करना पड़ता है ।”

‘ता हमसे क्या हज है । जूता तो ब्याह से बाद भी माफ दिया जा सकता है ।’

“लेर, इसमें मैं कोई हर्ज नहीं देखता। लेकिन देखना यह है कि क्या वह हम दोनों में किस से करेगी।

“मुझी से करेगी और दोस्त उस का झूठा साफ करने पर तुझी को मौकरी पर वहाम रबू गा।

‘कहीं मैं झूठा खींच कर न दे मारूँ तेरे मुह पर। साभा, बग्जात डोम। हम से तू अपनी ओरू का झूठा साफ कराएगा ?

‘तो विगड़ता क्यों है यह तो तेरे बाप-दादे का पेशा है।

‘मेरे बाप-दादे तो हिन्दू थे होगा उनका पेशा। मैं तो ईसाई हूँ। हम ख्रिस्तान साहब सोग है। देखता नहीं मेरी पतसून।

पतसून तो मैं भी पहनता हूँ तो तू मुझे डोम क्यों कहता है। मैं भी ख्रिस्तान सोग हूँ।

‘बेघक हम दोनों साहब सोग हैं। सो वह छोकरी आ रही है। हो जायें दो-दो बावें अमी।

अमी सो। पहले मैं ही पूछूँ।

‘पूछ से तूझे वह क्या पसन्द करेगी भसा।

सुमदा ने निकट जाकर विगड़ कर कहा—‘तुम्हें मेम साहब म बाजार भेजा था जॉन लेकिन तुम अमी यहीं गर्पे उड़ा रहे हो ?

‘हम आप की शायी की बात कर रहे थे मिस साब मैं कह रहा था

सुमदा हँस सी। उसने कहा—‘तुम क्या कह रहे थे टाम ?

‘यही कि—कि छत्रन्दर सगाबे अमेली का तम।

सुमदा और स हँस पड़ी। उसने कहा—‘यह अमेली ने तम की खूब रही।’

कही तो कहता हूँ—मिस साब भसा यह मोथी। कहता हूँ छोटे मुँह बड़ी बात।’

“यह भी तो डोम है, डोम, मिस साब, इसका हींसिला तो देखिए ।”

“तो मजबूते क्यों हो । धर तो तुम त्रिदिषयन हो । त्रिदिषयन न डोम है न मोची । इन्सान है जैसे सब होते हैं । तुम साग पढ़-सिख कर साहब भोग हो सकते हो ।

‘म सब कुछ होने को तैयार हूँ, मगर इस मजे को कैसे समझाऊँ ।’

‘तू क्या पढ़ेगा ? बूढ़ा ताता पुरान पढ़ सकता है ।

‘तो तू कहाँ का बर्षीमब है । मुँह में दाँत नपेट में भीत ।

‘इसी स म बूढ़ा हो गया । सात बरजाठ, मे पत्रक पूँ तुमे चठा कर ।

“नही-नही लड़ो मत भम आदमियो । यह सम्मता की बात नहीं है जगसीपन है । याद रखो—तुम भोग सम्म साहब योग हो ।

‘तो मिस माव आप साफ-साफ कह दीजिए । वस भगड़ा टंटा राम ।

क्या कहूँ ?”

‘क्या म हमला आपके जूत माप नहीं करता ?

‘और क्या मे हमला आपके बिस्तर ठीक-ठीक नहीं मगाता ?”

‘तुम दोनों बहुत धर्ये आदमी हो । हम तुम दाना म गुग है जामा टाम, जल्दी बना । आज शाम कुछ महमान दिन पर धाने बाने है । सटपट मोदा म आभो ।

“मकिन मिस माव, यह तो परम की बात हुई ।

“बीज यात्र टाम ?”

“आप हम दोनों म चुग ह । क्या म आपकी मब न गयाहा सिदमत नहीं करता ?”

“और मैं तो बी-बान से आपकी निदमत्त में सगा रहता हूँ ।

‘तो हम भी तुम दोनों से बहुत सख हूँ ।

‘लेकिन ज्यादा खुश किस से हूँ आप ? इसका फैसला अभी कर लीजिए ।

“तुम जूता साफ कर रहे हो—और तुम्हें सौदा खाना है । वस आज तुम दोनों में से जो बल्ही काम बरतम करेगा—उसी से मैं ज्यादा खुश हो जाऊँगी ।”

‘तो अभी लीजिए । यह मैंने सगाया रगड़ा । टाम बल्ही-बल्ही जूते पर दूध रगड़ने सगा ।

और मैं भी खवा । आज लपकता हुआ चसा । धुमदा हसती हुई भीतर चली गई ।



६

जिस दिन टाम काशीनाथ और जान रामकृष्ण अपनी उम्मीदों पर बुधियाँ मना रहे थे । उसी शाम पादरी जॉनसन के बंगले पर एक खानपान दिनर का आयोजन था । दिनर वास्तव में कर्नल मेकडानलड के खानर में दिया गया था । दिनर में मेकडानलड के अतिरिक्त तीन ब्यक्ति और थे । एक थे लक्ष बंगाली राममोहन राम दूसरे थे सर जॉन तीसरे स्वयं फादर जॉनसन और चौथी मिस धुमदा । भोज में अनेक प्रकार की देशी और बिसायली चराब अनेक प्रकार के मांस और फल आदि थे । राममोहन राम कबल फस खाते थे । यह देख धुमदा भी कबल फस खाने लगी । यह देख कर

मेकडानन्द ने कहा— यह क्या मित्र, तुम केवल फल ही ले रही हो ? तो यह सैण्डबिच तो जरा बली बहुत धम्सा बना है ।'

"धर्मवाद बर्तन पर आज मैं बबल फलाहार ही बर्तनी ।

यह किस लिए ?

'आप दान नहीं रहे हैं । यहाँ हमारे परमबन्धु राम साहब उपस्थित हैं और वह बबल फल ही खा रहे हैं ।

मेकडानन्द ने जरा तीली नजर से रामसाहन राय की आंखें देख कर कहा—

'महाशय क्या आप मांस नहीं खाते ?

नहीं कतल मुझ लोह है । मैं मांस नहीं खाता ।

'इसका कारण ?

मांस खाने के लिए जीवहत्या परनी पड़ती है । यह मुझ पसन्द नहीं ।

'और यह बंगाली शास्त्रण तो मांस खाते हैं ।

'केवल शास्त्रण होने के कारण नहीं प्राणियाँ पर दया भाव के कारण मैं मांस नहीं खाता ।"

इस पर पान्थी जानमन हो-हा कर के हँसने लगे । उन्होंने कहा— आप प्राणियाँ पर दया की बात कहते हैं । परन्तु सारे बंगाल में बिल्ली जीवहत्या होती है । पान्थु जानबरा पर बिल्ली निर्दय व्यवहार किया जाता है यह भी आप कहते हैं ?"

'यह भी दगता हूँ और मुरार के राज अपने ससवारों में स्वयं बिल्लीने निरम और नूर है यह भी मैं दगता हूँ । मर यहूत मैं बिल्ली साँपय मांस खाते हैं परन्तु मैं व्यवहारण रूप से माँसाहार को पापबिधु कर्म समझता हूँ ।

“इसी से मैं आप से सहानुभूति रखती हूँ राय महाशय, जन्तु-
में भी आप ही की भाँति एक कुलीन ब्राह्मण की बेटी हूँ ।” शुभदा
ने कहा ।

‘सो तुम अभी तक ब्राह्मण की बेटी हो ? अब तुम मेरी बेटी
बन चुकी हो और शीघ्र ही प्रभु ईशामसीह की शरण में आओगी ।’
पावरी ने कहा ।

परन्तु मेरे संस्कार ब्राह्मण के हैं फादर, प्रभु ईशामसीह की
में भक्त हूँ । परन्तु आपकी शरण में आ कर भी मैं उसी प्रकार
ब्राह्मण हूँ जिस प्रकार बनस अंग्रेज हैं ।

ओह नय तो यहो देखना चाकी रह गया कि यह कुछ अच्छी
बात भी है या नहीं। कर्नल ने तीखी नजर से राममोहन की ओर
देखते हुए कहा ।

राममोहन राय ने कहा—“जहाँ तक संस्कार का प्रश्न है मैं
इस संसार की बहुत अच्छी बात समझता हूँ कर्नल ।

‘क्या ? आप तो सब ही यह कहा करते हैं कि मैं जन्म से
ब्राह्मण भक्त हूँ पर सभी को समान समझता हूँ ’ पावरी ने कहा ।

‘बेचन मेरा अभिप्राय यह है कि मैं आभिजात्य को महत्व नहीं
देता राममोहन ने गम्भीरता से कहा ।

‘ता मिस शुभदा का अभिप्राय शायद आभिजात्य की श्रेष्ठता
से नहीं है ।

‘मैं नहीं फनस तनिक भी नहीं । मैं तो केवल संस्कार ही तक
सीमित हूँ । आभिजात्य की भावना मेरे मन में होती तो मैं आप के
साथ बैठ कर कैसे खा-पी सकती थी ।

तुम बहुत अच्छी लड़की हो मेरी प्यारी शुभदा । लीर, अब
चूँकि कर्नल मुहिम पर बर्मा जा रहे हैं इसलिए उनके मंगम के लिए
एक-एक जाप पीना चाहिए, पावरी ने प्रसंग वचनते हुए कहा ।

अवश्य, परन्तु म कवस पानी ही पीज्जा' राममोहन न कहा ।
और मैं भी", दुमदा ने अपने और राममोहन क गिनासों में
पानी भरते हुए कहा ।

कनक मकडानन्द को यह अरुदा नहीं लगा । वह म्थर्य बैठा
रहा । पादरी जानमन न बात का रग बदमते हुए कहा— 'क्या
बर्मा में हमारी स्थिति बहुत माजुप है कनक ?'

वहूँ हमारी मजा का वहाँ बहुत पठिनाई का सामना करना
पक रहा है । वहाँ की नम आबोहवा और मसरिया का गामना
करना हमारे लिए कठिन पड़ रहा है । हम ११ महान स रगून पर
करजा किए बैठे हैं । परन्तु अब बर्मा में वहाँ हमारी पीड़ एवं प्रकार
में बैठे हो गई है । हम जार्जे मार से पानी ग पिर गए हैं । दूसरे
बर्मा का यगदुर ममारति कुदवा यगाम पर आयमप की तयारी
कर रहा है ।

क्या बर्मा की मटार हमारे लिए बहुत आवश्यक थी ?

आवश्यक नहीं अनियाय थी फार । हम समय ऊपर स ता
हमारा सामन और हवदवा बहुत शानदार दीये रहा है । रामेश्वर
ग गिनी तन सभी मुग्न बन्ना में अग्रजी मजा की धावनिर्वा छार्द
हूँ ३ और मजा मानुम जाता है कि अब कित्ति हुरूमत का हिमाता
आमान नरी है । कत-भी बटी-बटी रियागनें हमारे माय मवसी
दियेगी मदि में र्येवी है । पाव न लीनता म्बीरार कर मी है ।
रात्रूमान क गिर पर हमारा पैर बसा गे गगनित अत्रवर का अनग
प्राप्त बना कर हम पर हपाग मीपा लागत हो रहा है । माट हर्मिम्स
बह भाष्यगामी थ । उन्हें पार लगे-लगे मारपक मिन पा थ त्रिनमें
स प्रवेक मकर सामर हात की साम्यता रगता पा । मौष्ट म्दुमर्दे
एकपिम्पन मदन पासक हान के अतिरिक्त इतिहास मेमक भी है ।

सर चार्ल्स मेटकाफ ने विल्मी की हुकूमत पर गहरा पदचिन्ह छोड़ा है। सर चाम मासकम और सर टामस मनरो जैसे शासकों की सहायता के बिना साईं हेस्टिंस बंगाल और मद्रास की गुल्मी नहीं सुसझा सकते थे। अब बजाहिर दान्ति की थोटी पर हमारा झंडा अबस्य फहरा रहा है परन्तु भीतरी दुस्य नाजुक है।

क्या बहुत नाजुक बर्नम ?

'उसे नाजुक ही कहा जा सकता है फायर भारत में हमारी संस्था अभी भी बहुत कम है। इस कमी को हम अभी तक उस मित्र भावना से पूरा कर सकते थे जिसे हम न्याय बुद्धि और नम-भ्यवहार से प्राप्त करते। वह मित्र भावना हमें आक्रमणा से बचा सकती थी। परन्तु इस समय वह मित्र भावना हमें कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रही है। हमारे घारा आर मोक-झाक बस रही है।

तदुण राममोहन राय थोड़ उत्तेजित हो कर बोले—“निस्सन्देह यह एक महत्वपूर्ण सफ़ाई आप प्रकट कर रहे हे कर्नल। अंग्रजों का अब तक मुठों में जो छोटी छोटी सफलताएँ प्राप्त हुई हैं उन्होंने राजा सागों के हृदय में उनक प्रति दानुता क भाव उत्पन्न कर दिए हैं।”

'यही बात है राम महाशय हमने अपने आस-पास की रियासतों से भ्यर्ष की छेड़छाड़ करके जो विरोध और पड़मन्त्र का बाताबरण पैदा कर लिया है कवल हमारी दक्षित की झाह से उससे आभा भी पैदा न हो पाता। और अब इस बात की झांका के मघप्ट कारण ह कि जब कभी हम किसी ऐसे दानु मे उलझे हागे जिसको बचाने क लिए हमें अपनी अधिकतर मनाए काम में सानी पड़ें ता ये सब रियासतें एक होकर हमारे विरोध में लड़ी हो सकती हैं।

“यह तो आने वाला सुधान का एक मयंकन चित्र तुमने खींच दिया कनम पादरी जानमन म माथे पर बस डालते हुए कहा—

“ईसूमधीह कृपा करें, और भारत अनंत मान तक उसकी छत्रछाया में रहे ।”

बर्नस ने अपने बकनम्य का जारी रखत हुए कहा—‘अब हमें सबसे प्रथम अंगाम की सीमा का सुदृढ़ बनाना है । बर्मा के राजा अमोम्ता के उत्तराधिकारियों में मनीपुर और आसाम पर कब्जा कर लिया था । इस से बर्मा की सीमा अंगाम की सीमा से मिस गई थी । परन्तु हम जैसे आसाम और मनीपुर का दूसरा क हाबा दख सकते हैं । परन्तु वे यही तक सतुष्ट नहीं रहे—वे बटगोंव काका मुसिदावाद और कासिम बाजार का भी हम में माँगम लगे ।”

राममोहन राय ने जरा टकी नजर में बर्नस की ओर दख कर कहा—
“सचिन इगका कारण तो यही प्रतीत होता है कि बर्मा के सब अंगोड़े अंगाम के इन्ही इमाका में जदिक ह । और वे समय-समय पर बर्मा में घग कर छाप मारत ह और आ दियत ह । बर्मा के ये रामु भारत की सीमा में सुरक्षित ह ।

‘ना हम क्या करें ? दरनागता का बस हम रामु के सुपुर्न कर ल । हमें निरुपाय हा बर्मा से युद्ध घापणा कर दनी पड़ी । और अब यहाँ हमारी मना पार मकट में पड़ गई है । उस तत्वास ही सहायता का भाषापकता है ।

“इसी से रामु आप सागा में बरकपुर में बहु मयातक बाण्ड कर कामा , राममोहन राय ने तनिर दद स्वर में कहा ।

‘वह गतकनाक मिपाही-बिद्राह या राम महालय और उस खामा हमारा बकनम्य था ।”

“परन्तु बर्नस, उगे ‘बन्धुभाम’ भी आनामी म कटू से सक्ता है ।

आप कैसे यह कहने की जुरत करते हैं मिस्टर, राय, 'कर्मस मे श्रेय से भास हो कर कहा ।

परन्तु राममोहन ने सहज स्वर में कहा— आप ही कैसे उसे सिपाही विद्रोह कह रहे हैं ?

स्पष्ट है कि सिपाहियों ने अपने अफसरों की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया था ।

“कर्मस, आप अच्छी तरह जानते हैं कि इस रेजीमेंट में ऊँचे दर्जे के हिन्दू थे । अभी तक देश में सुधार की कोई चर्चा ही नहीं है । कुमीन मोय अधिकतर रुढ़िवादी है । अधिकतर कुमीन हिन्दू यह विश्वास करते हैं कि समुद्र यात्रा करने से उनका धर्म छूट जायगा । रंगून जाने के लिए उन्हें जहाज पर चढ़ना पड़ता । जब सिपाहियों को नौकर रखा गया था तब यह बात स्पष्ट नहीं की गई थी कि उन्हें समुद्र यात्रा भी करनी पड़ेगी । इसके अतिरिक्त उनकी भी शिकायतें हैं । उनकी तनसाह बहुत कम है । उन्हें पार से साढ़ छ रुपए माहवार में मुजारा करना पड़ता है । क्या आप समझते हैं कर्मस, कि एक आवामी की आम की कीमत पार रुपए काफी है ? फिर उनकी बर्षी बुमचे बहुत खराब हो गए थे । उन्हें अब एक स्थान से दूसरी जगह जाना पड़ता है उन्हें खज्जर और घोड़ों का दन्वोबस्त लद करना पड़ता है । सेना के अफसर उन्हें कोई मदद नहीं देते ।

मेकिन उन्होंने बर्मा जाने से इन्तई इन्तार कर दिया था । यह भयकर सैनिक अपराध है राम महाशय ।

‘इन्कार उन्होंने नहीं किया । उन्होंने विनीत प्रार्थनापत्र अपने उच्च अफसर की सेवा में भेजा था कि यदि उन्हें बर्मा भेजा ही जा रहा है तो उन्हें अलग भत्ता दिया जाय । जैसे बँसमाड़ी वालों तथा सफरयाना के दूसरे कर्मचारियों को दिया जाता है ।’

“तीस अक्टूबर को जब इस रेजीमेंट को परेड पर आने का हुक्म दिया गया तो वे अपने बगचे साथ नहीं लाये, यह उनका अक्षम्य अपराध था और इसकी रिपोर्ट कमांडर-इन-चीफ़ सर एडवर्ड पैजेट को भेज दी गई। और उनसे आवेश मांगा गया।”

‘वे बगचे किस सा संकत थे। वे बोसीदा हो गए थे। बाहर स जान के योग्य न थे। यह कोई ऐसा गम्भीर आरोप न था। आप धम्की तरह जानते हैं कबल कि उन शरीर सिपाहियों के साथ इतनी सी बात पर क्या मुसूक किया गया।’

‘इसपर जानता हूँ। वह रेजीमेंट मेरी ही थी। और मामस की रिपोर्ट कमांडर-इन-चीफ़ की दी जानी आवश्यक थी। उनके साथ वही मुसूक किया गया जो उचित था।’

“यानी जब वे परेड में आए तो उन्हें दो गोरा रेजीमेंट, एक तोपराने की ओर और गवर्नर बेनरस के अंभरदाक घुड़सभारा की दृष्टि में पर लिया।

वेगक, और उन्हें हुक्म दिया गया कि या तो सीपी तरह वर्मा बल्लो या हथियार रख दो।

और जब उन शरीरों न अपना आनेदनपत्र की बात कही तो एकदम तोपों के मुह खोल दिये गये। उन बेभारे बेगुनाह सिपाहियों पर गोलों की बौछार हान लगी, बहुत स वही मर गए, बहुत से नदी की ओर भाग, उनमें बहुत से डूब कर मर गए। यह उन सोंयो की आपने इनाम दिया जा कवस धार रुपये माहवार पर आप के लिए जान देने की तैयार थे।

‘जी हाँ, और अब यह रेजीमेंट तोड़ दी गई है। और जो लोग बच कर भाग गये हैं उनका कोर्ट मार्शल किया जायगा।’

‘आप कैसे यह कहने की जुरंत करते हैं मिस्टर, राय,’ कर्नेस ने श्रेय से सात हो कर कहा।

परन्तु राममोहन ने सहज स्वर में कहा— आप ही कैसे उसे सिपाही बिद्रोह कह रहे हैं?

‘स्पष्ट है कि सिपाहियों ने अपने अफसरों की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया था।

‘कर्नेस आप बख्शी तरह जानते हैं कि इस रेजीमेंट में ऊँचे दर्जे के हिन्दू थे। अभी तक देश में सुभार की कोई चर्चा ही नहीं है। कुशीन भोग अधिकतर रुढ़िवादी है। अधिकतर कुशीन हिन्दू यह विश्वास करते हैं कि समुद्र यात्रा करन से उनका धर्म भ्रष्ट हो जायगा। रंभून जाने के लिए उन्हें अहाज पर बढ़ना पड़ता। जब सिपाहियों को मौक़र रखा गया था तब यह बात स्पष्ट नहीं की गई थी कि उन्हें समुद्र यात्रा भी करनी पड़गी। इसके अतिरिक्त उनकी भी शिकायतें हैं। उनकी तनखाह बहुत कम है। उन्हें भार से साढ़े छ रुपए माहवार में गुजारा करना पड़ता है। क्या आप समझते हैं कर्नेस कि एक खादमा की जान की कीमत चार रुपए काफी है? फिर उनकी बर्दी बुगबे बहुत ज़राब हो गए थे। उन्हें जब एक स्थान से दूसरी जगह जाना पड़ता है उन्हें खरब और घोड़ा का बन्दोबस्त लद कर दिया है। सेना के अफसर उन्हें कोई मन्द नहीं देते।

‘सेकिन उन्होंने धर्मा जाने से ज़तई इन्कार कर दिया था। यह मयंकर सैनिक अपराध है, राय महाशय।

इन्कार उन्होंने नहीं किया। उन्होंने विनीत प्रार्थनापत्र अपने उच्च अफसर की सेवा में भेजा था कि यदि उन्हें बर्मा भेजा ही जा रहा है तो उन्हें जगन भत्ता दिया जाय। जैसे बैसगाड़ी बानों तथा सफरमेना व दूसरे बर्मा चारियों को दिया जाता है।”

'तीस अक्तूबर को जब इस रेजीमेंट को परेड पर आने का हुक्म दिया गया तो वे अपने बगचे साथ नहीं लायें, यह उनका अक्षम्य अपराध था और इसकी रिपोर्ट वाकायशा कमांडर-इन-चीफ़ सर एडवर्ड पीजेट को भज दी गई । और उनसे आवेष्ट माँगा गया ।'

'वे बगचे कैसे ला सकते थे । वे बोसीदा हो गए थे । बाहर से आने के योग्य न थे । यह कोई ऐसा गम्भीर आरोप न था । आप बच्ची तरह जानते हैं कर्मस कि उन गरीब सिपाहियों के साथ इतनी सी बात पर क्या सुमूक किया गया ।'

'बहर जानता हूँ । वह रेजीमेंट मेरी ही थी । और मामसे की रिपोर्ट कमांडर-इन-चीफ़ का दी जानी आवश्यक थी । उनके साथ वही सुमूक किया गया जो उचित था ।'

'यानी जब वे परेड में आए तो उन्हें दो गोरा रेजीमेंट एक तोपखाने की कोर और गवर्नर जेनरल व अंपरसक घुड़सवारों की टूप में घेर लिया ।

'बेताक, और उन्हें हुक्म दिया गया कि या तो सीधी तरह वमर्षा बनो या हूपियार रण दो ।

और जब उन गरीबों न अपन आवेदनपत्र की बात कही तो एकदम तोपों के मुह खोल दिये गए । उन बेबारे बेगुनाह सिपाहियों पर गोमों की बौछार होने लगी, बहुत से वहीं मर गए, बहुत से नदी की ओर भाग, उनमें बहुत से डूब कर मर गए । यह उन लोगों को आपने इनाम दिया जो बेबम चार रुपये माहवार पर आप व सिए जान देने को तैयार थे ।'

'जो हूँ और अब यह रेजीमेंट तोड़ दी गई है । और जो लोग बच कर भाग गये हैं उनका कोट मार्घस किया जावगा ।

“यानी उन्हें डूँड-डूँड कर फाँसी के तख्ते पर चढ़ा दिया जायगा। कर्नल आप किस तरह इस तरह की कार्यवाही को उचित कह सकते हैं।”

‘राय महाशय आप कदाचित् दायित्व के सम्बन्ध में नहीं सोचते। अब दायित्व का प्रश्न आता है तो छोटे-छोटे व्यक्तिगत प्रश्नों से ऊपर हमें सोचना पड़ता है।’

आप मुझे क्षमा करें कर्नल मैं यह कहना चाहता हूँ कि आपको कुछ और बातें भी सोचनी चाहिए ?

‘कौन-सी और बातें ?’

कि इन बेचारे सिपाहियों के भी कुछ विचार हो सकते हैं और उन्हें चार रुपये माहवार से अधिक तलब माँगने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त उनसे मिल कर उन्हें समझा-बुझा कर सन्त करने की भी आवश्यकता थी। पर अफसोस है सर पीबेट ने ऐसा नहीं किया। वे शायद यह समझते हैं कि अंग्रेज हुकूमत करने के लिए और हिन्दुस्तानी हुकूम मानने के लिए पैदा हुए हैं।

“एक हव तक यह बात सच भी है मिस्टर राय।

अफसोस है कि आप ऐसा समझते हैं। आपको याद रखना चाहिए, कि आपने इन्हीं हिन्दुस्तानी सिपाहियों की बदौलत हिन्दुस्तान को जीता है। राजत कम होने पर उन्होंने मौड़ पीकर दिन काटे और मात अंग्रेज सिपाहियों को दिया। आप जानते हैं कि हिन्दुस्तानी सिपाही शराब नहीं पीते उनसे काम लेना बहुत आसान है। इतने कम बेतन पर आपको कहीं भी ऐसे अच्छे सिपाही नहीं मिल सकते।”

‘लेकिन उन्होंने बिद्रोह किया था।’

आपका ऐसा कहना सरासर बग्याय है। क्योंकि मुझे याद हुआ है कि उनको बल करमे के बाद जब उनकी संझकें देयी गई, तो वे क्षामी थीं। उनका बिद्रोह करने का बतई इरादा न था।”

“हम उन्हें तनखाह देते हैं। हमारे प्रति नमकहसास होता उनका कर्तव्य है। फिर, सेना में डिपिप्सिन का मूल्य बहुत है।”

“बार रुपया माहवार कोई तनखाह नहीं है कर्नस। और नमक-हलाली की बात महज हिमाकठ है। एक दिन वे यह बात समझ लेंगे और तब शायद आप उन्हें इस तरह आसानी से गो लर्यों और गोलों से न भून सकेंगे।

राममोहन राम बहुत उत्तेजित हो गए थे। उनका इस वक्तव्य से कर्नस मेकडानलड क्रोध से भास हो गया। वह एकदम उठ साड़ा हुआ। उसने कहा— आप मेरा अपमान कर रहे हैं। मिस्टर राय आप माफी माँगिए।

“मैंने एक सच बात कही है कर्नस और अब मैं जाता हूँ।”

वे उठ कर चस दिए। पादरी न कनस का हाथ पकड़ कर कहा— ‘बैठो बैठो बात तो उसने सच ही कही है।

आप भी ऐसा ही समझते हैं फावर ?”

“कर्नस क्या तुमने अभी कुछ देर पूर्व नहीं कहा था—कि उस तरह की सख्तियाँ किस कदर सत्तरताफ गठीनें ना सकती हैं। क्या इस तरह हिन्दुस्तान के एक-एक आदमी के दिल में अपने लिए घृणा के भाव पैदा करना हमारे लिए अच्छा होगा ?”

कर्नस बैठ कर खुद मुसयाने लगा। इसी बीच शुभदा खुदबाप वहाँ से उठ कर चसी गई। उसका मुँह भरे हुए वादमा के समान गम्भीर हो रहा था।

शुभदा जो इस प्रकार उठ कर बसी गई तो कर्नेस मकडानलक स्थिर नहीं रह सका । वह उठ कर उसके पीछे-पीछे पसा गया । दूसरे कमरे में जाकर उसने कोमल स्वर में कहा—

‘क्या तुम्हें बुरा लगा शुभदा !’

‘बुरा क्यों न लगेगा मसा । क्या तुम्हारी बातचीत से यह प्रकट नहीं होता कि तुम हम भारतीयों को तुम्हें समझते हो और घृणा करते हो ।’

‘तुम जानती हो शुभदा मैं तुम्हें प्यार करता हूँ ।’

अजीब बात है तुम प्यार की बातें करते हो । कहीं घृणा और प्यार भी एक साथ हो सकता है ?

किन्तु शुभदा भारतीय कितने पठित होते हैं । इसका एक जीता-जागता उदाहरण तो वह मयामक व्यवहार है, जो उन्होंने तुम जैसी स्त्री के साथ किया । क्या तुम्हारे साथ कुछ कम अत्याचार हुआ ?

अत्याचार ही क्या जातीय श्रेष्ठता का मापबण्ड है । अंग्रेज यूरोप में और यहाँ भी—क्या कम अत्याचार करते हैं । भारतीय तो रुढ़ि के बंधन में बंधे हैं । परन्तु आप सोच तो नहीं दुनिया के आदमी हैं । आप तो अपने स्वार्थों के लिए क्रूर अत्याचार करते हैं जो रुढ़िवादियों की अपेक्षा कहीं अधिक खराब है । क्या मैं नहीं देखती कि अंग्रेज कितने निर्मम, क्रूर और स्वार्थी हैं ।

“परन्तु हम जातीयता के नाम पर जूझ मरने वाले आदमी हैं शुभदा ।

‘बस, तो यही समझ लो कि हिन्दू जाति के दोष और गुण मुझे ज्ञात हैं। दोष उसमें ऊपर से मादे हुए हैं और गुण उसके परम्परा के संस्कारों से हैं।’

‘परन्तु वह तर्क बंगाली ता सीधा वार करता है।’

‘इसलिए कि वह सच्चा है। उसे अपनी आतीयहीनता का ज्ञान है और उसे वह सहन नहीं कर सकता। वह उन दोषों को दूर करने पर तुला हुआ है।’

‘ओह तुम तो उसकी ज़रूरत से ज्यादा शारीफ कर रही हो।’

‘मैं समझती हूँ कि उसकी पूरी योग्यता मुझ पर प्रकट नहीं है। उसकी बातें मैंने सुनी हैं, वह एक अवतारी पुरुष है।’

‘सैर, मैं देखता हूँ कि तुम त्रिदिशयन सोह्यत में रहने और अंग्रेजी की उच्च शिक्षा पाने पर भी अन्ततः हिन्दू ही हो।’

‘हिन्दू ही क्यों, हिन्दुस्तानी भी हूँ। और यह बात मैंने बितनी अब अंग्रेजों के संसर्ग में आकर सीखी है, उतनी हिन्दू संस्कारों में नहीं सीखी।’

तब तो तुम्हें अंग्रेजों का कृतज्ञ होना चाहिए ?

‘कृतज्ञ तो मैं हूँ ही, खास कर तुम्हारे प्रति। तुमने एक वीर पुरुष की भाँति मेरे जीवन की रक्षा ही नहीं की—मेरे जीवन को आसोक से भर दिया। अब मैं अपने जीवन को मली-भाँति देख और समझ सकती हूँ।’

‘लेकिन तुम तो मूर्खी से नाराज हो।’

‘और किससे नाराज होऊँ मला ? तुम्हारा कोई दोष मैं सहन नहीं कर सकती। तुम मुझ प्यार करने की बात कहते हो—प्यार मैं भी तुम्हें करती हूँ। पायब तुम से अधिक। लेकिन इतना अवयव

है कि तुम्हें मैं वैसा ही देव पुरुष वेसना चाहती हूँ—ऐसा तुम मेरी प्राण रक्षा के समय थे।”

“परन्तु शुभदा कुछ कर्तव्य के भार सिर पर धा पाते हैं।

‘क्या वे ऐसे भी हो सकते हैं जो मनुष्य को नीचे गिरा देते हैं?’

‘यह तो मैं नहीं कह सकता।’

‘तो तुम्हें सोचना होगा—ऐसा कोई काम कर्तव्य हो ही नहीं सकता जो मनुष्य की आत्मा की पुकार से परे हो।’

“मसमन नौकरी, नौकरी में तो स्वामी की आज्ञापासन ही कर्तव्य हो पाता है।”

‘यह कर्तव्यपासन की तुम्हारी अंग्रेजी व्याख्या में नहीं स्वीकार करती। मैं तो उसी काम को कर्तव्य समझती हूँ—जो न्यायोचित और मानबोचित हो।’

‘ओह शुभदा तुम सेना में भरती होने योग्य नहीं हो।’

‘ईश्वर का धर्मवाद है कि मैं उसकी उम्मीदवार नहीं हूँ।’

‘खैर, तो तुम चाहती हो कि मैं बर्मा न जाऊँ?’

‘जरूर जाओ। जाना तुम्हारा कर्तव्य है, और वहाँ जाकर न्यायोचित और मानबोचित काम करना भी तुम्हारा कर्तव्य है।’

‘खैर मैं तुम्हें धर्मवाद बता हूँ शुभदा देवी। तुम्हारी बातें मैंने बरोहर के रूप में अपने हृदय में धारण कर ली हैं किन्तु अब मैं तुमसे कुछ निवेदन करूँ?’

“कहो।”

मैं चाहता हूँ कि बर्मा प्रष्ट पर जाने से पहले ही हमारा विवाह हो जाय और वहाँ से सौटने पर आगामी वसन्त में हम लोग इगर्सेप्स चलें।”

“मैं इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहती, तुम जैसा ठीक समझो करो। मैंने तो अपने आपको तुम्हें समर्पित कर दिया है। अब और मैं क्या कहूँ ?”

‘तुम्हारी यह बात कितनी प्यारी है शुभवा मैं कैसे कहूँ। किसी अश्रेय रमणी को मुँह से मैं ऐसे शब्द नहीं सुन सकता।’

“तुम्हें शायद ये शब्द नये और अनोखे से प्रतीत होंगे। पर वह तो हमारा—हम हिन्दू स्त्रियों का कुशाचार है। त्रिदिशयन संसार में पसने पर भी मैं यह नहीं त्याग सकती। हम भारतीय घरों में कर्तव्य-पथ पर भ्रुपभाप घमती रहती हूँ कभी चकती नहीं। अधि कारों की सजाई हमें सिसाई जाती ही नहीं जैसा कि मैं यूरोपियन स्त्रियों में देखती हूँ।’

“मैं समझता हूँ इससे स्त्री पुरुष के अधिक निकट आती है।’

‘निकट क्या? उनमें अमिश्रता उत्पन्न हो जाती है और वे दोनों एक हो जाते हैं। किन्तु तभी—जब पुरुष भी स्त्री के प्रति केवल कर्तव्य का ही पामन कर—अधिकारों का गर्व और स्वत्व त्याग दे।’

‘ओह, मेरी प्यारी शुभवा तुमने ये सब बातें कहाँ सीखी हैं?’

“सीखी नहीं हैं, ये बातें हमारा रक्त में धुनी-मिसी हूँ। हमारा स्वभाव बन गई हैं।’

“तो मैं तुम से सीखूँगा, और जोदियत करूँगा—कि तुम्हारा योग्य पति बनूँ।”

‘सँद, अभी तो तुम योग्य कर्नस एक सेना का योग्य अफसर अपने को प्रमाणित करो। कर्तव्य को ठीक समझो, और उसी की राह पर चलो।’

‘मैं तुम्हें सिकायत का मौका न दूँगा शुभदा । तो यह तय रहा कि इसी सप्ताह में हमारा ब्याह हो ।

‘जैसा तुम ठीक समझो ।

‘तो मैं फादर से यह बात कह दूँ ?

‘कह दो ।’

‘तुम मुझ से और कुछ कहना चाहती हो ?’

‘हाँ तुम अपनी तन्दुदस्ती का ध्यान रखना ।’

‘और धुम मुझे हर दूसरे दिन पत्र लिखना ।’

‘मैं लिखूँगी ।

मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करूँगा ।

बर्नस मेकडानल्ड ने शुभदा का हाथ अपने हाथों में लेकर बसाया और कहा— ‘बिवा मेरी प्यारी शुभदा ।’

‘बिवा तुम्हारी यात्रा शुभ हो ।

वह भीतर भसी गई । बर्नस बाहर जा पावरी में आवश्यक बातें करने लगा ।

★

८

सर हाइड्र ईस्ट उन दिनों कसकते की सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस थे । बड़े सहृदय और उदार व्यक्ति थे । भारत के प्रति इन्होंने सहानुभूति थी । राममोहन राय के वे अनन्य मित्र थे । इस समय अंग्रेज सरकार ने राममोहन राय को राजा की उपाधि दी थी । उसी के उपसहय में उन्होंने एक छोटे से प्रीतिभोज का आयोजन अपने घर पर किया था । उसमें कसकते के कुछ सम्ग्राम्ठ पुरुषों को आमन्त्रित

किया गया था। आमन्त्रित व्यक्तियों में एक डेविड हेमर भी थे। वे कम्पनियों में धकियों का व्यापार करते थे और राममोहन राय के घनिष्ठ मित्र थे। तीसरे थे पण्डित दिबप्रसाद शर्मा, जो राममोहन राय के पत्र साह्योसमाज मैगज़ीन के सम्पादक थे। चौथे थे, राजा द्वारिकानाथ ठाकुर। पाँचवें थे प्रसन्नकुमार ठाकुर। छठे थे दबन्द्रकुमार ठाकुर। ये सब राममोहन राय के समर्थक साथी और सहायक थे। इनके अतिरिक्त कुछ और भी बनीमानी नमकते के प्रतिष्ठित पुरुष थे। समारोह में राममोहन राय की उनके सुधार सम्बन्धी कार्यों की मूरि भूरि प्रशंसा की गई। और उन्हें राजा होने के उपलक्ष्य में बधाइयाँ दी गई। इसके बाद कुछ आवश्यक बातें प्रारम्भ हुईं। राजा राममोहनराय ने सबको धन्यवाद देते हुए कहा— आप सब यदि सचमुच ही मेरे प्रति इतना प्रेम और सम्मान भाव रखते हैं, जो इस समय आपने प्रकट किया है, तो मैं प्रस्ताव करता हूँ कि आप नमकते में एक "हिन्दू महाविद्यालय" की स्थापना करें, जिसमें हिन्दू युवकों को आधुनिक शिक्षा दी जाय। हमारे देश में शिक्षा प्रसार की व्यवस्था पहले ही से है। देश भर में फारसी के मदरसे खुले हुए हैं। बनीमानी सोग घरों में मौसवी रख कर दण्डों को फारसी पढ़ाते हैं। फिर देश में संस्कृत टोस और पाठशाखाएँ भी हैं। परन्तु देश में प्रायः ऐसा प्रचलन है कि इन प्राथमिक पाठशाखाओं में पढ़ कर युवक व्यावहारिक कामों में लग जाते हैं। कुछ उच्च विद्यालय भी हैं जिनमें न्याय, वेदान्त, आयुर्वेद, साहित्य और दर्शन पढ़ाये जाते हैं। परन्तु भारत की यह शिक्षा प्रणाली जीर्णोद्दीप्त गठानुगतिक और निष्प्राण है। जो पुरानी बातें गिरी हुई हैं, उन्हें लोग पढ़ाते जा रहे हैं। नई बातें सोचने व्यवहार नए ज्ञान को संगठित करने की ओर किसी का ध्यान नहीं है। कम्पनी राज्य की जनता को शिक्षित करने का दायित्व उठाना नहीं

न जनता ही इस विषय में जागरूक है। फिर भी अंग्रेजों के भारत में आशाने से अंग्रेजी भाषा का विकास हुआ है। और इस काम में सहायक कम्पनी के कर्मचारी हैं, या ईसाई धर्म प्रचारक। कम्पनी के कर्मचारी तो भारतीयों को इस लिए अंग्रेजी सिखाना चाहते हैं, कि उनके काम में आसानी हो। और ईसाई धर्म प्रचारक इसलिए कि अंग्रेजी पढ़े-सिखे व्यक्ति को आसानी से ब्रिटेन बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भारतीय अमीर यह समझते हैं कि अंग्रेजी पढ़े सिख बाबुओं का अंग्रेज अधिक सम्मान करते हैं।

इस पर प्रसन्नकुमार ठाकुर ने कहा— परन्तु कम्पनी का शासन इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देना नहीं चाहता। इसका कारण मैं तो यह समझता हूँ कि अंग्रेज भारत में अपने राज्य की जड़ बनाना चाहते हैं, अपने देश की सम्मति फैलाना नहीं।

‘आप ठीक कहते हैं ठाकुर महोदय वे अभी तक यह समझ रहे हैं कि हिन्दू और मुसलमान प्रजा पर राज्य उन्हीं के कानूनों के अनुसार चलाया जाना चाहिए।’ राजा राममोहन राय ने अपना बक्तव्य जारी रखते हुए कहा— सबसे पहला कदम कम्पनी सरकार ने शिक्षा के सम्बन्ध में बारेन हर्स्टिम्स के समय में उठाया, जब कि मौलवी मजीठहीन की नियुक्ति में कसकते में एक मद रखा सोसा गया था। इसमें चालीस मुस्लिम छात्र धार्मिक शिक्षा पाते थे। यह सन् १७८९ की बात है। इसके इस वरत बाद बनारस के रेजिडेन्ट जानपम डेकन के अनुरोध से मार्टिन कार्लबालिस ने बनारस में हिन्दुओं के लिए भी एक संस्कृत कालेज की स्थापना की थी। परन्तु भारतीयों को अंग्रेजी शिक्षा देने की सलाह पहले-पहल सर चार्ल्स प्रान्ट ने बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स को दी थी। परन्तु उस समय इस पर विचार नहीं किया गया। इधर सिरामपुर मिशन के धर्म प्रचारक अंग्रेजी शिक्षा के पक्ष में रहे हैं।”

इस पर राजा द्वारिकानाथ ठाकुर ने कहा—“इसका तो हाथों हाथ उन्हें साम मिस रहा है महामेधावी यणितज्ञ रामचन्द्र खिस्तान हो गए, सुप्रसिद्ध कवियित्री वासुदेव खिस्तान हो गईं । उनके पिता मोविन्दचन्द्र दत्त भी खिस्तान हो गए थे, बंगाल में अंग्रेजी के जो प्रथम विद्वान् कहे जाते हैं वे साहचन्द्र बनर्जी भी खिस्तान हो गए, माइकेस मधुसूदन के खिस्तान होने की बात तो प्रसिद्ध ही है ।

प्रसन्नकुमार ठाकुर ने कहा “सिरामपुर के मिशनरी लोम धपना मौखिक उपदेश ता देते ही हैं, लिखित साहित्य भी हिन्दुओं में बखेर रहे हैं । इसी से वे चाहते हैं कि सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार हो इसी से उन्होंने मिशनरी स्कूल लोमसे हैं, क्योंकि कम्पनी राज्य में धर्म-बिद्वान पर सीधा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता पर स्कूलों में उन्हें बीसियों प्रकार से प्रभावित किया जा सकता है । इसी से सिरामपुर की मिशनरियों ने केवल छापाखाना ही नहीं लोम है बालक का कारखाना भी लोम है, और उन्होंने वाइलिस का अनुवाद भारत की छात्रों भाषाओं में प्रकाशित किया है । इन अनुवादों का उपयोग तभी हो सकता है जब देशी भाषाओं के स्कूल खुलें और छात्र डंग की पुस्तकें तैयार की जाएँ ।

‘बेदाक, तो मैं यह कह रहा था कि कसकस के मबरसे और बनारस के संस्कृत कासज के बाद बहुत दिन तक कम्पनी सरकार ने कोई कदम शिक्षा के सम्बन्ध में नहीं उठाया । सन् १८०१ में फोर्ट बिनियम कासज की स्थापना अवश्य हुई पर वह कम्पनी कर्मण् अफसरों को दशभाषा मिसाने के लिए । इस प्रकार आम प्रजा की शिक्षा केवल मिशनरियों ही के हाथ में अभी तक बनी है, अब मिशनरियों ने कसकस में बिसेप कासेज लोम है । इसका भी उद्देश्य मिशनरियों का प्रसार करना है । आश्चर्यकृत इस बात की है कि जनता में अंग्रेजी शिक्षा

का विस्तार हो, और उसके साथ ही साथ उन्हें हिन्दी, फारसी तथा दूसरे आवश्यक विषय भूगोल, गणित, इतिहास आदि पढ़ाए जाएँ। इस लिए धर्म निरपेक्ष शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की जाय। जोर है कि कम्पनी सरकार इस मामले में उदासीन है। परन्तु हम उदासीन रहना नहीं चाहते। हम अगसा कदम स्वयं उठाना चाहते हैं। मैं प्रस्ताव करता हूँ कि कलकत्ते में एक हिन्दू महाविद्यालय की स्थापना की जाय।

देबेन्द्रनाथ ने कहा— 'इस शुभ काम के लिए मैं दस हजार रुपए समर्पित करता हूँ। प्रसन्नकुमार ठाकुर ने कहा— 'दस हजार रुपए मैं भी देता हूँ।' राजा द्वारिकानाथ ठाकुर ने कहा— 'दस हजार रुपए मैं देता हूँ।' रामाकान्ठ देव ने कहा— "दस हजार रुपए मैं भी देने को तैयार हूँ परन्तु मैं राय महाशय का सहयोग नहीं कर सकता।"

देबेन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा— 'राय महाशय के बिना आपकी क्या आपत्ति है?'

'आपत्ति बहुत है। वे मुसलमानों और अंग्रेजों के साथ खान पान करते हैं। वे नैष्टिक ब्राह्मण हैं। परन्तु उन्होंने ब्राह्मण समाज की स्थापना कर सब मीथ-ऊँच को एक कर दिया है। वे हिन्दू समाज को घट कर रहे हैं। मूर्तिपूजा के विरोधी हैं।

इस पर डेबिड हेयर ने कहा— 'महाशय यह तो बड़ी विचित्र बात है। राय महाशय यदि अंग्रेजों तथा मुसलमानों के साथ खान पान करते हैं और उन्होंने जो ब्राह्मण समाज की स्थापना की है इससे तो उनकी उदारता ही प्रकट है। क्या आप जब भी बंगाल में पुरानी रुढ़ि को प्रचलित करना पसन्द करते हैं?'

“मैं तो यही चाहता हूँ कि जो हिन्दू महाविद्यालय खोला जाय उसमें ब्राह्मो समाज की शिक्षा नहीं, हिन्दू सिद्धान्तों की ही शिक्षा देना। तभी मैं और मेरे दूसरे मित्र इसमें सम्मिलित हैं नहीं तो नहीं।

राजा राममोहन राय ने दान्त स्वर में कहा— ‘इस विद्यालय की स्थापना का उद्देश्य हिन्दू तरुणों के हृदयों में नए ज्ञान का दीप जलाना है। अतः उसमें सभी उदारचेता महानुभावों को सम्मिलित होना आवश्यक है। मेरे मित्र राजाकान्त देव को इस शुभ कार्य में जो देने में बेबल यही आपत्ति है कि मैं उसमें न रहूँ तो मैं सहर्ष अपना आपको इससे पृथक् कर सता हूँ। आप सब लोग मिसकर यह शुभ कर्म करें। इस कार्य में दस हजार रुपए मैं भी आपको अर्पित कर रहा हूँ। ये पचास हजार रुपए जो आपने इस समय एकत्र किए हैं, आप इस शुभ कार्य को आरम्भ करने को मयेष्ट हैं। आपको यह भी ज्ञा हो कि सन् १८१६ में कम्पनी सरकार ने एक लाख रुपया, प्रति वसिष्ठाक काम में व्यर्थ करना तय किया था परन्तु इस अनुदान की रकम कलकत्ता बुक सोसाइटी और कलकत्ता स्कम सोसाइटी को दे दी जा रही है। सरकार ने एक कालक कलकत्ते में और एक दिल्ली में स्थापित किया है। जहाँ भारत की तीन भाषाएँ संस्कृत, अंग्रेजी और फारसी पढ़ाई जाती है पर मेरी यह दुःख धारणा है कि जब तक अंग्रेजी शिक्षा इन बन्दों में नहीं दी जायगी—बुद्धि लाभ नहीं होगा। मैं एक पत्र साई राम हर्मस्टेड को भी लिखा था—कि ईंग्लैण्ड के में नहीं चाहते कि भारत में ज्ञान का प्रचार बढ़े। अन्यथा वे अंग्रेजी ब्रह्मसे भारतीय भाषाओं का पृथपोपन क्यों करते। परन्तु मैं निश्चिन्त रूप से कह सकता हूँ कि भारत की भलाई इसी में है कि उन्हें विज्ञान, शिक्षा, इतिहास, राजनीति और पाश्चात्य शास्त्रों की शिक्षा अंग्रेजी भाषा के साथ ही दी जाय।”

सर हाइड ईस्ट अब तक चुपचाप बैठे सबके बक्तव्य सुन रहे थे जब उन्होंने उठ कर कहा—“सज्जनो, इस समय आपने जिस अनुष्ठान का सूत्रपाठ किया है उसके लिए मैं आपका अभिनन्दन करता हूँ। परन्तु मेरा सबसे अधिक अभिन्नन्दन राजा राममोहन राय के लिए है, जिन्होंने श्री राधाकान्त देव और उनके समर्थकों विरोध से दूरदक्षिणापूर्वक अपना नाम उस काम से वापस ले लिया था उनका अपना था। राजा राममोहन राय अरबी और फारस के प्रौढ़ विद्वान् हैं तथा अंग्रेजी के भी पण्डित हैं। परन्तु उनका सारी अष्टता उस समय से सम्बन्धित है जो उनमें भारत की जनता की मलाई और उन्नति के सम्बन्ध में है। श्री राधाकान्त देव मुझमा करें यदि मैं यह कहूँ कि वे इस समय भारत के एक वैदिकमान्य मजहब हैं तथा भारतीयों और अंग्रेजों के बीच मित्रता के सूत्र गूँथने वाले एकमात्र पुरुष हैं। शिक्षा के सम्बन्ध में मैं इतना आपको बताना चाहता हूँ—कि इसका जो प्रयास इस समय बंगाल में हो रहा है, उतना भारत के दूसरे प्रांतों में नहीं। मद्रास में टूटी-फूटी अंग्रेजी का ज्ञान बहुत से लोगों को स्वयं आप ही आप हो गया है क्योंकि वहाँ अंग्रेजी जितने ही भारतवासियों के बीच स्वामीय बोली के रूप में चलने लगी है। बम्बई में अरबी फारसी और संस्कृत का स्थान दृढ़ नहीं है। उधर के लोग बेदा-माया के पक्ष में हैं तथा वेदा-मायाओं की शिक्षा के क्रम में अंग्रेजी आप से आप ही आ गई है। प्राच्य और पारश्चात्य का झगड़ा वास्तव में कसकते ही में उठ खड़ा हुआ है। मेरे आदर्शिय बन्धु राजा राममोहन राय सुगठित रूप में अंग्रेजी के प्रचार के लिए व्यग्र हैं, जब कि बंगाल में अभी बहुत प्राच्यवादी हैं। मैं तो समझता हूँ कि अब यह विषय के क्षेत्र में प्राच्यवासियों और अंग्रेजी के समर्थकों का एक बड़ा आरम्भ हो रहा है। परन्तु सार्ज बिनियम बॉटिक प्रथम

ही यह घोषणा कर चुके हैं कि भारत में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होगा। यह सब ही महत्त्व की घोषणा है और इसका प्रभाव भारत की सभी पीढ़ी पर असाधारण पड़ेगा। आप जानते हैं कि भारत के प्रत्येक जिले में स्कूल खुलते जा रहे हैं और आशा करता हूँ कि शीघ्र ही अंग्रेजी शिक्षा सहसा इसनी मोक्षप्रिय हो उठेगी, कि सरकार को सरकारी तथा वीर-सरकारी स्कूली कितायों का प्रवर्धन करना कठिन हो जायगा। एक दृष्टि में मैं यह कहना चाहता हूँ कि यह ज्ञान की अपूर्व प्राप्ति का समय है। अब आपने जो इस समय यह कार्य आरम्भ किया है मैं चाहता हूँ कि इसका भार आप हमारे उत्साही मित्र श्री डेविड हेपर के सुपुंरं कीजिए। मैं आशा करता हूँ वे तन-मन से इस काम में लय जायेंगे।”

डेविड हेपर ने कहा— मैं तैयार हूँ।”

श्री हर्ष-श्वनि के बीच उन्हें शिक्षामय का अभिष्ठाता चुन लिया गया और यह ऐतिहासिक मोड़ी समाप्त हुई।

★

६

रावामोहन मजूमदार गाँव छोड़ कलकत्ते में आ बसे। अपनी लव जमींदारी बेच कर उन्होंने कलकत्ते में एक आशुयान मकान बनवाया और जूट का कारोबार शुरू किया। यह काम अमी-अमी रंगाम में आरम्भ हुआ था, और केवल कुछ अंग्रेज बम्पनियाँ ही यह पन्था करती थीं। उन्होंने उनसे अपने सम्पर्क स्थापित किए, और उनके सहयोग से थोड़े ही समय में उनका व्यवसाय बमक उठा— और उन्हें काफी आय होने लगी। तीन साल तक वे एक बम्बर से

अज्ञात रूप में रहे । अपनी सारी शक्ति उन्होंने अपने कारोबार में केन्द्रित कर दी । यों तो वे बड़े मिसनरार थे—परन्तु इस समय उन्होंने मिलना-जुसना या किसी सामाजिक कार्य में जाना-जाना कतई छोड़ दिया था । वे जाति-बहिष्कृत कर दिए गए थे—अकारण केवल पासबड के कारण । उनका एकमात्र पुत्र अकाल ही में काल-कवलित हुआ था । उनकी वासिका पुत्रवधू का सती होत-हात चिता से हरण कर लिया गया था । इन सब बातों से उनके मस्तिष्क पर गहरा आघात पहुँचा था । वे अपनी जाति के सीपस्थानीय थे । उनकी उदारता और सज्जमता अलौकिक थी । कभी किसी का उन्होंने कोई अनिष्ट नहीं किया था । फिर भी न जाने किस पाप की वदीसत उन्हें यह विडम्बना सहन करनी पड़ी थी । परन्तु वे एक मेधावी और हिम्मत वाले व्यक्ति थे । उन्होंने अपनी सारी ही शतना व्यापार में सगा दी । और देखते-देखते ही वे एक प्रतिष्ठित व्यापारी बन गए ।

कमकसे में राजा राममोहन राय ने ब्राह्मो समाज की स्थापना की थी । इस समय राजा राममोहन राय फारसी में धार्मिक लेख लिखा करते थे तथा फारसी में एक अखबार 'मिरातुस-अखबार' निकालते थे । राममोहन बड़े चाब से उन अखबारों और अखबारों को पढ़ा करते थे । वे ब्राह्मो समाज में प्रविष्ट होने का दृढ़ निश्चय कर चुके थे । इसी समय राजा राममोहन राय ने 'वंगभूत' बंगाली में तथा 'बंभान हेरस्ट' अंग्रेजी में निकाला था । राममोहन इन पत्रों को भी पढ़ते थे । एक दिन वे ब्राह्मो समाज के अधिवेशन में जा कर चुपचाप बैठ गए । उन्होंने देखा—दो तेसगु ब्राह्मण पर्व में बैठे हुए बरपाठ कर रहे हैं । पर्व वे बाहर लिया हुआ था—यहाँ ब्राह्मण का निषेध है । वेर पाठ की समाप्ति पर उत्सवानन्द ने उपनिषद् पाठ किया और फिर

रामचन्द्र विद्यावागीश ने उसका बगला में अर्ध समझाया । इसके बाद राजा राममोहन राय का उपदेश फारसी भाषा में हुआ । समा की समाप्ति पर प्रार्थना-गान हुआ ।

सब लोग उठ गए—केवल राजा राममोहन राय—बैठे रह गए । वे मूक, मौन समाधिस्थ-से बैठे रहे । राममोहन भी बैठे रहे । जब राजा साहब ने आँसों लोलीं—तो राममोहन ने उठ कर प्रणाम किया और अपना नाम बठा कर कहा—‘आप को समय हो—तो मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूँ ।

‘अबश्य, आइए-बैठिए ।

मुझे यह कहने की आप आज्ञा दीजिए कि आप उस महासेतु के समान हैं, जिस पर चढ़ कर भारतवर्ष अपने अघाह मतीठ से अज्ञात मविष्य में प्रवेश कर रहा है ।’

‘यह तो अधिक से भी अधिक है । मैं तो केवल यही जानता हूँ कि अन्धविश्वास और बिज्ञान के बीच जो बूरी है प्राचीन जाति प्रथा और नवीन मानवता के बीच में जो खाई है, बहुबेबान और पुढ ईश्वरवाद के बीच जो भेद है उन सबको दूर कर भारत को प्राचीन से नवीन की ओर ल जाने का प्रयत्न कर रहा हूँ । परन्तु आप कृपा कर अपना थोड़ा और भी परिश्रम दीजिए ।

राममोहन ने अपनी सारी कुर्माग्यपूरा करण बया कह सुनाई । फिर कहा—‘मैं तीन साल स कलकत्ता में हूँ । य तीनों साल मने सब कुछ भूस कर जमीन्दार स ब्यापारी बनने में व्यतीत किए हूँ । इस प्रयास में मैंने अपनी मम-बन्ना और आरम-स्तानि को भी छिपा लिया है । मैं जब गाँव स चला था तमी मन सहीो समाज में प्रविष्ट होने का सकल्प कर लिया था, परन्तु तब मन में बिबशता थी, और

अब मैं मन से समान में प्रविष्ट होना चाहता हूँ। गत छह माह से मैं सस्वग में आता रहा हूँ, पर आप से मित्रा नहीं।

‘मैंने आपको बहुत देखा। परन्तु अपनी ओर से टोकना ठीक नहीं समझता। अब आपसे मिस कर तथा आपकी बातें सुनकर मैं प्रभावित हुआ हूँ। वास्तव में रुढ़िवाद और जाति परम्परा के दोषों का मुक्त भोगी आपसे बढ़कर और कौन हो सकता है।’

राजा राममोहन राय का कण्ठ भर आया और बाणी अवरुद्ध हो गई। राधामोहन भी न बोल सके। राजा राममोहन रायने कहा—
‘क्या आपको मामूम है कि आपकी पुत्र-बधू अब कहाँ है?’

‘नहीं मैं नहीं जानता। जानने की चेष्टा भी मैंने नहीं की।

‘क्या अब भी जानना नहीं चाहते?’

‘चाहता हूँ।’

‘किसलिए?’ यदि वह आपको मिस जाय तो क्या आप उसे ग्रहण करेंगे?’

‘क्यों नहीं। मेरे पुत्र नहीं है। मैं तो उसी को अपनी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बनाऊँगा।

‘और यदि वह विधर्मिणी हो गई हो। उसने उस अंग्रेज से विवाह कर लिया हो जिसने उसका उधार किया था। तब?’

‘तो भी मैं उसे अपनी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बनाऊँगा किन्तु क्या आप उसके सम्बन्ध में कुछ जानते हैं?’

‘जानता हूँ।’

‘आपने उसे देखा है?’

‘देखा है।’

‘क्या उसने विवाह किया है?’

“सभी नहीं। किन्तु शीघ्र ही एक मध्येक से उसका विवाह होगा।”

“बाई हर्ष नहीं। क्या आप मुझ उसे दिखा सकेंगे ?”

‘मैं उससे पूछूंगा। यदि उसने स्वीकार किया तो आपको से चलेगा।’

‘क्या आप भी ईसाई-धर्म को अच्छा समझते हैं ?’

“सभी धर्मों के समान ईसाई-धर्म में भी पौराणिक बातें हैं। रुढ़ियों धमत्कारों और अन्धविश्वासों का ढेर है परन्तु इस समय जो सैनिक भोग उसे भारत में से आए हैं वे अन्धविश्वासी नहीं हैं न वे रुढ़ियों के दास हैं। इसके अतिरिक्त ईसाई-धर्म हिन्दू-धर्म की अपेक्षा कई गुना वसवान् प्रतीत होता है।

क्या आप यह पसन्द करते हैं कि भारतीय जनता क्रिश्चियन धर्म को ग्रहण करे।”

“बेदापि नहीं। मैं तो उसका डट कर सामना करना चाहता हूँ। मेरी धारणा है कि उसका सामना करने के लिए आवश्यक है कि भारत यूरोपकी वैज्ञानिकता को ग्रहण करे और इस वैज्ञानिकता के साथ अपने धर्म का भी सत्कार के सामने रखे।’

“इसी से वैज्ञानिकता का बेदान्त और उपनिषद् से काँचन-मणि संयोग करने में सया हूँ। आशीर्वाद दीजिए कि मैं सफल होऊँ।’

“आशीर्वाद देता हूँ यथा महोदय, आप सफल हों और मैं आपकी शरण भी जाता हूँ।”

‘बड़ी ही शुभ वार्ता है मजूमदार महाशय। मैंने हिन्दू-धर्म, इस्लाम और ईसाइयत तीनों धर्मों का अध्ययन किया है। हिन्दुत्व की पवित्रता इस्लाम की सच्चि और बिस्वास तथा ईसाइयत की सफाई मझे पसन्द है। ईसाई-धर्म में मैंने कुछ प्राप्त नहीं किया है परन्तु ईसाई देशों के सामाजिक जीवन राजनीतिक संगठन और विज्ञान

से मैं प्रभावित हूँ । धर्म से बेबस यही प्रमाणित होता है कि सारी मनुष्य जाति एक परिवार है । अनेक जातियाँ और राष्ट्र उसकी शाखाएँ हैं ।'

'मुझे विश्वास है कि आपका यह विश्वास भारतीय उत्थान का एक अंग बन जाएगा ।

"ऐसा ही मैं समझता हूँ क्योंकि भारत के प्राचीनतम सत्यों का यूरोपीय गरीब सिद्धांतों के साथ सामञ्जस्य बिठाए बिना भारत का कल्याण नहीं है ।

मैं देखता हूँ कि यूरोप के सम्पर्क से भारत में नई मानवता का जन्म हो रहा है । जैसे ही हिन्दू धर्म भी नया रूप धारण कर रहा है । ब्रह्मसमाज हिन्दू-धर्म का अमिनब रूप है । हमारा उद्देश्य सभी धर्मों के लोगों के बीच एकता समीपता तथा सत्भाव को जन्म देना है ।

आप ठीक कहते हैं । भारत से सती प्रथा को उठाने के लिए भी अब क्रियात्मक कदम उठाया जाना चाहिए ।'

"मैंने लार्ड क्रिस्चियन वॉटिक की सरकार का इस सम्बन्ध में समर्थन किया था । और वही ही बठिनाई से सोग सती प्रथा की रोक-बाम का कानून बनवा सके । अब इस कानून के अनुसार सती होने में सहायक होना क़रार के धरावर रूपरथ ठहराया गया है ।

'परन्तु कट्टर हिन्दू तो अभी तक इस काम को धम पर आपात ही समझते हैं । मुना है उन्होंने प्रीबी कौन्सिल में इस कानून के विरुद्ध अपील की है ।

'बह भी पारित हो गई । और अब देश में कानून लागू हो जाएगा ।'

“बड़ी प्रसन्नता की बात है परन्तु केवल सती प्रथा बन्द होना ही तो मयेष्ट नहीं है। जब तक वाम-विवाह बन्द नहीं हो जाते, हमारे बरों की दुर्दशा दूर नहीं होगी। वाम विधवाओं से हमारे घर भर जाएँगे। इसलिये पुनर्विवाह और वासिग विवाह की व्यवस्था भी कानूनमूलक होना चाहिये।

इसमें अभी समय सगेगा मजूमदार महाशय।

“तो तब तक के लिए मरा यह अनुदान क्वूम कीजिए। मे पचास हजार रुपये वाम विधवाओं की शिक्षा-दीक्षा तथा उनकी सुख्यवस्था के लिए देता हूँ।”

‘भाप का यह कार्य धनाढनीय है। मैं धन्यवादपूर्वक आपका यह अनुदान स्वीकार करता हूँ। इस रकम से कलकत्ते में एक विधवा सहायक संस्था की स्थापना होगी। अभी-अभी हमने इतनी ही रकम शिक्षा प्रसार के लिए एकत्र की है।’

‘मुझ सन्तोष बहुत है, परन्तु भाप से कुछ कहना चाहता हूँ। कहिये।

“यदि मरी पुत्रवधू मेरे साथ रहना स्वीकार करे—तो मैं उसे पुत्र की भाँति रखूँगा।”

बात यह है कि वह त्रिदिकपन समिति में पाँच वर्ष से रह रही है। जन्हीं के संस्कारों में शिक्षा पा रही है। अब वह एक समझदार मुर्शिदाबात महिमा है। इसलिये उसका विवाह होना ही ज्यादा ठीक है।”

‘भाप कोई उदार सत्पात्र बूढ़े कीजिए, उसीसे उसका मैं विवाह कर दूँगा।

“प्रथम तो अभी हमारा शहरो समाज भी इतना अप्रसर नहीं है। दूसरे वह मंत्रेय तर्कण से ब्याह करना चाहती है।”

राधामोहन कुछ देर तक मौन रहे । फिर बोले "तब यही सही । हम विश्व की सभी जातियों में एकता स्थापित कर रहे हैं । मैं अपनी सब सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी उसे ही बनाऊँगा । वह चाहे जिस धर्म में रहे—चाहे जिससे ब्याह करे ।"

'सैर, तो आप उससे एक बार मिलना चाहते हैं ?'

'अवश्य ।'

"तो मैं आपको ने धनू या । परन्तु पहले मुझे उससे पूछना होगा ।

"क्या वह यहीं बसकता में है ?'

'है, यहीं है ।

कहाँ ?

पाषरी जानसम के घर में ।

'तो मेरी वीक्षा कब होगी ।

आगामी इतबार को ।'

अभ्यबाद राम महाशय ने अपने को इस नए जीवन के सर्वथा उपयोगी प्रमाणित करूँगा ।

आपकी कामना सफल हो । यही कामना करता हूँ ।"

✽

१०

सन् १८४१ की वसन्त ऋतु में एक अषेइ उम्र का अंग्रेज कहीं से आ कर नैनीताल के पहाड़ों में बसकर काटने लगा । उम्र इसकी पचास के पार होगी । कद लम्बा शरीर पतला कमर किसी कबर मुकी हुई चेहरे पर भूरे रंग की छोटी-सी दाढ़ी नाक नोकदार और

झाँझें नीली थीं जिनमें एक विशेष प्रकार की चमक थी। यह आदमी नीसे रंग का एक डीसा-डामा सवाबा पहने रहता था, और एक ठोका मोकदार कनटोप सिर पर रखता था। उसके पैरों में भारी जूते थे तथा हाथ में एक लम्बी पहाड़ी लकड़ी रखता था। उसके कन्धे पर एक बड़ा-सा झामा सटका रहता था। जिस में वह बहुत-सी जड़ी-बूटियाँ और दवाइयाँ रखता था। जड़ी-बूटियों का उस धीक था। बड़ बड़वा पहाड़ों में जड़ी-बूटियाँ की तलाश में चक्कर काटता, कभी-कभी कोई बूटी उखाड़ कर चलाता। कभी वह एकान्त में किसी पहाड़ी झरने के निकट किसी पेड़ के तने से झसना सगा कर बैठ जाता और एक मोटी-सी मोट बूक में धष्टा तक कुछ लिखता रहता। कभी वह किसी रम्यस्थली में समय बखवार वृक्षा की छाया में पैर पसार कर बैठ जाता और घण्टों चुपचाप बैठा रहता।

वह टूटी-फूटी हिन्दी बोझ सेता था। पर वह बहुत कम बोझता था। कभी किसी से कुछ माँगता न था। राह-बाट चमत बटाहियाँ से वह कभी-कभी जड़ी-बूटियों की चर्चा करता। पहाड़ी इसाके के सोय यदि उस से किसी नई बूटी की चर्चा करतें तो वह उसे अपनी मोट बूक में लिख सेता था। कभी उस की मौज होती तो नैनीताल की तीस के किनारे घण्टों तक बैठता रहता। देर तक उस गहरे निर्मल, स्वच्छ सरोवर के नीसे जल को देखता—कुछ होठों ही में बुदबुदाता और मन होता तो मछली का चिकार करता था। प्रतिदिन प्रातः-काल वह किसी बस्ती में पहुँच जाता, कभी नैनीताल की बस्ती में, कभी किसी दूसरे पहाड़ी गाँव में। वहाँ पहुँच कर कहता—‘बाबा सोय, में डाक्टर हूँ। रोग का इलाज करता हूँ। तुम्हारे घर-गाँव में कोई बीमार है तो बसो में देखूँगा, दवा दूँगा। मैं तुदा के नाम पर दवा देता हूँ और तुदा से बीमार के चये होने की दुमा माँगता हूँ—

रूपया-वैसा मैं किसी से नहीं भेता ।” गाँव देहात के लोग उससे परचने लगे । उसने कुछ रोगियों को चंगा भी किया, इससे लोग उसकी आवभगत करने लगे । उसकी अटपटी भाषा विचित्र साधुओं-का सा वेद विनम्र वाणी साधु स्वभाव, परोपकार ब्रुति तथा निर्लोभ व्यवहार से सीधे-सादे पहाड़ के निवासी आवास-बुद्ध प्रभावित होने लगे । उसका आदर-सत्कार करने लगे । बहुत लोग उसे रूपया-वैसा देना चाहते बहुत लोग उसे खाना देना चाहते—पर वह कभी किसी से कुछ नहीं भेता । हँस कर कौमस भाव से अस्वीकार कर देता । बहुधा वह ईश्वर और उसके पुत्र की बातें करता । उसकी बातें सुनने को लोग पास आ बैठते तो वह अपने श्रोता से वाइबिल मिकास कर सबको दिखा कर कहता—यह ईश्वरीय पुस्तक है । इसमें ईश्वर का बचन है इसमें ईश्वर ने सबकी भलाई की बातें लिखी हैं । सुनो तुम्हारा भी इस से मला होगा । फिर वह पुस्तक वाँच कर सुनाता । उसका भावार्थ समझाता सब लोग शान्ति और धैर्य से सुनते प्रसन्न होते थे । उसकी वबाइयाँ और जड़ी-बूटियों पर सब का विश्वास बढ़ता गया । अब लोग बीमार होने पर उसे हूँड़ कर बुलाते और इलाज कराते ।

दोपहर बाद वह फिर जगम में सौट जाता । या तो जड़ी-बूटी की आज में भटकता या फिर कहीं बुझ की छाया में बैठ कर माट युक्त में कुछ लिखता । या नैनीताल के मरोबर क किनारे बैठ कर घुपघाप जम की सहरों को देखता रहता ।

प्रत्येक रविवार को वह बच्चों को बताते बाँटता या कभी इस बस्ती में कभी उस में । वह उस दिन अपनी छोसी में बहुत-से लाई के बताते लरीदकर भर सेता फिर बच्चों को बाँटता । बच्चे उससे परच गए थे । वे उसे घेर, बताते सते—छाते और उसे नाना विधि

तंग करते थे। बच्चों के तंग करने पर वह खीझता न था। खुश होता था। उनके साथ वह स्वयं भी बच्चा बन जाता था। कभी वह उनके साथ नाचने लगता, कभी गाना सुनाता। गाने की एक किताब उसके पास थी। उसी के वह गीत गाता—बच्चे भी उसके साथ मम मिमा कर गाने बोलते और खुश होते थे।

दूर-दूर तक उसकी चर्चा पहाड़ में होने लगी। उसने अपना नाम किसी को नहीं बताया। पर इस इलाके में वह 'गोरा सन्त' के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

इस समय जो स्थान बुकहिम के नाम से नैनीताल के ऊपरी अंचल में थाइना पीक नामक प्रसिद्ध पर्वत श्रृंग की तलहटी में प्रसिद्ध है, और वहाँ अब सरकारी उच्च अधिकारियों के बगने और सेक्रेटरिएट की मध्य और आधीशान इमारतें खड़ी हैं, वहाँ उन दिनों गहन वन था। उधर ऊपर के पार्वत्य प्रदेसों को जान बाने यात्रियों के अतिरिक्त बहुत कम लोग जाते थे। हिम जन्तु भी वहाँ रहते थे। नैनीताल की बस्ती शरीर के इसी पार थी—वह भी बहुत विरल। परन्तु इस गोरे सन्त ने अपना निवास उसी ऊपरी वनघी के अंचल में चुना था। उसने अपने हाथों पत्थर के डोकों से एक छोटी-सी कुटी बनाई थी। कुटी के सामने उसने धीरे-धीरे बहुत-सी धरती साफ कर के उसमें कुछ फल-फूल लगाए थे। अपनी कुर्सत का बहुत-सा समय वह अपने इसी खेत में व्यतीत करता था। फल-फूल के अतिरिक्त उसने बहुत-सी जड़ी-बूटियाँ भी बोई थीं। धीरे-धीरे लोग उसकी कुटी पर भी जाने लगे। वे उससे दवा-बाह लेते, समाह-मयाबिरा करते मुस-दुःख की बातें करते और वह सबको उनकी भलाई की बातें बताता। उसने कुछ बकरियाँ भी पाली थीं। वह अपने हाथ से उनका दूध दुहता। दूध के बच्चों को लाड़-प्यार करता,

प्रेम से उन्हें बराता । धीरे-धीरे उसने अपनी कुटिया का और विस्तार कर लिया । उसमें अब मच्छे-सासे हो-तीन कमरे बन गए । यहाँ कभी-कभी वह राहगीर अतिथियों को ठहराता उन्हें बकरी का दूध पिनाता या भावम आटा ईंधन देता । वे उसकी कुटी में बिमाम पाते आहार पाते और सन्त का गुण-गान करते अपनी राह जाते । कभी-कभी वह किसी आगन्तुक से गंभीर बाणी से कहता—देखो यहाँ घर है, बकरी है खेत है मैं हूँ—पर औरत नहीं है । औरत के बिना आदमी की जिंदगी अबूरी है । गोरे सन्त की इस बात को सुन कर कुछ लोग हँसते कुछ कहते—बाबा एक औरत से तुम ब्याह कर लो । यह सुन कर सन्त भी हँस कर कहता—मैं बूढ़ा हूँ—परदेसी हूँ, सन्त हूँ—मुझ से कौन औरत ब्याह करेगी । इस गोरे सन्त ने कभी किसी वस्तु की किसी से याचना नहीं की थी । पर उसकी यह स्त्री की याचना या अभाव की अभिव्यक्ति प्रभावशाली थी । धीरे-धीरे गोरे सन्त की यह बात भी उस मञ्चल में प्रसिद्ध हो चली । गोरा सन्त किसी स्त्री से ब्याह करना चाहता है । इस चर्चा के साथ स्त्रियों में उसके प्रति उत्सुकता भी बढ़ चली । अब वह अब किसी बस्ती में जाता, तो स्त्रियाँ उसे खास भाव से देखती हँसतीं इसारेबाजी करतीं । परन्तु सन्त की दृष्टि निर्दोष थी हृदय शुद्ध था । वह निस्सन्देह एक जीवन-संगिनी की कामना करता था । परन्तु सम्पट न था । इस कामना से उसके साधु धरित्र में कोई अन्तर न आया । फिर भी अब कोई-कोई उसके समवयस्क अथेड व्यक्ति उससे स्त्री की चर्चा करने लगते । कहते—धावा कोचिश करा तो पहाड़ में तुम्हें कोई लड़की मिलनी कौन मुश्किल है । परन्तु गोरा सन्त यह सुन कर भी हँस देता था । इस प्रसंग में बातचीत को प्रोत्साहन नहीं देता था । ऐसे ही इस विदेसी सत्पुरुष के दिन बीत रहे थे । और अब उसे हिमाचल प्रदेश में रहते तीन बरस बीत चुके थे । *

इन्हीं दिनों दो साहूकार नैनीताल में रहते थे। दोनों सगे भाई थे। उनके नाम थे—अण्डूघाह और मण्डूघाह। परन्तु पिता के मरने के बाद दोनों अलग-अलग रहने लगे थे। धन-सम्पत्ति सब का बँटबारा हो चुका था। दोनों के घर पास-पास थे। घर पक्के और बहुत विशाल थे। अण्डूघाह बड़ा भाई था और मण्डूघाह छोटा। इनके पिता अण्डूघाह बड़े भारी नामी-नामसी साहूकार थे। दश-दोघान्तरों में इनकी हुण्डी बसती थी। नेपास तिब्बत भूटान और चीन तक इनके कारोबार फैले थे—इन पहाड़ी प्रदेशों से कस्तूरी केसर, जामों कीमती पत्थर अहरमोहरा और नमदे पट्टू सास गर्दों और कम्बस हजारों की सख्या में इनके यहाँ आते और नीचे मैदान के सब शहरों में भेजे जाते थे। मैदानी भाग सूती कपड़ा नमक सोना चाँदी के जेवर, दबाइयाँ और दूसरी चीजन यापन की कीमती वस्तुएँ ये ऊपर पहाड़ी प्रदेशों में भेजते थे। अनेक शहरों में उनकी कोठियाँ थीं गुमास्ते थे आड़तें थीं। अण्डूघाह का लाक्षा का कारोबार था। पर अब समय बदल चुका था। मुम्ब में कम्पनी वहापुर का अमल फँस चुका था। और यह इसका कुमायू द्विजीवन बन गया था—जहाँ एक कम्पनर का हुकम सब पर चलता था। कम्पनी वहापुर ने ये इसाके नेपास से छीन लिए थे और अब नेपास, तिब्बत भूटान और चीन तक का अवाय व्यापार यहाँ निरन्तर रुक और विग्रह होने रहने के कारण छिन्न-भिन्न और अस्त-व्यस्त हो चला था। इन पहाड़ी प्रदेशों का सांस्कृतिक सम्बन्ध नैनीताल से लगभग टूट चुका था। इसी बीच अण्डूघाह की मृत्यु हो गई। और दोनों भाइयों ने आपस में बँटबारा करके अलग-अलग रहना और अपना अपना कारोबार करना आरम्भ कर दिया था। परन्तु अब यह

पुरानी दानो-शौक़ और घूमघाम न थी। जहाँ चन्द्रसाह के द्वार पर हाथी घोड़े शय्याएँ डीढ़ी नोकर, गुमादतें मुनीमों का ठठ लगा रहता था वहाँ अब ये सब बातें उल्टा हो चुकी थीं। फिर भी चन्द्रसाह बड़ा भाई किसी कदर शरीफ, मिलनसार बुद्धिमान और कारोवारी आठमी या परस्तु चन्द्रसाह आबारागदं पुषचरिब फजूमसर्ब सराबी और जुआरी हो गया था। देखते ही देखते, पिता के मरने के बाद चार सास भी न बीतने पाए कि उसने अपने हिस्से का सब धन फूँक डाला रियासत आयदाद बेचनी और रेहन रखनी आरम्भ कर दी। धीरे धीरे उसका वास-वास कर्ज से विभ्र गया और उसका कारोबार भीपट हो गया। पूँजी चूक गई, साख उठ गई, मेकनामी जाती रही। मुन्धों, गुण्डों जुआरियों की सोहवत में वह या तो फिरगियों की शराब पीता या चन्द्र के बम भगाता या इधर-उधर दूसरा की बहू-बेटियों पर हाथ डालता। कितनी ही बार उसकी पिटाई हुई, बड़बुदती हुई, पर उस इसकी परबाह न थी। बड़ भाई स भी उसने सड़ाई कर डाली। नौबत यहाँ तक पहुँची कि दोनों भें बोलबाल भी बन्द हो गई और वह हर बात में भाई की काट करन लगा। दूसरे, उसे मुकदमेबाजी का चस्का लगा। असाधियों पर जास बना कर झूठे-सच्चे मुकदमे उसने बढ़े कर लिए, और भाए दिन वह अवासत-बचहरिया की धूल फँकता फिरने लगा। दुर्भाग्य से उसकी स्त्री भी बसी ही सडाहू और लटपटी थी। भाए दिन दोनों में कलह होती रहती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि उसके दोनों सड़के आबारागदं और बेबहे हो गए। अमी के छोटे ही थे कि घर से चीज-बस्तु चुरा ले जाते। न म्बूस जात न पड़ते-मिलते।

चन्द्रसाह की स्त्री का नाम गोमती था। वह पति ही के समान साधु-स्वभाव हँसमुखी और भसी थी। वह अति सुन्दर स्त्री थी।

धर्मभीरु भी बहू बहुत थी । कभी किसी ने उसे कभी बात कहते नहीं सुना था । इस समय इसके विवाह को सात बरस बीत चुके थे—पर भगवान ने उसकी गोद नहीं भरी थी । इसके लिए न जाने कितनी मानताएँ देवताओं की की गईं । कितनी दवा-दारू, जादू-टोने किए गए, तब भगवान् की इया हुई—और अब इतने दिन बाद एक पुत्र सं उसने घर का सूनापन दूर हुआ । पुत्र-जन्म की बहुत-बहुत खुशियाँ मनाई गईं । दान-पुण्य किए गए । नैमी दही के मन्दिर में चाँदी का छत्र बढ़ाया गया, दावतें हुईं गाना-बजाना हुआ । वाकफ बहुत सुन्दर और स्वस्थ था—देख कर माता-पिता अघाते नहीं थे । परन्तु यह देख मण्डूसाह और उसकी स्त्री जममून कर रास हा रहे थे और कोई ऐसा काम करन से नहीं चूकने थे जिससे कि बड़े भाई का अनिष्ट हो ।

मण्डूसाह ने बहुत बार भाई को मनाने और मेल करने की चेष्टा की—परन्तु इसका कोई परिणाम न निकला । उसका शोध बढ़ता ही गया और इस प्रकार यह साहूकार का बराना चौपट होता गया ।

★

१२

१२ वीं शताब्दी के आरम्भ होत ही साहित्य से धर्म का संवृद्धित बाह्य रूप और रीति-रिवाज का रूप पुनः हो गया था और साहित्य का प्रत्येक अंग स्वभाव रूप में विकसित होने लगा था । इसका प्रभाव प्रत्यक्ष ही जीवन के आदर्शों पर पड़ा था और उसमें क्रांतिकारी परिवर्तन हा रहे थे । साहित्य सामाजिक जीवन के अधिनाधिक निबट होता जाता था । जीवन के आदर्श बरस रहे थे, अमात परमोक की

आकांक्षा पर जीवन विसर्जन करने के विचार अब सेबी से दूर होते जा रहे थे ।

ऐसी ही अवस्था में साहित्य की बाणी में नातिकारी परिवर्तन हुए । हिन्दी से उर्दू पृथक हुई और अंग्रेजी आ सम्मिश्रित हुई ।

जब मुगल बादशाह शाहजहाँ ने दिल्ली को नए सिरे से आबाद कर के शाहजहाँनाबाद नाम दिया और लाल क़िला बनाकर उसमें रहने लगे—तो लाल क़िले का नाम 'उर्दू-ए-मुबत्ता' कह कर पुकारा जाने लगा । उन दिनों सरकार या छावनी को उर्दू कहा करते थे । उस नाम में दिल्ली कोई स्थायी शहर न था मुगलों की छावनी ही थी । बादशाह की जब कहीं रणयात्रा होती थी तो सारी दिल्ली ही उनके साथ जाती थी । जिनमें अधिकांश सैनिक और बाकी घोड़ी तेसी लम्बीसी मोची कहार, मछुए, घसेरे इसाई बजाज और उनके बाल-बच्चे आदि भी उनके साथ रहते थे । इसीलिए जब दिल्ली की शहरपमाह बन गई, तो दिल्ली एक सुरक्षित सैनिक छावनी का रूप धारण कर गया । तब दिल्ली को भी उर्दू बाजार पुकारा जाने लगा । अकबर के जमाने से ही पश्चिमोत्तर सीमा पार के प्रदेशों से सब जातियाँ और मस्कों के लोग मुगलों की क़ौज रसानी और क़त्रवामी सुन-सुम कर आते और वहीं बस जाते रहे थे । इन सब की पृथक-पृथक बोली थी । वे यहाँ भारतीयों के साथ इनकूठे रहते सौदा-मुआफ़ करते घासपीठ करते । इससे सबकी बोली मिस्रजुस कर इस उर्दू बाजार की एक पृथक बानी हो गई, जो उर्दू कहाई । वही लाल क़िले में परिष्कार पा कर धीरे-धीरे फ़ारसी से भिन्न कर परिष्कृत साहित्य की भाषा बनती चली गई । अब यह शाहजादगाने तैमूरिया की मुख्य भाषा बन गई थी और उसमें काव्य अर्था फारसी ही की भाँति होने लगी थी तथा उसका रूप हिन्दी से

पूयक होता जाता था । इसकी भाषा की कविता को 'रेस्ता' कहते थे । इसी से मिर्जा शासिव अपन बीवान को 'रेस्ता का बीवान' कहते थे । इससे पूर्व कबीर, नानक तुलसी सूर आदि प्रमुख कवि अपनी रचनाओं में बहुत से अरबी-फारसी-शब्द प्रयोग में से आते रहे थे । प्रेममार्गी सूफी कविया ने तो फारसी-अरबी शब्द ही नहीं ब्यंजनाएँ भी बिचसी मिश्रित रखी थीं ।

समसुसवनी अम्सा दक्षिण औरंगाबाद के निवासी थे वे अहमदाबाद के मौलाना बबीहूदीन अमली के मुरीद थे । पहले वे दक्षिणी हिन्दी और फारसी में कविता रचते थे बाद में वे दिस्ली आए । उन दिनों बाबसाह मुहम्मदशाह दिस्ली के तख्त पर थे । दिन्सी में उनका परिचय फारसी के सूफी कवि साह सादुस्ना से हुआ । उनके कहने से वे सरल हिन्दी को छोड़ फारसी शब्द मिश्रित कविता कहने लगे । यह वह समय था जब दिस्ली में फारसी का ह्रास हो चला था और फारसी मिश्रित 'उर्दू-ए-मुअस्ना' किले की जवान हो चुकी थी । जो वास्तव में बादशाहों और दरबारियों की हिन्दी जवान थी, और भारतवर्ष में चिरकाल तक रहने के बाद तुर्की और फारसी के मिश्रण से बनी थी । दिस्ली के साह सादुस्ना गुनचन को फारसी का यह ह्रास बहुत खल रहा था । इसी सं उम्हाने बसी से कहा—
'इहम मजामीन फारसी कि बकार उफतादह मंद हर रेस्त वकार ववर । अज तू केतूमुहासिब स्वाहिद मिरफ्त ।

साहे हाठिम को बसी ने अपना उस्ताद बनाया और उम्हाने तत्कामीन 'शाही जवान' में जो 'उर्दू-ए-मुअस्ना' कहाती थी, पकड़ कर उसमें से हिन्दी भावना और शब्दों को दूर कर उर्दू का एक स्वतंत्र परिष्कृत रूप स्थापित किया । जिससे रेस्ता खैबर कर उर्दू बन गई । इसके बाद उर्दू में काट-छाँट 'इसलाह जवान'

की पद्धति प्रचलित हुई। यह पद्धति जारी करने वाले सखनऊ के नासिख थे। बाद में इसनाही खान ही उद्गू बन गई जिसकी फसाहत का एक उदाहरण मीर साहब ने जी विस्ती के प्रसिद्ध उद्गू कवि में।

एक बार ये सखनऊ गए। गाड़ी का पूरा किराया पास न था बिबदा हो दूसरा एक आदमी भाड़े में शरीक कर लिया। जब सऊर आरम्भ हुआ और उस आदमी ने बातचीत करना आहा तो मीर साहब उसकी ओर से मुह फेर कर बैठ गए। परन्तु उसने कहा— 'अभी कुछ बातचीत कीजिए कि रास्ता मझे में कटे। मीर साहब नाराज हो कर बोले— क्रियमा आपने किराया दिया है, तो वेदाक गाड़ी में बैठिए, मगर बातों से क्या तास्तुइ ?

उसने कहा— 'हजरत क्या मुजायका है, राह का दुष्ट है। बातों में जी रहसता है।

मीर साहब बियाड़ कर बोले— आप का दुष्ट है मगर मेरी खबाम सराय होती है।

यह उन दिनों उद्गू के प्रारम्भिक महारथियों की मनोवृत्ति थी। उन्हें न तो किसी ऐसे साहित्य के निर्माण का ध्यान था जिसमें मनुष्य का कल्याण हो बिचारों की धाराएँ उन्नत हों, या किसी प्रकार से भी मोबहित हो। वे तो केवल धार्मिक मस्नयुद्ध करते थे। भापा से खिलवाड़ करत थे। भापा को खिलौना बनाते थे और उनके निठल्ले दागिद निकम्मे नबाब और रईसजादे उनकी बात-मात में बाहवाही करते थे। यद्यपि मुसलमानों की भांति बहुत-से हिन्दू भी उद्गू के बिद्वान कवि थे परन्तु उद्गू में तब एक भारतीय पक्षपात भी घुस पला था। एक बार जब उद्गू कोय के निर्माण की बात खली तो मौमाना हाखी ने कहा— 'कोय सिलनेबासे बाई शरीफ मुसलमान हों क्योंकि गुव देहली में भी फसीह उद्गू सिर्फ मुसलमानों की खबाम

समझी जाती है। हिन्दुआ की सामाजिक स्थिति उर्दू-ए-मुअस्ता को उनकी मादरी जबान नहीं होने देती।”

फोर्ट विलियम कासेज के प्रतिष्ठाता और प्रिंसिपल डाक्टर गिल फ्राइस्ट फारसी और हिन्दी के अच्छे ज्ञाता थे। फोर्ट विलियम कासेज की स्थापना का उद्देश्य अंग्रेजों को हिन्दुस्तानी भाषा का ज्ञान प्राप्त कराना था। वे बराबर कहा करते थे कि हमें कितानी मजलिसी या दरबारी उर्दू की जरूरत नहीं है। ठेक हिन्दुस्तानी सब्जी बोभी यहाँ तक कि हिन्दी रेस्ता में कितानें मिली जायें। डा० गिल फ्राइस्ट के सम्मुख भाषा का एक सामान्य ढाँचा था जिसका रूप एक था, केवल लिपि का अन्तर था। उसे ही वे सच्ची देश भाषा मानते थे। परन्तु अब उर्दू हिन्दी से पुष्क हो चुकी थी। और वह देश भाषा न थी, केवल बड़े-बड़े मुसलमानों की दरबारों और मगरों में पढ़ी जाने वाली दौकिया भाषा थी। डा० गिल फ्राइस्ट ने कड़ी चेतावनी दी थी कि बोसजाम की भाषा में लिखो। उनकी सतर्कता के कारण फोर्ट विलियम कासेज नासिख के स्कूल का भसाड़ा न बन पाया। परन्तु अवासत-कचहरियों में उर्दू ही को स्वीकार किया गया। इसका सवसाधारण पर व्यापक प्रभाव पड़ा और वह धीरे-धीरे सर्वसाधारण की पुष्क भाषा बन गई।

मुसलमान वादशाह सदैव पुष्क-पूनक एक हिन्दीनबीस और एक फारसीनबीस रक्ता करते थे और उनकी आज्ञाएँ दोनों भाषाओं में मिली जाती थी। उसी प्रथा पर कम्पनी की सरकार न यद्यपि मुबिधा के विचार से उर्दू को अवासती भाषा बना लिया था, पर पदिबमोत्तर प्रददा में जहाँ हिन्दी बोसजाम की भाषा थी। नागरी अक्षरों में हिन्दी अनुवाद भी उर्दू ज्ञानूनी पुस्तका का साथ देती थी परन्तु मुसलमान हिन्दी को अवासतों से निकसवा चुके थे, उसी भाँति

उन्होंने यह भी घेष्टा की कि हिन्दी को शिक्षाक्रम में भी स्थान न मिले । इसलिये अब सरकारी वर्नाक्यूलर स्कूलों की स्थापना की योजना बनी तो कम्पनी की सरकार ने चाहा कि सब विद्यार्थियों के लिए हिन्दी पढ़ना अनिवार्य बना दिया जाय पर मुख्यमानों ने उसका घोर विरोध किया । इन विरोधियों के नेता सर सैयद अहमद थे, जो हिन्दी को गैवारू बोली कहा करते थे परन्तु इसी समय राजा शिवप्रसाद शिखरे हिन्दू हिन्दी की रक्षा के लिए उठ सके हुए । वे अंग्रेज सरकार के उतने ही ह्वापात्र थे जितने कि सर सैयद । इन दोनों का हिन्दी-उर्दू का झगडा बरसों तक चलता रहा ।

फारसी बहुत उर्दू अदासती भाषा इसलिये बनाई गई थी, कि मुगल परम्परा ने दाताश्रियों से शब्द बिन्यास और परिभाषा की जो परम्परा बसी जाती थी उर्दू उसके निकट थी उसकी सिपि भी वही थी । इस तरह उर्दू को एक कामबसाठ अदासती भाषा मान लिया गया था परन्तु वह धीरे-धीरे साहित्यिक भाषा बनती गई और मुस्लिम सलतको ने फिर हिन्दी लिखना छोड़ कर उर्दू में ही साहित्य लिखना आरम्भ कर दिया । जीबिका और प्रतिष्ठा के त्यास से हिन्दू मद्रजन भी अपन शब्दों को उर्दू ही लिखाने-पढ़ाने लगे । उर्दू पढ़े-लिखे हो शिक्षित माने जाने लगे । हिन्दी से गई पीढ़ी के युवकों का सगाव कम हो गया ।

जब हिन्दी की पुत्री उर्दू हिन्दी से पृथक हो रही थी तभी मुद्र समुद्र पार वेप की अंग्रेजी भाषा एक सम्पन्न गई दुसहित की भाँति अपनी सम्पूर्ण बिभूति को लेकर हमारे मास-मन्दिर में आई । इस भाषा के साथ साहित्यिक समुद्री बिजयों के अम्मन्त एक राष्ट्र एक भाषा, एक वेणीयता से सम्बन्ध एक दृढ़ निश्चयी, दृढ़ बियालीस, उद्योगी दुर्धर्य और वेपावी भाति का इतिहास और संस्कृति थी ।

उसे हमारे मन मानस में प्रतिष्ठित करने में उसी सांस्कृतिक जाति के अधिपतियों का हाथ था। इस भाषा के साथ विमत पाँच सौ वर्षों के सर्वोच्च मस्तिष्कों का निष्कर्ष था जिनमें महामनस्वी गेटे, थोरन, बर्ड, सवर्ब, टेनीसन, घोसी, कालगिज, कीटस जैसे कवि, श्रेष्ठ और शेक्सपियर बकरे बेकम, उमिग, मिस्टम, ब्राडसे, स्काट, हैजनेट, चार्स, सैम्य, टामस, हार्डी, स्पेन्सर जैसे नाटककार, दार्शनिक, वैज्ञानिक और विद्वद्बुद्धियों की अनुमति मिश्रित थी। इस अंग्रेजी भाषा के लेख, दर्प, सौन्दर्य और अपरिचीम सामर्थ्य ने हमें एक आरणी ही विमोहित कर लिया। उसने हमें बचू की भाँति चुपचाप हमारे घर के सम्पूर्ण वातावरण को अपने साथे में डाल लिया। हमने आश्चर्य विभूत होकर अपने को अकस्मात् न केवल मचीन रहल-सहम और वेपमूपा से सुसज्जित प्रत्युत नए विचारों, नई आनाओ नए हीसनों और नई प्रतिक्रियाओं से ओत-प्रोत पाया। हमारा विचार-वैचिष्य हमारा सामाजिक रुढ़िवाद, हमारा राजनैतिक अज्ञान और दार्शनिक अज्ञता जैसे जाडू के ओर से सजीव और स्फूर्तिमय हो उठी। हमने रोगी की भाँति पथ में नये-नूतने चरण रखने और निरर्थक भाव प्रदर्शन छोड़ दिए और स्वस्थ अल्हड़ युवक की भाँति स्वच्छन्द गद्य के सुले मैदान में दौड़ लगाता आरम्भ कर दिया। देखते-देखते हमारी सहस्रों वर्ष की मरी हुई आकाँक्षाएँ और सोई हुई जीवन भावनाएँ जाग उठीं। हमने अनायास ही एक नई दृष्टि से अपने जीवन को अपने वेद और उससे सम्बन्धित संसार को देखा। हमने एक तिरस्कृत और मरणाशुभ जाति के स्थान पर जीवन और चतता के सम्पूज ससर्गा से ओत-प्रोत तथा ज्योतिर्मय अनपह क रूप में अपने को पाया।

हम अपनी प्राचीन सम्पत्ता जीवन और परिपाटी को मूल चुने थे। हम जायों की उन अज्ञातारण विजयों के संस्कार भी भी

वे जिन्होंने अब से हजारों वर्ष पहले पंजाब का आबिष्कार और संस्थापन किया था। जो बुरुह उत्तर के उत्तुंग हिमासय क अक्षरों को विदीर्ण करके इस हरे मरे, भारत में आए थे। वहाँ की अगत्प्रसिद्ध सम्प्रदाय निर्माण की थी। प्रबल राज्य स्थापित किए थे। प्रधानतः वातावरण में अगम्य अगाध अभ्यारमत्त्व जो अत्यन्त प्राचीन होने पर भी आज भी बैसे ही ताजे और बहुमूल्य हैं खोज निकाले थे। हम बिल्कुल भूल गए थे कि कुरुओं और पांचालों की प्राचीन राजधानियाँ कहाँ थीं। हम नहीं जानते थे कि महान् बुद्ध जब अपने धर्म-विस्तार में लगे हुए थे तब उस समय मगध की गद्दी से कौन हिन्दू सम्राट समुद्र की सहरोँ पर हुकूमत करता था। हम यह भी नहीं जानते थे कि हमारे किन पूर्वजों ने समुद्र को अतिक्रान्त कर के चीन दरब यवद्वीप और पाताल में अपने उपनिवेश कायम किए थे। हम अंध गुप्त भाग आदि महाराज्यों के नाम भी भूल गए। हमें पता नहीं था— कि सक्ते ने किस प्रकार भारत को आक्रांत किया था और बिजय में उन्हें कैसे पदाग्रत कर दक्षित किया था। हमें विस्मृत स्मरण नहीं रह गया था—कि एमोरा और अजिता की गुफाएँ, सौची के स्तूप भुवनेश्वर और अगस्त्य के मन्दिर कब और किसने बनाए थे।

आर्य जैसी प्राचीन जाति की प्राचीन सम्प्रदाय का इतिहास मट्ट हो चुका था और उस जाति के बच्चों को इसकी कुछ भी खबर नहीं थी। वे या तो भेद-बकरियों के मुण्ड की भाँति मन्दिरों में देवता के सम्मुख बैठ कर अपने को बायर-कुपूत बुद्धमी और अक्षमी कह कर कास्पतिक स्वर्ण के मुल-स्वर्णों की हास्यास्पद काममाएँ किया करते थे या अपने दीन-दुस्ती अरक्षित असहाय निराश जीवन में बीठे-बीठे ससार की अनिरपता का रोना रोमा करते थे। साहिरय

की मर्यादा और शृंगार या तो मार-काट की प्रशंसा करने में या अपनी ही बभूटिया क निर्लज्ज और व्ययुक्तिपूर्ण व्यस्तीस वर्णन करने में समाप्त हो जाता था। ऐसा ही वह समय था, जब अंग्रेजी भाषा नववधू के रूप में अपने मोहक भाषों और अनूठ शृंगार को लेकर हमारे घर आई।

इस नववधू को आत्मसात करने की प्रतिक्रिया भी अद्भुत हुई। सन् १८३५ में कम्पनी की सरकार ने भारतीयों को अंग्रेजी सिखा कर उसके द्वारा भारत के शासन में सहयोग करने के प्रस्ताव को कार्यरूप दिया। अंग्रेजी माध्यम से भारतीय युवकों को शिक्षा देने के लिए अनेक स्कूल और कालेज खोले। उनमें जब भारतीय वासक अंग्रेजी पढ़ कर एक विभिन्न भावभंगी प्रकट करने लगे तो भारतीय जनता में कौतूहल बढ़ा। ईसाई मिशनरियाँ इस काम में प्रयत्न ही से काफी उद्योग कर रही थीं। इन्हीं सब बातों से राममोहन राय जैसे उद्ग्रीव मनीषि जन चौकसे हुए थे। पहले उन्हें ईसाइयों का निरीह धरिद्र और मूर्ख दमित स्त्री-गुरुओं को ईसाई बना कर घमण्ड करना बुरा लगा। परन्तु जब उन्होंने उनसे मिलित और उन्नत जीवन ध्यनीत करते देखा तो हठात् उनका मन में दमिता के प्रति अपने अन्धाय का भाव हुआ। इसी प्रकार जब पादचार्य उन्मुक्त वायु में पुरुषों क साथ स्पर्धा करती हुई महिलाओं को उन्होंने देखा, तो उन्हें अपने गन्दे घरों की बहारनीकारी में बंद निरीह स्त्रियों की दीन-दशा पर भी लोम हुआ।

वह प्रतिक्रिया सर्वप्रथम बंगाल से ही आरम्भ हुई। बंगाल में ही अंग्रेजों ने अपना प्रथम निवास बनाया था। उस समय बंगाल की विषम अवस्था थी। सारा बंगाली समाज बार्बिक रुद्रियों में प्रसिद्ध था। सबसे प्रथम यहीं ईसाइयों ने अपने कान्हे बनाए थे और

मनीष पद्धति पर अपने नए धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया था। प्रचार की सहायता के लिए जो सबसे महँगी वस्तु उनके पास थी, वह धूपने का प्रेस था। इसके द्वारा उन्होंने बमत्कारिक रूप में एक ही पुस्तक की अनेक प्रतियाँ छाप-छाप कर सस्ते मूल्य में सबसाधारण को सुलभ कर दी थीं। वे मूर्तिपूजा छुआछूत आदि हिन्दू-धर्म की बाहरी और स्पृश्या वातों पर अधिक जोर देते और नए तर्कों के सहारे उनका लक्षण-मण्डन करते थे। इन्हीं सब वातों से राजा राममोहन राय और उनके साथी प्रभावित हुए थे। ईसाइयों को यह नहीं मालूम था कि ईश्वरवाद का ईसाइयों से भी उत्कृष्ट रूप वेदान्त और उपनिषदों में वर्णित है। तत्कालीन हिन्दुओं का भी उधर ध्यान न था। राजा राममोहन राय ने इसी 'ब्रह्म' का ब्रह्मास्त्र से ईसाइयों तथा पारंपार्य संस्कृति की बहती नहर से टककर सी। अंग्रेजों के सहवास से उनमें जो एक नव चेतना का उदय हुआ था उसके आधार पर उन्होंने समाज के बाहरी अंग का नव-निर्माण करने में साहसपूर्ण कदम उठाया था। ईसाइयों की भाँति राजा राममोहन राय भी केवल बंगालियों ही को नहीं हिन्दू-भाषा को प्रभावित करना चाहते थे। इसी से उन्होंने वेदान्तसूत्रों का भाष्य हिन्दी में छपवाया था तथा हिन्दी ही में बंगदूत नामक पत्र निकाला था।

अभी तक भी कम्पनी सरकार ने कसकसे में कासेज नहीं खोला था, परन्तु राजा राममोहन राय और उनके मित्रों ने हिन्दू कासेज की स्थापना कर ली। जिसमें अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाने लगी। इस कासेज में अंग्रेजी पढ़-पढ़ कर युवक सरकारी नौकरियाँ बढ़ावा देने लगे। इससे लोगों की सामाजिक परिस्थिति पर बड़ा प्रभाव पड़ा और प्रत्येक संस्कृत और प्रतिष्ठित व्यक्ति के हृदय में अपने बच्चों की अंग्रेजी पढ़ा कर अंग्रेजों की नौकरी में भगाने

की अनिमाया होने लगी और बहु धमिमाया इसनी प्रबल हुई—कि उम सोगो के मन में बूसरी किसी धात्रीबिका का ध्यान ही न रहा । इसका एक कारण यह भी था कि वे देख चुके थे कि बम्पनी सरकार की नीकरी में रह कर कितने छोटे खानदान बगाल के प्रतिष्ठित खानदान बन चुके थे । इस समय भी सरकार अरबी फारसी और सस्कृत क मकतबों और पाठशाखाओं का पाड़ी-बहुत सहायता दे रही थी परन्तु मंग्रजी के नए षोक के सामने इस पुरानी पद्धति की पुरानी बटशालाओं और मकतबों की ओर लोगों की बहुत कम रुचि रह गई थी । धीरे-धीरे इन शिक्षा-केन्द्रों की सरकारी सहायता विस्तुप्त बन्द हा गई और सारे देश में अंग्रेजी शिक्षा का बोलबाला हो गया ।

माई मकामे—जिन्होंने भारतीयों को अंग्रेजी सिखाने की सिफारिश की थी—पूर्वीय साहित्य पर बहुत कम निष्ठा रखते थे । उनकी मान्यता थी कि यूरोप के अच्छे साहित्य की एक आसमाती हिन्दुस्तान और अरब के सार साहित्य क बराबर मूल्य रखती है । इसी पृष्ठ-भूमि पर उन्होंने सन् १८३३ के पार्लर पर पार्लियामेण्ट में भाषण देते हुए कहा था—' मैं चाहता हूँ कि भारत में यूरोप के सब रीति-रिवाज को जारी किया जाय जिससे हम अपनी कला और व्याचार-शास्त्र, साहित्य और कानून का अमर साम्राज्य भारत में कायम करें । इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए हम भारतवासियों की एक एसी शची उत्पन्न कर, जो हमारे और उन बरोड़ा क बीच में, त्रिन पर हमें शासन करना है बुभाविए का काम दें । जिनका कून ठो हिन्दुस्तानी हा, पर रुचि अंग्रेजी हो । सक्षप में अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीय उन से भारतीय पर मन से अंग्रेज हा जायें, जिससे अंग्रेजों का विरोध करने को उनकी भावना ही नष्ट हो जाय ।"

परन्तु साईं मेकाले की यह इच्छा पूरी न हुई। इसका कारण यह था कि भारतीय वाङ्मय के सम्बन्ध में उनका ज्ञान बहुत कम था। इधर अंग्रेजी पढ़कर हिन्दू-धर्म में जागृति की एक ऐसी सहर उठी कि हिन्दुत्व का सारा ही वैर्बन्ध उसमें बंध गया। एक चमत्कार यह भी था कि अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी शासन में सामञ्जस्य नहीं उत्पन्न हुआ। अंग्रेजी भाषा के द्वारा भारतीय नई पीढ़ी के खून में, वैश्व, कारमाद्म और मिस के अनेक विचार प्रविष्ट होते गए और उनमें गौरव बसिदान और धीरता का समावेश होता गया। अन्त में राष्ट्रीयता की एक आधारशिला स्थापित हो गई और अंग्रेजी पढ़े सिखे ऐसे लोगों का एक बस उत्पन्न हो गया, जिसका उद्देश्य सामाजिक था और जो केवल अपने को ही नहीं, अपने देश और समाज को भी पहचानने की इच्छा रखता था। उस समय समाज और देश के प्रति जो नवीन चेतना आगी—उसी के भीतर हमारी सारी राजनीतिक सामाजिक और धार्मिक कांतियों का जन्म हुआ।

परन्तु इसी बीच यूरोप की मजदूर भारत की सांस्कृतिक सम्पदा पर पड़ी। अब तक यूरोप भारत को धनधान्य से मरापूर, नवाबों और मुगलों का देश समझता था और उसकी दृष्टि बूट-कसोट में थी। सम्यता और संस्कृति के उद्गम के सम्बन्ध में यूरोप का विश्वास था कि उनका आरम्भ यूनान और फिसस्तीन में हुआ है। वे यह भी समझते थे कि वही देश संसार में सब से प्राचीन सम्यता वाले हैं। भारत को तब तक यूरोप के लोग एक अर्द्ध-सम्य देश समझते थे परन्तु जब यूरोप के निवासियों ने संस्कृत सीखी तो उनका परिचय उपनिषद् तथा बुद्ध जैन और बौद्ध-ग्रन्थों से हुआ। जिन दिनों प्लासी का युद्ध हो रहा था उन्हीं दिनों एक फ्रेंच नवयुवक भारत में प्राचीन पाण्डुलिपियाँ पत्त में खोजता फिर रहा था। वह भारत

स कोई अस्सी पाण्डुलिपियाँ अपने साथ फ्रांस ले गया। इस युवक का नाम दुपरोन था। इन पाण्डुलिपियों में एक पाण्डुलिपि द्वारा शिकोह द्वारा फारसी में अनुवादित उपनिषदों की भी थी। दुपरोन ने सेंटिन में इसका अनुवाद कर के 'औपनिषत्' के नाम से प्रकाशित किया। जिस पढ़ कर जर्मन का प्रसिद्ध दार्शनिक गोपनहार आश्चर्य-विभूत हो गया और उसके मुँह से यह उद्गार निकले 'इसने मेरी आत्मा की गहराई को हिलकोर दिया है। इसके प्रत्येक शब्द से मौलिक विचार ऊपर उठते हैं जिससे भारतीय विचारधारा का वातावरण भाप ही उठ खड़ा होता है। एसा प्रतीत होता है—मानो ये विचार हमारे अपने धार्मिक बंधु के विचार हों। हमारे मनो पर जो यष्ट्री संस्कारों की रुढ़ियाँ और अपवित्रतास छाए हुए हैं, वे इन विचारों के स्पर्श मात्र से एकवारगी ही गायब हो जाते हैं। सारे संसार में इसका जोड़ का कोई और ग्रन्थ नहीं हो सकता। जीवन मर में मुझ यही एक आनन्दान प्राप्त हुआ है और मृत्यु-पर्यन्त यह मर साथ रहेगा।'

जर्मनी में उपनिषदों के अध्ययन से विचारों का जागरण उसी प्रकार हुआ जैसे रिनसास के समय में प्राचीन यूनानी साहित्य के सम्पर्क से सारे यूरोप में हुआ था। इसका बाद जोहान फिकटे और पॉल ब्रूसाम ने बदान्त के सत्य को संसार का सब से बड़ा सत्य माना और जब मीस ने मनुस्मृति को पढ़ा तो उसने उस बाइबिल से कई गुना श्रेष्ठ कहा।

इसी समय बारेन हेस्टिंग्स का मन में यह विचार आया कि न्याय का शोध में हिन्दुओं पर ध्यान उन्हीं के धर्मशास्त्रों के अनुसार किया जाना चाहिए। इसके लिए उसने पहले धर्मशास्त्रों का फारसी भाषा में और अंग्रेजी में करवाना। इसके -

से आए हुए जजों और वकीलों को उसने संस्कृत पढ़ने को प्रेरित किया। उन्होंने यद्यपि कचहरी की आवश्यकता के लिए संस्कृत पढ़ी पर अब उन्होंने वहाँ का भाव-गाम्भीर्य और विचारों का मार्ग देखना, तो वे एकवारगी ही भावाभिभूत हो उठे। इसके बाद सन् १७८४ में सर विलियम जोन्स ने जो उन दिनों कसकते थे प्रधान म्यायाधीश थे, एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना की तथा स्वयं कासिदास की शकुन्तला का अनुवाद किया और शत्रुसंहार का एक सम्पादित संस्करण प्रकाशित कराया।

इसके एक बरस बाद सर चार्ल्स विलिंकिन्स ने भगवद्गीता का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया। सर जोन्स संस्कृत पर मुग्ध हो गए। उन्होंने सन् १७८४ में मानव धर्मशास्त्र नाम से मनुस्मृति का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया। जब सन् १७८६ में एशियाटिक सोसाइटी का अधिवेशन हुआ तो यह घोषणा कर दी कि संस्कृत परम अद्भुत भाषा है और बह सैटिन और ग्रीक से अधिक सम्पन्न है। उन्होंने यह विचार भी प्रकट किया कि गोविन्द और केस्टिक भाषा परिवार का उद्गम संस्कृत ही है। आगे इसी बुनियाद पर फ्रांज़बाय मैक्समूलर और प्रिम ने तुलनात्मक भाषा विज्ञान का महम सड़ा किया। इसके तत्काल बाद यूरोप के पण्डितों ने निरुक्त और व्याकरण का मन्त किया और फोनेटिक्स विज्ञान आरम्भ किया।

विलियम जोन्स की मृत्यु के बाद उनके बनिष्ठ सहकारी हेनरी टामस कोमरुन एक महान् प्राच्य विद्या विशारद प्रसिद्ध हुए। उन्होंने हिन्दू धर्म-शास्त्र दर्शन व्याकरण ज्योतिष और धर्म का बड़ा ही मार्मिक अध्ययन 'एशियाटिक रिसर्च' में प्रकाशित किया। बर्दा का भी एक प्रामाणिक विवरण 'आन द बेदा' सब से प्रथम उन्होंने

निकामा । इसी समय एक अद्भुत घटना ने यूरोप में एक नई सांस्कृतिक सहर उत्पन्न कर दी । यह घटना उस समय घटी जब सार्थ बेनेडिसी भारत में सुष्ठीबिपरी सुधि के ज्ञान में भारतीय नरेशों को फँस रहा था और पेशवा वसीन की सुधि पर हस्ताक्षर कर रहा था । यूरोप में नेपोलियन का डका बज रहा था और वह भारत की विजय कामना से मिला तक आ पहुँचा था । उन दिनों ईस्ट इण्डिया कम्पनी का एक कर्मचारी अलेक्जेंडर हैमिल्टन पेरिस में ठहरा हुआ था, उसे नेपोलियन ने कैद कर लिया । वह थादमी संस्कृत का पण्डित था । उसने जेल में लोगों को संस्कृत पढ़ाना आरम्भ कर दिया । उस समय जेल में बेन्जी नामक एक फ्रांसीसी व्यक्ति था जो बाड़ी संस्कृत ज्ञाता था । वह हैमिल्टन से मिमा और अपने संस्कृत ज्ञान को उसने बढ़ाया । बाद में स्मीगस वन्वुओं ने इन दोनों से संस्कृत पढ़ी । एक और फ्रांसीसी विद्वान् यूजीनबर्नाफ़ि भी संस्कृत पढ़ने लगे । इस प्रकार फ्रांस के इस जेलखाने में संस्कृत की एक अच्छी खासी पाठशाला खुल गई । यूजीनबर्नाफ़ि जेल से बाहर आकर फ्रांस में संस्कृत के अध्यापक बन गए । बर्नाफ़ि ने इडस्कराय और मैक्समूजर को धपना धिप्य बनाया । मैक्समूजर जर्मन था । उसने धायन के भाष्य पर महत्वपूर्ण अध्धयन किया और उसके बाद उसने बर्दे का भाष्य किया, जिसने यूरोप भर की आँखें खोल दी । वेद भाष्य से बढ़ कर एक ज्ञान उसने यह किया कि तुमनात्मक भाषा विज्ञान और तुमनात्मक अध्धयन की परम्परा स्थापित की । इसका परिणाम यह हुआ कि यूरोप के मोहान्धकार का पर्दा हट गया । अब तक वे जो यह मानते आ रहे थे कि फिनिस्तीन और यूनान सब से पुराने वेद है, और हिब्रू भाषा सब से पुरानी भाषा है तथा बाइबिल का यह कथन भी कि—सृष्टि केवल चार हजार बरस

पुछनी है ये सब मान्यताएँ विलुप्त गईं । मैक्समूलर ने प्रमाणित कर दिया कि ससार की प्राचीनतम जाति आर्य है, और प्राचीनतम साहित्य वेद है । इस प्रकार विद्वानों ने भारतीय साहित्य दर्शन और धर्म का जो वज्रान किया, उसने ईसाइयों के उस प्रचार को भी मिथ्या कर दिया जो वे भारत से धाहर करते थे कि भारत अर्द्ध-शिक्षित देश है । अब यह ज्ञान सम्पदा पाकर अंग्रेज इस बात पर गौरव अनुभव करने लगे कि सम्यक्ता का केन्द्र भारत उनके साम्राज्य का अन्तर्गत है । इसीगल बधुओं ने अपनी भाषा के द्वारा यूरोप में भारतीय ज्ञान का काफी विस्तार किया । वेद उपनिषद् भगवद्गीता मनु स्मृति शकुन्तला और बेबीसंहार को देखकर जर्मन कवि और विद्वान् बिस्मय से मुग्ध हो गए । इस साहित्य के भाव और बिचार नए सिद्धि के थे । इसीगल ने गीता की प्रशंसा पागलों की भाँति की और कहा—“ओ ईश्वरस्व के व्याख्याता, तुम्हारी भाषा के प्रभाव से मनुष्य का हृदय ऐसे अकल्पनीय आनन्द की भूमि में पहुँच जाता है—जा अत्यन्त उच्च-सनातन और ईश्वरीय है । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ और तुम्हारे चरणों में अपना अभिमानवन भेंट करता हूँ । भारतीय काव्यों की विस्रसणता पर सार्ज ने प्रकाश डाला । गेटे ने शकुन्तला की प्रशस्ति लिखी । गेटे गादि ने संस्कृत परम्पराओं को अपनाया और इसीगल से हाइने तक जर्मन कविता में भारतीय भाव फैलते ही रहे ।

इस प्रकार भारत की गौरवगाथा यूरोप में बढ़ती देख अंग्रेज चौकन्ने हो गए । वे नहीं चाहते थे कि यूरोप में भारत की प्रशंसा हो, तथा यूरोप के लोग भारतीय भावों को ग्रहण करें । वे भारत में अपना राज्य घसाना चाहते थे । ग्रासकर बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स यह नहीं चाहता था कि इग्नेण्ड वाले भी यह जान पायें कि भारत

और ब्रिटिशिंग ने संस्कृत-शोध बनाया, तो गोस्वस्कर ने उनका भण्ड फोड़ करते हुए कहा—कि राय बैबर, ब्रिटिशिंग कूहन जादि सेस किसी आस गूड़ उहेस्य स इस बात के लिए कृत-सकल्प हे कि प्राची भारत का गौरव नष्ट किया जाय ।

अब भारत में अंग्रेजी विश्वविद्यालय खोले गए तो उनमें नियुक्त हो कर अंग्रेज और जर्मन अध्यापक और महोपाध्याय भारत में आं सगे । विद्यार्थी उनका मान और आदर करते । उनकी बड़ा विद्या को वास्तविक समझते । जो कोई भारतीय डग की बात करता उसे तर्क-बिरुद्ध विद्या बिरुद्ध, इतिहास-बिरुद्ध बुद्धि-बिरुद्ध प्रमाण धूम्य कहानी अथवा मिथ्या कथा कह कर उनका उपहास किया आं सगा । ये शय्य विद्वशी सेसकों और अध्यापकों ने इतनी अधिकृत से प्रयोग किए कि भारतीय अध्यापकों और छात्रों के लिए बे परिभाष बन गए । अब अंग्रेज शासकों ने और एक पग बढ़ाया । विश्वविद्यालयों क अनेक परीक्षोत्तीर्ण श्रेष्ठ विद्यार्थियों को छात्र-वृत्तियां दी गई कि वे बिरुद्ध आबर संस्कृति इतिहास समाजशास्त्र अर्थशास्त्र दर्शन शास्त्र और धर्मशास्त्र को शिखा ग्रहण करें । ये छात्रवृत्ति पाने वाले छात्र जब विदेदा से भारत लौटे तो पूरे बिरुद्धी भावों से भरे हुए थे । अंग्रेज और जर्मन लोगों की भांति ये लोग भी कहने लगे— कि भारतीय इतिहास मूलक आत्मीक और व्यास एतिहासिक बुद्धि नहीं रखत थे । इस तरह की बात कहन वालों का ब्रिटिश सरकार बहुत आदर करती थी । इस प्रकार पुरानी विद्याओं के प्रति घृणा क भाव इस गिरिष्ठ वर्ग में जड़ पकड़ गए ।

बहु बड़ा अनुभूत कास था । हिन्दुत्व चारा थोर स रुढ़िबाद और कु-रीतियों से अकड़ गया था और अब अंग्रेजी पढ़ कर जो नवयुवक तैयार हो रहे थे । वे मनुष्य-मनुष्य में कोई भेद नहीं मान रहे थे ।

कासेज में ईसाई पंथ की शिक्षा दी जाती थी । संस्कृत भाषा में कोई पढ़ता ही न था—पढ़ता भी था तो काव्य-नाटक । इन वि यूरोप में भी धर्म की छीछालेवर हो रही थी । धार्मिक यज्ञगान और यन्त्रपाठों ने लोगों को धर्म निरपेक्ष कर दिया था । इस परिणाम भारतीय नवशिक्षित तर्कों पर यह हुआ कि वे धर्मशु हो गए । अब वे किसी भी समाज के सदस्य न थे । विचारों का अर्थ अज्ञेय था । अब वे घर में बिदेसी और अपने गाँव में बहिष्कृत थे । इन्हें ऐसा कर ईसाई कहने लगे थे— कि अब भारतवासियों को खिस्तान बनाने में किसी विशेष आयोजन की आवश्यकता नहीं है, वास्तव में वे हिन्दुत्व के ईसाई मिशनरियों से भी अधिक शत्रु थे । ये लोग अब सामाजिक सुविधा के लिए धर्म परिवर्तन करने में भी न हिचकते थे । ऐसे धर्म परिवर्तन करने वालों में माइकेल मधुसूदन प्रमुख थे । वास कर यूरोपियन धर्म के नाटक कहानियाँ पढ़ कर हिन्दू युवकों से हिन्दुत्व के अन्वेषण में न रहा गया । वे ईसाई होने लगे । मस्तिष्क में स्वतंत्र विचारों का तूफान, हृदय में मोहन की रगीत उमंगों परन्तु पर्दे और जाति के बंधन की बाधाएँ । उन्होंने बंधनकी सब बाधाओं को दूर कर त्रिदिशयन बन कर अपनी एक नई जाति स्थापित करनी आरम्भ कर ली । इसपर यह हो रहा था— उपर समाज में भ्रूण हत्याएँ चल रही थीं बालिकाओं का बध होता था, सती पर निर्मम अपर्य होता था सुभासूत का बोलवाला था विधवा विवाह नहीं हो सकता था । पुरु और स्त्रियों को मानवीय अधिकार प्राप्त न थे । साग छिप कर नीच स्त्रियों से व्यभिचार करते थे । तीर्थ व्यभिचार के अहंते बने हुए थे । महत्ता के घर पापापार के गढ़ थे पुजारी-मण्डे सालची स्वार्थी और दुष्टचारी थे । स्त्रियों का व्यापार होता था । मुसाम शरीरे-बन्धे जाते थे ।

मर-बलि भी होती थी । लोग समझते थे—य बातें राकी नहीं जा सकती । गोकने से अघर्म होता है । जा लोग मुराप घूम भाते थे, ब सौटने के बाद अपने माता-पिता को प्रणाम करत धर्मति थे । जो मम को ब्याह माते थे—वे पूयक बन बसाकर रहते थे । यही वह समय था जब राजा राममोहनराय न बह्नीममाज क घर में समग्र नई पीढ़ी क उदप्र हिन्दुभा को खपेट मिया ।

★

१३

राजा राममोहन राय के अनुराध स गुमदा न अपने ध्वजुर राधा मोहन मजूमदार से मुलाकात की । सम्मुख जान पर उसन पर्दा-चूँघट नहीं किया परन्तु गले में आपस हाल कर शब्दुर को प्रणाम किया । बातचीत के दौराम में उसने फादर जानसन को भी सम्मिलित किया । और अब ये थारां धादमी दिम खोस कर बातें करने सगे ।

राधामाहन ने कहा— 'बेटी तुझे यहाँ प्रसन्न और स्वल्प दखकर म बहुत खुश हूँ । मुझे जाति बाला न जा प्रताड़ित किया और मेरा अपमान किया वह भव तुझे दख कर मुझे खल नहीं रहा है । पर में चाहता हूँ कि तू मेरे साथ रह और पुत्र की कमी को पूरी कर ।'

गुमदा ने कहा— 'आप मर पिता हूँ पूज्य ह मरे लिए आप ही का घर ससार में था, परन्तु मर साथ जो घटनाएँ घट चुकी और में जहाँ पहुँच चुकी वहाँ से सौट कर आपकी दरण में जाना म आपन लिए धेयन्कर होगा न मर लिए ।'

"म तो तुझे अपनी बही पुत्र-बधू समझता हूँ ।"

"वही तो हूँ । बदम कस जाऊँगी !"

“यह तो मैंने तभी देखा था, जब तुने मले में आँसु डाल कर मेरी चरण रज ली। पर मैंने सुना कि तू एक अज्ञेय तबण से ब्याह कर रही है ?”

‘दूसरी कोई राह नहीं है। परन्तु मेरी आत्मा हिन्दू है। सम्कार हिन्दू है। फिर मैं भारतीय भी तो हूँ। आधार मेरे हिन्दू है। विचार से हिन्दू नहीं हूँ क्योंकि हिन्दू-धर्म में एक दोष है कि वह सदा सोया रहता है और जब उस पर बय प्रहार होता है, तब जागता है। इसी से आप उस समय मुझ अवोध को भीषित जसा देने में सहमत हो गए थे परन्तु अब आप इतने उदार बन गए हैं।”

‘बेटी यह मेरा नहीं हिन्दू धर्म का दोष है।

‘वही मैं भी कहती हूँ जहाँ शून्य होता है वहीं अवाञ्छित वस्तुएँ अपनी राह बनाती हैं।

‘बेटी तू मुझे एक बात सच-सच बता।

“पूछिए।

‘क्या तुने ईसाई-धर्म पर विद्वान्तास कर के धर्म-परिवर्तन करने का निर्णय किया है ?

‘मही तमिक भी नहीं। मेरा धर्म-परिवर्तन तो शुद्ध सामाजिक आवश्यकता पर आधारित है विद्वान्तास तो मेरा हिन्दूत्व पर ही है।

‘यह कौसी बात है बेटी ?

‘स्पष्ट है कि मैं कोई धर्मात्मा स्त्री नहीं हूँ। संसारी स्त्री मात्र हूँ। संसार में रहने के लिए मुझे ईसाई समाज को ग्रहण करना पड़ा क्योंकि दूसरा उपाय न था। पर हिन्दू-संस्कार, आत्म-त्याग तो मेरे रक्त बिन्दुओं में है।

‘क्या तेरी ये बातें पादर जानते हैं ?”

कामेब अब सिखा के माध्यम से ईसाई-धर्म का प्रचार कर रहे हैं और यदि मैं मूल नहीं कर रहा हूँ तो इस समय समूचे भारत में देशी ईसाइयों की संख्या दो लाख तो अवश्य होगी। अभी उस दिन डाक्टर बफ ने गर्भपूर्वक कहा था— जिस-जिस विधा में पाश्चात्य शिक्षा प्रगति करेगी उस-उस विधा में हिन्दुत्व के कई अंग टूटते जाएँ और जन्त में जाकर ऐसा होगा कि हिन्दुत्व का कोई अंग भी साबुत न रहेगा। उनक भाषण से प्रभावित होकर साहं साफ़-सवरी में यहाँ तक कह जाता कि जो भी हिन्दू ईसाई परमात्मा का ध्यान करेगा वह ब्रह्मा-विष्णु को खुद भूम जायगा।

गुमबा ने कहा— 'यही तो बात है राय महाशय क्या किया जाय। प्रहार हो रहे हैं पर हिन्दुत्व की नींव नहीं टूटती इसी से ईसाई धर्म प्रचारकों के मनमूबे बड़ रहे हैं।'

'निस्सन्दह गुमबा देवी। अफ्रेजी सिखा के प्रवाह में हिन्दू युवक सभी दिशाओं से मुह कर केबस पश्चिम की ओर देखने लगे हैं। उन्होंने जो दृष्टि प्राप्त की है उससे पूरब के संसार में उन्हें केबस दोष ही दोष दिखाई देने लगे हैं।

'परन्तु म जानती हूँ कि उनके भीतर धार्मिकता के कोई पिट्ट नहीं ह। जिन्हान धर्म परिवर्तन किया है व सांसारिक कारणा स क्रिश्चियन हुए ह। परन्तु भारत में सदा से धर्म के साथ एक प्रकार का अरिजबस रहा है। वह न इन नए किषारों के तवर्णों में ह न नब ईसाइयां में। इसी से भारतीय जनता में उनकी कोई प्रतिष्ठा नहीं है। उन्टे बे धूमा क पात्र बन रहे हैं।

'तो बटी तू अपने को क्या उस धेणी में रखती है। तेरे ज्ञान ने नेय गुले हुए हैं तू अब अपने पर बस कर रह। मजूमदार ने कहा।

“रह नहीं सकती पिताजी कारण बता चुकी हूँ । इसके अतिरिक्त कुछ और भी बातें हैं ।” इतना कह कर उसने फादर जामसन की ओर देखा फिर आँसों नीची कर सी ।

पादरी जामसन ने कहा— ‘इसी सप्ताह शुभदा देवी का शुभ विवाह कर्नम मंकडानन्द से हो रहा है मजूमदार महाशय । शुभदा देवी यही कहना चाहती ह ।

‘क्या यह विवाह शुभदा अपनी इच्छा से कर रही है ? मजूमदार ने पूछा ।

इस पर शुभदा ने कहा— ‘जी हाँ परन्तु कदाचित् आपका घुरा सगे ।’

‘महीं म तो केवल यह कामना करता हूँ कि मेरी बेटी अपने जीवन में सुखी हो । अब तो मेरा इसका पुराना माता दूट चुका । अब मए माते से यह मेरी बटी है ।

तो पिता जी आप यदि ऐसी भावना रखत हे तो अपने हाथ से ही अपनी पुत्री को सत्पाप को दीजिए ।

‘यह तो विदम्बना की बात होगी । क्योंकि मैं तुम्हार माबी पति को जामता तक नहीं । फिर भी मैं तुम्हारी किसी इच्छा में बाधक नहीं होऊँगा । पर तुम्हें मेरी एक बात रखनी होगी ।’

‘कहिए ।

‘यह स्वीकार करो । मेरा वामपत्र है । मरी सम्पूर्ण सम्पत्ति की तुम्हीं उत्तराधिकारिणी हो । विवाह तुम्हार शुभ हो । ये पाँच लाख रुपए मैं तुम्हें देता हूँ । अब मैं राम महाशय के साथ उपासना में राय जीवन व्यतीत करूँगा ।’

‘आपका यह अनुदान ग्रहण करने में मुझे संकोच हो रहा है । मैं गृहत्यागिनी हूँ ।’

‘तो इससे क्या ? हो तो मेरी बेटी । मैं तुम्हारे ब्याह में अवश्य उपस्थित होता, परन्तु अभी इतना साहस मुझ में नहीं है ।

‘क्या आप एक बार मेरे मावी पक्ष से मित्रता पसन्द करेंगे ?’

‘न न, उसकी आवश्यकता ही अब नहीं है । मैं केवल तुम्हें आशीर्वाद दूँगा ।

‘तो मैं उनसे पूछ कर आपका यह अनुदान ग्रहण करूँगी ।’

‘नहीं यह तुम्हें अभी इसी समय ग्रहण करना होगा । इतना साहस और आत्मनिर्भरता तुम में होनी चाहिए ।

‘क्या यह रकम में धर्म प्रचार में वर्ष कर सकती हूँ ।’

‘नहीं । मने तुम्हारे मुँह से सुनने के बाद यह निर्णय किया है कि तुम्हारा धर्म से कोई सीधा सरोकार नहीं है ।’

‘तो फिर इस धन का म क्या करूँगी ?

‘अपने जीवन को सुखी और मन को सन्तुष्ट करने के लिए जो चाहे वही करना ।’

‘भीर यदि मैं वह धन न लूँ ?

‘तो मैं इसे राय महोदय को दे दूँगा ।’

‘यह अधिक बख्शा है । राय महाशय इस धन से देश की मानसिक दरिद्रता दूर कर सकेंगे ।

‘बेटी तुम बड़ी महान् हो बड़ी उदार हो । इस धन की स्वामिनी तुम्हीं हो । धन हाथ से ब्रिम चाहे दे सकती हो ।

शुभदा ने वह दानपत्र राय महोदय के हाथ में दे कर कहा—

बिबाह स प्रथम ही इसकी लिप्या-पढ़ी कर लीजिए राय महाशय और बिबाह में आप ही मरे पिता का स्वान ग्रहण कीजिए तथा मेरा बिबाह हिन्दू रीति स ही कीजिए ।

बड़ी ही खुशी स शुभदा देखी, मैं तुम्हारा वह अनुदान और

वनुरोध स्वीकार करेंगा । पर एक कठिनाई है । हिन्दू रीति से तुम्हारा विवाह नहीं हो सकता । क्योंकि तुम कुलीन ब्राह्मण कन्या हो । परिणीता और विधवा हो, धर्मशास्त्र की रीति से तुम्हारा विवाह नहीं हो सकता ।”

‘मम इस बात पर विचार किया है । मेरा नाश्वर्य रीति से विवाह हो सकता है । मेरे पास प्रमाण है । प्राचीनकाल में ऐसे विवाह सम्पन्न हुए थे जिनमें न जाति-याति का विघ्न था न विधवा की रोक-टोक ।’

‘शास्त्रीय बचन और रोक-टोक हो तो भी मैं तो इसकी परवाह नहीं करता । पर तुम यदि ब्राह्मणसमाज की रीति अपनाओ तो अधिक उत्तम है । हम सोम भी वेद-संवा का उच्चारण करते हैं । हाँ, जाति से ब्राह्मण नहीं मानते ।’

‘तो यही सही । आप मेरे पिता अग्निमावक और पुरोहित सब कुछ बन जाइए ।

“मैं स्वीकार करता हूँ, परन्तु क्या फादर और कर्मस मेकडानरुड इसे पसन्द करेंगे ?”

फादर आसन्न ने कहा—“मुझे कोई आपत्ति नहीं है । सुमदा बीसी बेटी पर मैं कोई विचार वशात् नहीं आदना चाहता । उसमें हिन्दू-धर्म और ईसाई-धर्म के तत्त्व को समझने की पूरी सामर्थ्य है । वह अपने लिए जैसा ठीक समझे वैसा कर सकती है ।

‘विन्दु कर्मस मेकडानरुड ?

‘मैंने उनसे बात कर ली है । वे मेरे विचारों की ऊत्र करते हैं । वह उदार पुरुष हैं । बस हमारे बीच में यह तय हुआ है कि हमारे जो बच्चे होंगे, वे त्रिचिपन होंगे । मैंने यह बात स्वीकार कर ली है ।’

बन्धी बात है । मैं तुम्हारा अभिभावक और पुरोहित घमना स्वीकार करता हूँ शुभदा देवी ।’

‘तो इसी सप्ताह रविवार को मेरे ही मकाम पर यह शुभ कार्य होगा राय महोदय, मैं आपका आमंत्रित करता हूँ ।’

और यथा समय शुभदा देवी का विवाह अत्यन्त सादगी के साथ सम्पन्न हो गया । विवाहकाल में शुभदा ने भारतीय बसू का वेश धारण किया । कर्नस अपनी पूरी बर्दा में थे, बहुत से अंग्रेज अफसर तथा कुछ भारतीय मित्र इस महत्वपूर्ण विवाह में सम्मिलित हुए ।



१४

कर्नल मेकडानल्ड और शुभदा का विवाह स कलकत्ते के भारतीय और यूरोपियन दोनों ही पिन्नों में हमबल उत्पन्न हो गई थी । और अब यह विवाह कलकत्ते में आम बर्षों का विषय बन रहा था । यों तो इस प्रकार के अन्तर्जातीय विवाह कलकत्ते और भारत के मिस्र मिस्र प्रांतों में रहने वाले अंग्रेज करते ही रहते थे पर वे साधारण व्यापारी और स्त्रियाँ प्रायः नीच जाति की या मुसलमान हुआ करती थीं । यह हम प्रथम ही बता चुके हैं कि उन दिना तक भारत में बहुत कम अंग्रेज-स्त्रियाँ जाती थीं । प्रायः अंग्रेज अकेले ही रहते थे । इस कारण प्रथम तो भारत में इन यूरोपियनों के आचरण बहुत ही अष्ट रहते थे दूसरे जैसे ही कोई अंग्रेज औरत विधवा हुई कि उरब बहुत स उम्मीदवार लड़े हो जात थे । कलकत्ता इस प्रकार की कार्यवाहियों का केन्द्र था । परन्तु उच्च श्रेणी के अंग्रेज अफसर अक्सर अपने को भारतीयों से दूर ही रगते थे । कलस मेकडानल्ड

कोई अनाचार नहीं किया। यद्यपि मेकडानहड एक ऐसे तरुण अंग्रेज थे, जिन्हें अपनी अंग्रेजिमठ पर धमण्ड था। निःसन्देह वह भाण्ठीयों को सुख, अखुत और पिछड़ा हुआ समझते थे, परन्तु उनके प्रति उनके मन में जो घृणा थी, वह धूमदा की बातचीत और प्रभाव से बहुत कम हो गई थी।

बरकपुर के उच्च सैनिक अधिकारी बनने के बाद उन्हें एक बड़िया बंगला मिल गया था। वहाँ वह धूमदा को ले गये थे। बंगले की उत्तम अंग्रेजी ढंग की सजावट करीने से कटी हुई रोसें, सड़कों पर कुटी हुई सास बजरी और बीरा जानसामा, आया, और अरवणियों की पलटन यह सब देख धूमदा अभिभूत हो गई थी। जब वह इतनी समझदार ठो थी ही कि अपने इस भाग्य परिवर्तन को देखे, उस पर विचार करे। चिंता पर से अर्धमूर्च्छित अथवती अवस्था में उठाई हुई अबोध बालिका का जीवन कहीं से कहीं पहुँच गया था—इसे धूमदा जितना ही विचारती, उतना ही वह गम्भीर हो जाती थी।

नए बंगले में आकर उसने अच्छी तरह धूम फिर कर अपने घर को देखा। सेना के वडे साहब की बीबी को दूध बंगासिन के रूप में देकर बरा जानसामा हीरान और चमलूत थे। धूमदा काशीनाथ को अपने साथ पादरी जानसन के यहाँ से आई थी। कमी काशीनाथ धूमदा के उम्मीदवारों में था। परन्तु जैसे वह पादरी जानसन के यहाँ उसके जूठे साफ किया करता था—वैसे यहाँ भी उसकी नई उधुटी थी। वह धूमदा का सास विदमलतगार होकर आया था। और जब अपनी नई मालकिन और नये घर से प्रसन्न था। उसे इस बात का भी ममान न था कि वह जो कमी धूमदा का उम्मीदवार था सो उसकी उम्मीदवारी टूट चुकी थी।

‘तो क्या पर तुम हाथ जोड़ कर प्रणाम तो करो ।’

‘मुझे उसकी विधि बताओ ।

शुभरा ने आठम्बर से ठाकुर को प्रणाम किया । मेकडामल्ल ने उस का अनुकरण कर तकसी गम्भीरता से कहा— ‘बस इतने ही से ठाकुर तुम्हारे ?’

‘इतने ही से है पर इनसे बड़ा और कोई नहीं है ।

‘तब तो हमें उस बड़े झाड़ंग स्म को ठाकुरद्वारा बनाया होगा ।’

‘मेरे ठाकुर तुम्हारे जैसे साहब बहादुर नहीं है । वे इसी कोठरी में रहेंगे यहीं से हमें चरणामृत दसे रहेंगे ।

‘यह तो और भी अच्छा है । लेकिन मुझे भी कुछ तुम्हारे ठाकुर के लिए करना होगा ।’

‘बस जूता पहन कर कमी मेरे ठाकुरद्वारे में मत घुसना ।

‘अच्छी बात है और प्रणाम भी करना होगा ?’

‘तुम्हारे प्रणाम के मेरे ठाकुर भूजे नहीं है । मर्जी हो करना मर्जी न हो मत करना ।’

‘तो शुभरा देवी मेरी ओर से तुम्हीं प्रणाम कर दिया करो । और बेसो में भुलककड़ भावमी हूँ । जरा ध्यान रखना तुम्हारे ठाकुर तुम से नाराज न हो जायें । बस प्रसन्न रहें ।’

‘हाँ हाँ प्रसन्न रहेंगे । लेकिन अब तुम कहाँ बसे ?’

‘भूम गई ? इतबार है । मैं गिरज जा रहा हूँ ।’

‘अरे ! मत तो भूम ही गई थी ।

‘काफी देर हो गई है । आओ नास्ता कर में ।’

‘अभी मुझे स्नान-पूजा में देर सगेयी । तुम नास्ता कर सो । नास्ता टेबुस पर रस दिया गया है ।’

‘तो तुम तब तक मेरे पास बैठो ।’

उन्होंने शुभदा का हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा । शुभदा उन्हें डाइनिंग रूम में ले गई । वहाँ बैठ कर मेकअपनाटक नास्ता करने और बातें करने लगे । शुभदा ने कहा— माय तो कई थिथुरियाँ मिलीं !

“हाँ मन्दम स मेरी छोटी बहन का मत आया था । उसका जबाब लिखा । मेने घादी की बात तो पहले ही मिल ही थी । उसने तुम्हारे विषय में बहुत-स सवालात मिल भज थ । उन सबका जवाब मुझे मिलना पड़ा ।

‘क्या-क्या सवालात थे ?

‘स्वभाविक है कि उसकी जीर माँ की उत्सुकता तुम्हारे लिए है । इसी से उन्होंने तुम्हारे सम्बन्ध में सब जानकारी हासिल करने की चप्पा की । मेने ससन्नीपूर्ण जबाब लिख दिया है ।

‘उन्हें तुम यहाँ क्यों नहीं बुला लते ?

‘बहन का एक तो पढ़ाई का विमसिमा चल रहा है । दूसरे माँ को वह अकेली नहीं छोड़ सकती कुछ दिना में छुट्टी लेकर हम बितागत चलेगे ।

‘तकिय क्या वह मुझे पसन्द करेगी ?

‘क्यों नहीं । तुम्हारी जैसी भावज को वह पसन्द न करेयी मसा !”

‘मन इसलिए कहा—कि प्राय सभी बंगज हम भारतीयों को हीन-दृष्टि से देखते हैं ।”

‘तुम्हें देख कर कौन भारतीयों को हीन दृष्टि से देखेगा ।’

‘यह तो तुम आपमूसी की बातें करत हा । सैर, गिरजे से कब तक सीटोगे ?’

“मुमकिन है कुछ देर सग जाय । क्योंकि कर्नेल हिअरर्स और उनकी पत्नी गिरजे में आ रही है वे मेरे पुराने दोस्त हैं, वे बड़े मझे सिबिसियन हैं । मिसोगी तो प्रसन्न होगी ।”

महीं-महीं में अधिक लोगों से मिसना पसन्द नहीं करती । हाँ, उनकी पत्नी यदि किसी भारतीय स्त्री से मिसने में हानि न समझे, तो उनसे जरूर मिसूँगी ।”

‘वह अभी बिलायत से गई आई है । महीं जानता उनका मित्राज कैसा है । सुना है—वे बड़े ठाट की महिला हैं । गिरजे में वह आ ही रही है । बखूँगा ।’

अन्ध्या तो अब तुम जाओ । ईसू मसीह से प्रार्थना करो कि वह हम पर कृपा करें । मैं भी ठाकुर से यही अरदास करती हूँ । और तुम अपने मित्र और उनकी पत्नी से भी मिलो । मैं मज पर तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी ।’

‘मैं ठीक समय पर ही सौट बाँटूँगा ।’

मेकडानल्ड शुमबा से बिदा लेकर वाहर गए, जहाँ उनका घोड़ा तैयार था । घोड़े पर सवार होकर वह गिरजे की ओर चल गए ।

गिरजे में अनेक अप्रेज स्त्री-गुरुए एकत्र थे । वे या तो सरकारी अफसर थे या व्यापारी जम । पर अधिकांश लोग सनिब अधिकाटी और उनसे परिजत थे । इन सबका ध्यान केन्द्रित था कर्नेल हिअरर्स की मेम साहिबा पर । वह एक अद्वितीय सुन्दरी तरुणी थीं । अमी इर्मन्ड से आई थी । स्वास्थ्य की समाई उसकी मुनाई में चार चाँद

सगा रही थी। उसने छप-टू-डेट फैशन का परिधान पहना था। परिधान आसमानी मसमस का था और उस परिधान में उसका सौन्दर्य और यौवन फूटा पड़ता था। वह एक ऐसी रमणी थी जिसका रूप यौवन समय के अत्याचार से मष्ट नहीं हो सका था। मांगों का अनुमान था कि उस महिला की आयु पालीस बरस की है। इस उम्र में तो भारतीय स्त्रियाँ बुढ़िया हो जाती हैं। परन्तु इस स्त्री पर यौवन का निम्नार ऐसा था कि अच्छे से अच्छे पारखी भी उसे तीस व भीतर ही समझते थे। पर हकीकत यह थी कि उसकी उम्र ब्यासीस बरस की थी। कब उसका कुछ सम्बा देह गुदगुदी और कुछ पीन थे। कमर एसी पतली थी कि वह उसमें कमरबन्द लगाती ही न थी। उसके प्रत्येक अंग इस प्रकार सौंध में डल था कि मानों बिघाता ने उसे ताश्न और प्रेम का आस्वादन करने के ही लिए बनाया था। उसके नभो स तीव्र सालसा व्यक्त होती थी। पर उसकी चितवन में बुढ़ता और निर्मीकता तथा स्वेच्छाचारिता स्पष्ट दीख पड़ती थी। उस देस कर मनुष्य का मन हाथ से निकल जाता था। रंग उसका कुछ पीला था। मास कोमल और मुलाबी थे। होंठ मास और फूले हुए थे, उनमें ऐसी चमक थी कि जैसे पका हुआ फल रस स मवातव भरा हुआ हो। उसकी गर्दन हंस के समान, ऊँचे मुडोम और भुजाएँ मुजास को मात करती थीं। सिर के वास कासे सम्बे और पुँषराल थे। नाँसे कामी और कटीसी थी। रेंगसियाँ पतली और मुसायम थीं। और उनके पोरों पर नुकीसे नायून अजब बहार दिखता था। पैर छोटे और लुवमूरत थे। उनमें उसने नए फँधान के जूते पहन थे। सिर पर भी नए फसन का एक अमरीकन टोप था, जिसमें किसी पत्ती का एक सफेद पर सगा था। उसका बेलना, वात करना, उठना-बैठना, सब कुछ माज-नखरे से भरा था।

जो सुस्त पोशाक उसने पहन रखी थी, उसे सण्डन के पासमास महल्ने के प्रसिद्ध दर्जी ने सिया था। उस पोशाक में उसका जिस्म फूटा पड़ता था। उसकी नुजाएँ और बस का ऊपरी भाग मगा था। और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे वह अपने बस्त्रों में समा नहीं रही है। कर्नल हिअरर्स की यह पत्नी आई तो थी गिरजे में उपासना करने के लिए, पर जिस ठाटवाट का उसका प्रदर्शन था वह तो एक मृत्यु मोठी क योग्य था। जो हो उन्हें यहाँ देख कर सबकी धाँसों में अकार्षीय लग गई।

उपासना की समाप्ति पर सब लोग उठे। सैनिक और अफसर अब जैसे गए तो कर्नल हिअरर्स पत्नी को बाह का सहारा लिए बाहर बरान्डे में जहाँ मेकडानल्ड टहलते हुए उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे, आ गए। मित्र को दस्तते ही मेकडानल्ड सपक कर मित्र की ओर बढ़े। हिअरर्स ने उनसे हाथ मिलाया और कहा— 'मेरी पत्नी से मिलिए। फिर पत्नी ने कहा— "ये हैं मेरे मित्र और साथी कर्नल मेकडानल्ड।"

मैडम ने अपनी बत्तीसी की छटा दिखाते हुए अपना हाथ नखरे के साथ बढ़ा दिया जिस मेकडानल्ड ने तपाक से चूम लिया।

मैडम ने कहा— आपकी पत्नी इतनी अधिक मुस स हिअरर्स ने की है कि आपकी यह पहली मुलाकात मुझे एक सुपरिचित बन्धु की मुलाकात प्रतीत हो रही है।

आपके इन अनुग्रह के लिए धन्यवाद है मैडम। कहिए, हमारा हिन्दुस्तान आपको पसन्द आया ?"

"हमारा ? हमारे क्या मान ? ओह ! समझी आपने एक हिन्दुस्तानी औरत से गाने की है न इसी स अब आप हिन्दुस्तानी बन गए हैं।"

“खादी तो अरुण मैंने एक भारतीय महिला से की है। पर मैं हूँ एक सम्झा अंग्रेज ही।”

“धान कर खुशी हुई। पर अभी मैं हिन्दुस्तान की वायत क्या राय बाहिर कर सकती हूँ। जरा देखू तो कहूँ। हाँ आपकी हिन्दुस्तानी बीबी कैसी है?”

“यकीनन आपके समान धानदार नहीं है, आप शायद उससे मिसमा भी पसन्द न करें।”

“इन कासे हिन्दुस्थानियों से म डरती हूँ। ईर्ष्या में मने यहाँ से सौटे हुए आदमियों से यहाँ की औरतो के बहुत धबीब-ब-गरीब किस्से सुने हे।”

“इन बातों में शायद आपकी अधिक अमिस्वि है। किन्तु मरी पत्नी से डरन की तो कोई जरूरत नहीं है।

“तो फिर उसे साइप किसी दिन मेरे यहाँ।”

“मैं उससे पूछूँगा, यदि वह पसन्द करेगी तो जरूर लाऊँगा।”

“धन्या, क्या हिन्दुस्तानी औरतें भी इस कदर मिजाज रखती ह?”

“क्यों नहीं औरतें तो सभी मुल्कों की एक ही साँचे की बनी होती ह।”

‘मुझ यह देख कर प्रसन्नता होती है कि आप अपनी हिन्दुस्तानी पत्नी को इस कदर उद्र करते ह।

“क्या मरे दोस्त हिअरर्स मरे समान भाम्यदासी नहीं ह ?

मैडम मे मल्लरे से एक ठण्डी साँस सी और कहा— खुदा बचाए, उनके बसा ईर्ष्यासु पति दुनिया में न होगा।

‘क्या आप एसा कह कर मेरे दोस्त के साथ अन्याय नहीं कर रही ह ?”

'तनिक भी नहीं । मैं तो सब से कुछ कम ही कह रही हूँ ।'

'तब तो मामूम होता है कि मर्दों के सम्बन्ध में आपके बिचार बहुत ही हीन ह ।

'इसका तो यह अर्थ हुआ कि मैं आपका भी बँसा ही समझती हूँ ।'

सब, तो इतना तो मैं भी समझ गया कि मैं एक भाग्यशासी पुरुष हूँ । और आपकी कृपा-दृष्टि इस तुच्छ पर है । मेकडान्ड ने हँस कर कहा ।

'सब तो आप आज धाम को हमारे साथ बिनर पर आइए, इस मसले पर अभी बातचीत होगी ।

इस निमंत्रण के लिए धन्यवाद । किन्तु आज तो मैं बहुत ही व्यस्त हूँ । फिर कभी आपकी इस कृपा का नाम सूँगा ।

सैर । फिर कभी ही सही । इतना कह कर मिसेज हिअरर्स इठलाती हुई अपनी गाड़ी की ओर बढ़ चली ।

मेकडान्ड उन्हें सलाम करके अपने घोड़े पर सवार हो अपने घर लौटे ।

✱

१६

अफगानिस्तान के युद्ध का भारतीय मनिकों पर बुरा प्रभाव पड़ा । राम बर बगाल की दली सुना में उसनी एमी प्रतिक्रिया हुई कि अग्रजा का बड़ा-बड़ा रुभाव खत्म ही हो गया । और सैनिकों में असन्तोष व खराब दीव्य पड़ने लगे । वे बहुधा आपस में खबर क दरें क बस्ने-आम की चर्चा खूब बड़ा-बड़ा कर करते और अंग्रेजों की दुर्दगा पर गुनगुना होते थे । पास बर अजय और बिहार के सिपाही,

जो इस सेना में थे और हजारों की संख्या में कत्ल हुए और जिनके हजारों घराने बरबाद हो गए थे अंग्रेजी सरकार को अपनी बरबादी का कारण समझते थे। यद्यपि साधारण सरकारी कर्मचारियों पर इसका विशेष प्रभाव न था न उनमें ऐसा कोई असन्तोष ही बीजता था। परन्तु अंग्रेजों की घेष्ठता और अश्रेय शक्ति पर था उनका विश्वास था वह बहुत कम हो गया था। और यद्यपि अंग्रेजी सरकार की अमलदारी का विस्तार बढ़ता जाता था पर सर्वसाधारण का और सरकारी कर्मचारियों का सरकार के प्रति हीन भाव बढ़ता जाता था। महत्वपूर्ण बात यह थी कि इस घटना की प्रतिक्रिया जो उनके मस्तिष्क पर पड़ी थी, बड़ी प्रबल थी। दिन बीतते जाते थे और इन विचारों की पुष्टि होती जाती थी। साधारणतया बंगाल इन्फैण्ट्री के सिपाही भारत ही में यद्ध के लिए उपयोग में लाए जाते थे और प्रायः उनकी नियुक्ति उसी प्रान्त में होती थी जिनके वे निवासी होते थे। परन्तु जब उन्हें अफगानिस्तान की लड़ाई पर भेजा गया था, तब उनमें उत्साह और प्रसन्नता की भावना न थी, क्योंकि उनके सत्कारों और स्मृति में वह पुरानी बात कायम थी, जब कि मुगल बादशाह अकबर के काल में महाराज मानसिंह के नेतृत्व में राजपूतों ने अटक पार कर के काबुल के दुर्बान्त पठानों का मानमर्दन किया था। वह बात व भूल न थे। वे समझ रहे थे—यव हमें भी वही प्रसिद्ध सुअबसर प्राप्त हो रहा है। यद्यपि इस प्रकार भारत से बाहर देशी मना को स जाने न अबसर कभी-कभी ही आए और उसका पुरस्कार भी उन्हें दिया गया।

जब सन् १८४३ में सिंध अंग्रेजों की अमलदारी में आया तब यह निश्चय किया गया कि सिंध के सरदारों का कार्य देशी सेना से कराया जाय। उस समय पंजाब की सीमा पर जो सेना विमुक्त थी उसी

को सिंध पर नियुक्त कर दिया गया। परन्तु ६४ मम्बर की पल्टन जब ब्रूच करने लगी तो उसने तनखाहे-जंग का ठकावा किया और बगावत पर आमादा हो गई। उस समय उस सेना के अध्यक्ष कर्नल ने उन्हें सन्तुष्ट करने के लिए उनसे कुछ चादे किए। परन्तु जब वे सिंध पहुँचे तो उन्हें ज्ञात हो गया कि उन्हें घोसा दिया गया है और वे भागवे पूरे नहीं किए जाएँगे। तब उन्होंने फिर बगावत की। तब उन्हें मलनऊ से आया गया और सेना को बरगसाने के अपराध में कुछ व्यक्तियों को सजाएँ दी गई।

परन्तु इसी प्रकार का बिद्रोह ३४ मम्बर की पल्टन में भी किया जो पञ्जाब की सरहद पर तैनात थी। वहाँ भी सैनिकों को सजाएँ दी गईं। इन बातों से सैनिकों में अंग्रेजी सरकार के खिलाफ किसी नाराजी और बिद्रोही भावना का बिकास होता गया। और उनके दिलों में नमकहलासी बफादारी और सैनिक निष्ठा की भावना कम विचलित हो गई। इस सेना के रग-रग देख कर उसे मेरठ भेज दिया गया जहाँ परब में उनकी बर्दियाँ उतरवा ली गईं तथा सैनिकों और उनके देसी अफसरों का अत्यन्त अपमान किया गया। यहाँ तक कि अपराधी और निरपराधी का भी विचार नहीं किया गया क्योंकि अभी तक अंग्रेज अपनी शान में थे और भारतीयों से पूरे दबाव और रुखावत से पेश आत थे। इसका परिणाम यह हुआ कि इस समय सेना का जो यह साधारण असन्तोष था वह भावी बिद्रोह का मूलाकार बन गया। पर इस समय के अफसरों ने इस बात पर बुरबुरिता से विचार नहीं किया और यही निश्चय किया कि बनी सेना के साथ सख्त बद्रम उठाने और कड़ा व्यवहार करने की ही आवश्यकता है। उस समय उनकी दृष्टि सैनिक अनुगामन पर ही थी। वे नहीं जानते थे कि भारतीयों में भी आत्मसम्मान का भाव जागृत हो सकता है। वे

उन्हें अतिशय दीन-हीन, नग्न समझते थे और अब तब भारतीय जन भी अत्यन्त बम्बू और पोष की भाँति अंग्रेजी अमनदारी का सब प्रकार का क्रूर ध्वंसाय मूर्ख और अनियमित शासन मान्य करत आए थे । वसल बात यह थी कि छठाब्दियो तक मुसलमानी के अत्याचार सहते-सहत उनमें प्रतिक्रिया की शक्ति ही न रह गई थी । फिर अंग्रेजों को तो वे दबी-शक्ति-सम्पन्न एक समर्थ और शत्रुय जाति मान चुके थे । और इसी भावना की समाप्ति कायुक्त के मुद्द के परिणाम को देखकर ही चुकी थी । उनका स्वप्न टूट चुका था और उनमें अपने आराम-सम्पन्न के भाव जागृत हो गए थे ।

३४ नम्बर की पल्टन को तोड़ दिया गया और उसने सिपाही और अफसर पदच्युत होकर अपने-अपने घर चले गए । हम पल्टन के साथ जो मुमुक किया गया उसका दूसरों को पता ही न लगा । न दूसरी सेनाशा में उसकी कोई प्रतिक्रिया ही हुई न उसकी कोई चर्चा हुई ।

परन्तु उस पल्टन का एक सूपेदार मजर जो बास्तव में पल्टन के विद्रोह का नेता था और जिसे अधिक अपमानित किया गया था, चुपचाप घर जाकर नहीं बैठा । उसने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह करने का पेशा अपना लिया । वह आदमी कान्यकुब्ज ब्राह्मण था और अमिया जिस का निवासी था । वह सैद्धिक जीवन अपनाने से प्रथम कथावाचन और पुरोहिताई का काम करता था । वह काम उसके घरने का पुस्तनी पेशा था । उसने संस्कृत पढ़ी थी और संस्कृत क रमोच मधुर स्वर से पढ़ता था । कथा-वार्ता पुराण-वाचन में वह पटु था । उसका पिता अपने प्रान्त का प्रसिद्ध ज्योतिषी और कथा वाचक था । उसने यह काम अपने पिता से सीखा था । परन्तु वह किशोर बय में ही घर से भाग कर कम्पनी की सेना में भरती हो

था और अपनी वीरता साहस तथा प्रतिभा के कारण उन्नति करके सूबेदार मेजर बन गया था। सेना में सभी लोग उसे पाण्डे के नाम से पुकारते थे और उसे अपना दफ्तर ही नहीं भेजा भी मानते थे। उसका नाम गोपाल था। कुछ भोग उस गोपाल महाराज कहते और बहुत अधिक गोपाल पाण्डे कहते थे। सेना में भी वह पूरी ब्राह्मणोचित निष्ठा से रहता। नित्य सध्या-धन्यन करता, तिलक-छाप लगाता स्नान-पूजा यथाविधि करता और अवकाश में कथा-वार्ता कथा-वार्ता से सैनिकों का मनोरंजन करता रहता था। वह किसी से दान-दक्षिणा नहीं लेता था। कोई देना चाहता भी था वहवा था कि अब हमने सेना में सिपाही होकर ब्राह्मण धर्म त्याग दिया क्षत्रिय धर्म अपना लिया इससे हम दक्षिणा के अधिकारी नहीं रहे।

परन्तु उसमें अति उग्र ब्राह्मणत्व था। वह अपने को सर्वश्रेष्ठ समझता था। धर्म सस्कारों का वह समर्थक और प्रशंसक था। अपनी सेना में वह केवल वीरत्व ही नहीं—निष्ठा धर्म और धारणा सम्बन्धी उपदेश भी देता रहता था। बहुधा वह तीक्ष्ण भाषा का प्रयोग करता। थोड़े दौरे पर भी वह सैनिकों की सामत-मसामत करता। उन्हें उपदेश देता और उन्हें निरन्तर उद्दीपन देता रहता था। इसी में सब सैनिक छोटे-बड़े उसका आदर करते उसकी बात आदर से सुनते और उसकी आज्ञा मानते थे। सेना पर उसका काफी प्रभाव था। इसी से जब उमन सेना में विद्रोह की आवाज उठाई, तो अंग्रेज अफसर ने उसी के साथ बड़ी-से-बड़ी बायबाही की और उसी को समा में अनुशासन भंग का सबसे बड़ा दोषी समझा। परन्तु यह पुरुष उन लोगों से भिन्न था जो पेट के लिए दासता करते हैं। वह उन लोगों में भी न था जो अपने को अज्ञान का ममकस्वार समझते थे। बल्कि वही पहला व्यक्ति था जिसने सैनिकों के हित में यह

भाव देता किया कि वे किसी का नाम नहीं खाते, वे अपना घूम बहा कर कृतव्य-पावन करते ह । इस प्रकार उसने सैनिकों में कर्तव्य-निष्ठा और आत्मसम्मान के भाव भर दिए थे और यही कारण था कि वे अपने अधिकारों और प्राप्तियों के लिए विद्रोह करने को आमादा हो गए । अंग्रेजों ने ठीक समझ लिया था कि यह बाह्य ही सब फसाद की जड़ है और इसी से उसे सबसे अधिक बख्श दिया गया ।

परन्तु इस प्रकार अपमानित होकर वह सब लोगों की भाँति घर नहीं बीटा । उसने सोचा—इन विदेशियों के लिए हम भारतीय अपना खून बहाते हैं । अपना घर-दार छोड़कर देश-विदेश में मारे-मारे फिगते हैं और जान जोखिम में डालते हैं । हमारी बबोजत य बिबधी राज्य पर राज्य जब किया जाते हैं और हमी को अपना गुलाम समझते हैं । ये म्सेच्छ, कुमारी शरबी झूठे और कायर विदेशी हम बाह्यमा तक की जान नहीं मानते । हमें जामा और बाछूत समझत है । भला किस बात में हम कम हैं । हमें धारमबोध होना चाहिए । उमने प्रथ किया कि वह देश भर में घूम-फिर कर समिकों को उद्दीपन देगा । उनमें आत्म-सम्मान के भाव भरेगा । उनके मन से दासता के भाव दूर करेगा और उन्हें बीर-संमानी वनान की बाप्टा करेगा । वह अब सैनिकों का पुरोहित बनेगा । यह ठान कर वह मेरठ में निपसा । उसने अपने घर का रास्ता नहीं लिया, बह वही स बुन्वल्पण्ड गया । वह पण्डितों की भाँति एग रामनामी दुपट्टा कंध पर डामे खुटिया डोर लोसे में रन्ने, पीना रामायण और महाभारत की पापी बगम में दावे एक साठी हाथ में लिए सैनिकों में घूमने लगा और असाधारण धैर्य और असीम तत्परता से वह सैनिकों में घूमता-फिरता रहा । कभी-कभी जब सेना के मज्ज अफसरों का ध्याम उसकी ओर जाता, तो वह बुन्देसबाण्ड में जगसों तथा बंगल-

जमुना के किनारों में अन्तर्धान हो जाता और फिर निकल कर अपना काम करता। सेनाओं में उसका नाम प्रसिद्ध हो गया था और सर्वत्र उसका मान और उसकी शर्चा होती थी। वह कृपा-वार्ता करता, कीर्तन करता और अबसर पाकर अंग्रेजों के विरुद्ध सैनिकों को भड़काता। उसके उद्धारण किए सस्कृत के श्लोक बड़े प्रभावशाली होते थे। उसके प्रयास का परिणाम यह हुआ कि सम्पूर्ण भारत की दक्षी सेनाओं में अंग्रेजों के प्रति असंतोष की आग सुप्तग गई और अगह-अगह छोटे-बड़े उपद्रव और सैनिक विद्रोह तथा अनुशासन भंग की घटनाएँ होने लगीं। अंग्रेज भी यह समझ गए कि भारतीय सिपाही अब उनके नमकहसाल दास नहीं रहे। भारतसम्मान से भरपूर सैनिक बन गए हैं।

सन् १८५१ बीत रहा था। अब यह पंजाब में भूम रहा था। अभी यहाँ आए उसे एक मास ही हुआ था कि पंजाब की सारी सेना अनुशासनबिहीन हो गई। इन समय इस पुरुष को पकड़ने की बहुत चेष्टाएँ की गईं—पर वह न पुलिस के हाथ लगा न सैनिक अप्तमरो के। बड़ी बठिन्नाई से सेना को काबू में किया गया।

वह दो बरस तक दिल्ली अम्बामा मेरठ सहारनपुर के सैनिक-बन्दों में घूमता रहा। सोमों को उत्तेजित करता रहा उन्हें साहस दिमाता रहा और सना में बगावत का सूत्रपात करता रहा।

सागा क दिन अंग्रेजों में फिरले जाते थे। वे दिन से अंग्रेजों के विद्रोही होत्रे जाते थे। भोग उसकी बातों से प्रभावित होते उससे सहमत होते पर वे मंजोर और द्विबिधा में पड़ जाते। अब तो सिपाहियों का स्व दमकर उसने पंजाब के सिपाहियों को सत्ताह दी कि उनकी तनवाहें बहुत कम हैं जबकि अंग्रेज सिपाहियों की बहुत अधिक है। उन पर बात-बर्बा का भार है और अंग्रेज सिपाही

बकेले हैं। वे विद्यार्थियों के लिए मड़ते हैं, जबकि अंग्रेज अपना राज्य फैलाने को मड़ते हैं। इसलिए उनका वह उन्हें अंग्रेजों के बराबर ही मिलनी चाहिए। उसने सिपाहियों को समाह दी कि वे मिल कर समकठि रूप में अपनी उनका वह बढ़ाने की इच्छा प्रकट करें और यदि सफलता न मिले तो समकठि विद्रोह करें।

कुछ सोग कहते थे—कि हमने कम्पनी बहादुर का नामक साया है और हमें अपनी नौकरी पसन्द है। नामक का हक अदा करना हमारा धर्म है। जहाँ तक वन पड़ेगा, हम नामकहुरामी नहीं करेंगे। पञ्जाब का वातावरण बड़ा विचित्र था, सिक्ख युद्ध के बाद सिक्खों में बुरी तरह अंग्रेजपरस्ती घुस गई थी, वे उनकी का पीठ गाते थे। दूसरे के सुख-दुःख से उन्हें सरोकार ही नहीं था। इसका प्रभाव भी पञ्जाब की बेसी पल्टनों पर पड़ा और धीरे-धीरे पञ्जाब में तैनात पल्टनों की उमेजना समाप्त हो गई। रेजीमेण्ट पर रेजीमेण्ट बदस्तूर आती और पसी जाती। ६६ न० की पल्टन की बर्से उतरबा ली तो उसके बाद तो एक प्रकार का आठक-सा सेना पर छा गया और वे इतने डर गए कि विद्रोह की भावना एक प्रकार से बब ही गई।

गोपाल पाण्डे पञ्जाब में निराश होकर सौटा और फिर उसने दिल्ली, मरठ, आगरा अम्बाला, सहारनपुर की छावनियों में चक्कर लगाया। उसे यहाँ सर्वत्र अनुरूप वातावरण मिला और उसे प्रसन्नता हुई कि यहाँ विद्रोह की नूमिका तयार है और सोग विद्रोह की बातें करते और चाब से उसकी बातें सुनत है। उसके पुगने बास्त यहाँ समा में थे उन्होंने उसकी सूत्र आबभगत की। बया-बार्ता करई। मए सागों से परिषद कराया और जहाँ-तहाँ समाएँ करके विद्रोह का परामर्श किया। यहाँ की सजा को उसने इतना सजग कर दिया कि बस ज्यों ही एक चिनगारी फूम में गिर

कि धाग भक्त से बस उठे । कुछ सोग तो उससे भी अधिक अभीर हो रहे थे और अंग्रेजों के विरुद्ध सब कुछ कर गुजरने पर आमादा थे । यहाँ उसने हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों को अधिक उत्तेजित पाया । वे चाहते थे कि मुसलमानों का खोया हुआ राज्य फिर मिल जाय । और उनकी जो दुर्दशा इस पिछले पचास वर्षों में हुई है, उसका बदला अंग्रेजों से ल लिया जाय । दिल्ली दरवार यद्यपि एङ्गलन्ड का घर बन गया था दाहजाद अमीर-उमरा और छाही रिस्तदार सब अपनी गिबड़ी पका रहे थे परन्तु दादशाह के प्रति सबकी घटा थी । और अंग्रेज बात-बात पर दादशाह का अपमान करते और उन्हें पदच्युत करने की चप्पा कर रहे थे यह उन्हें खस रहा था । उन्होंने अपनी उत्तेजना को धम का रूप दिया हुआ था और उनके मौमनी मस्जिदों में वाज करस सोगा को उत्तेजित करते फिर रहे थे । अब गोपाल पाण्डे म भी धर्म का हकीसला उठा लिया और वह भी अंग्रेजा पर अनक प्रकार के धर्म विरोधी आरोप सगान सया । उमका यह सया हथियार अधिक फारगर हुआ और सोग जो प्रायः धमनीय थे बहुत सगक हा उठ । गोपाल के मस्तुत क रसोक गीता क प्रमाण और भगवान् के वाक्य इसमें बहुत सहायक मिश्र हुए । वह धारम्यार ईमाइयों के हथकण्डों का बड़ा चक्का कर जिक्र करना और सीधे-सादे सिपाही त्राप और अनूत में सर जाने । अब उमक बहुत-स सभरक भी जगह-जगह उत्पन्न हो गए थे । सिपाही, जा साजारा में जात या छुट्टिया में घर जात—वहाँ में बहुत उल्लेखनामूलक वार्त साथ ल आने थे । वे यहाँ मना में धाग में भी का काम देती थीं

वेतन की कमी भी एक भारी धमलोप का कारण बनी हुई थी । अब इसमें जो धार्मिक दाति की भावना जुड़ गई तो उमने बिशेह को प्रगति दी । हिन्दुस्थानी रजीमष्ट में प्रायः ऊँची जाति के हिन्दू

थे, पर पेट के लिए, विद्वानों के लिए खून बहाते थे । पर अब जब पेट भरने में भी कौताही होने लगी तो उनके मिजाज बिखर गए ।

सन् १८२४ में बैरकपुर में जो नृशम हत्याकाण्ड हुआ था, उससे बच कर जो लोग भाग गए थे, वे अब भी गाँव-गाँव घर-घर जाकर अंग्रेजों के प्रति घृणा और बगावत का प्रचार कर रहे थे ।

जहाँ भी गोपाल पाण्डे जाता सोग उस विद्रोह में मिस कर उसकी योजना के अनुसार सगठित रूप में अंग्रेजों के विरुद्ध धाम जमता और मनामों में प्रचार करने लग जाते । मह आदर्श की बात थी कि ये सोग प्राणपण से इस काम में जुट हुए थे । इन विद्रोही प्रचारकों में कुछ लोग ता ३४ न० की पसटन के थे और बाकी ६६ न० पसटन के जो बाद में बर्खास्त कर दी गई थी । वे सोग जोगी बीरवी, विसागी पण्डे भदुरी ज्योतिषी साँपवाले, बाजीगर मदारी नाच-तमाश वाले बन कर सब तरह के सोयों में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह-भाषना जागृत कर रहे थे । वे राजाओं-नवाबा के दरबार में जाते और अपना काम करते । उनके नौकरों और प्रजा में विद्रोह फैलाते । धीरे-धीरे इन लोगों का एक बड़ा मजमा बनता चला गया जिसका सरदार गोपाल पाण्डे था । सोग पिछली बातों को भी याद करते थे और ताज रंग और क्रोध के कारण भी उत्पन्न होत जात थे जिससे उत्तेजना दिन-दूनी रात चौगुनी बढ़ती जाती थी ।

अब गोपाल पाण्डे बंगाल में गया तो उसने दस्ता लि वहाँ सब से ज्यादा उत्तेजना और विद्रोह फैला हुआ है और अराजकता के बादल बंगाल में छाए हुए हैं । असल बात यह थी कि बंगाल ही में अंग्रेजों की राजधानी थी और वहाँ नवाबा और रिआया पर सब से ज्यादा कुल्म किए गए थे । कमस्वरूप बंगाल के सब पुराने बराने लबाह हो चुके थे और नए-नए उग्रत होखे जा रहे थे जिन्हें हिन्दू

नीच जाति का समझते थे और उनसे भूषा करते थे। वे नए राजा-रईस, पुरानी हिन्दू प्रथा और हिन्दू-धर्म के भी विरोधी बन गए थे। शासक ब्राह्मण समाज ने पुराने ब्राह्मण-धर्म पर कुठार चलाया था। मद्यपि इसन बगाम में मया जीवन दिया था परन्तु रुढ़िवादी कट्टर हिन्दू इसका विरुद्ध थे और इसका कारण अंग्रेजों ही को समझते थे। बगाम में ही ईसाई मिशनरी भी बढ़ा जोर दिये थे। इस कारण बगाम में सब की यह राय थी कि अंग्रेजों को जो इस सब अपर्म और उत्पात के कारण है देश से निकाल दिया जाय और धर्म को नष्ट होने से बचा लिया जाय। सब जावजा ऐसी भविष्यवाणियाँ की जा रही थीं कि समूच बंग में एक ऐसा विप्लव किया जाय जो अंग्रेजों का तन्त्रा ही उसट दे।



१७

सन् १८२४ में बरकपुर में ३४ म० पल्टन का जो कलेआम हुआ था उस घटना को पाठक भूसेन हानगे। उस समय यह कलेआम केवल इसलिये हुआ था कि सिपाही अपनी तनखाह बढ़वाना चाहते थे। वे बस चार रुपए या साढ़े छह रुपए माहवार में उनकी तथा उनके वाम-बच्चा की गुजर नहीं हानी थी तथा समुद्र-यात्रा करने से उन्हें धम मचट होने का भय था। ये सब उच्चभूमिीन पूब के ब्राह्मण थे। नता इनमें किसी प्रकार का अग्रजा से विद्रोप था, न किसी प्रकार के विद्रोह की भावना। एमे भी कठिन अक्षर आए कि मुद्र-क्षत्र में राजन कम हो गया और उन्होंने स्वयं माँड़ पी कर चावल गोर्गे को

दे दिया। वे न शराब पीते थे न गारे सिपाहियों की भाँति छावाराण्ड थे। वे सम्य सिष्ट और अनुसासनप्रिय सैनिक और सीधे-साधे धर्मभीरु सद्गुह्य्य थे। साधारण कुलियों में भी उनके बतन कम थे, यही आबाज उठाने पर उन्हें गोसियों में भून दिया गया था।

आज उन बातों को तीस बरस बीत चुके थे। परन्तु सिपाही उस घटना को भूल न थे। यद्यपि जिन लोग न वह घटना आँखों से देखी थी उनमें बहुत कम लोग अब जीवित थे पर वह नृधंस कत्ले आम सागाँव मुसाँ परतैर रहा था। और अब उनके मन में यह भाव उत्पन्न हो रहा था कि क्या कारण है कि हम भार ह्यए या साढ़े छठ ह्यए माह्वार पर इन विदेशियों के लिए अपने प्राण दें। उनका मन में अब गोरी और साहब भोगा की पुरानी मक्ति न रह गई थी। वे उनके सौकर हैं नयकन्धार हैं, यही भावना अब इस मई पीढ़ी के तरुणों में न थी—वे अब यह भी समझत थे कि हम ब्राह्मण हैं। धर्म निष्ठ हैं। हम नौकरी करते हैं, अपना खून पेट है। पर गुलाम नहीं हैं। धर्म नहीं बँये। बहुधा ऐसी बर्षा भी होती थी कि अब यदि कोई ऐसी घटना घटे तो हमें बारतापूवक अपनी रक्षा करनी चाहिए तथा धर्म की रक्षा ता हर तरह हमें करनी ही चाहिए।

एसे ही वातावरण में गोपाल पाण्डे एक दिन भूमदा-फिरदा बैरकपुर की छावनी में आ पहुँचा। रामनाम का दुपट्टा भाङ्ग तिनक छाप माथे पर लगाए और लम्बी चाटी सिर पर फटकारे गाँजे की मिजई और माटा चमरी था जूता पहने, टटटू पर सवार, साटा हारी और सत्तु की पाटसी मोप में एर हुए गोपाल पाण्डे ने छावनी में जा कर पूछा—इन सिपाहियों में कोई पाण्ड भी ह ? सिपाहियों द्वारा अपना परिचय पूछे जाने पर उसने बताया—कि कर्मी तुम न माम मुना हो न गोपाल पाण्ड हैं। मैं सिपाहियों का पुराहित हूँ।

सिपाहियों में धर्म-बर्बाद करना और कथा-बातों करना मेरा पेशा है । गोपाल पाण्डे का परिचय सुन कर बहुत से सिपाही उसके चारों ओर आ जुटे । उसके नाम की ख्याति से सुन चुके थे और उन्होंने कई बार उसे बुलाया भी था । उन्होंने उसकी बड़ी खातिर की और उस मंगल पाण्डे के डरे पर स गए । मंगल पाण्डे ने गोपाल को अपने यहाँ डेर दिया ।

गोपाल ने पूछा— “कहाँ के पाण्डे हो जवान ?”

“हम बसिया जिले के हैं महाराज ।

‘कौन आस्पद कौन गोत्र ?

‘ब्रह्म आस्पद और शांडिल्य गोत्र ।

अच्छा तो बीस बिस्व के पाण्डे हो छत्तीस बरों के मुस्तिया हो । घर पर क्या-क्या होता है ?

‘जिजमानी पुणेहिताई है महाराज । आस-पास सब ठाकुर, क्षत्रिय वैश्य मुनार हमारे ही जिजमान हैं ।”

‘तो तुमने बीस बिस्व के पाण्डे हो कर क्षत्रिय-धर्म काहको अपनाया काहको तनवार पकड़ी ?

‘यह भी इज्जत का काम है पाण्डे जी । ब्राह्मण का धर्म भी तनवार पकड़ने का है । आप तो सब धर्म-शास्त्रों के पण्डित ह मही जानने द्रोणाचार्य ने भी महाभारत में युद्ध किया था ।

“किया था । पर ब तो बीरब-पाण्डेवा के गुरु थे । राजा और राजकुमार उनके पर पूजते थे क्या वे अंग्रेज तुम्हार भी पर पूजते हैं ?”

‘महीं पूजते । पर यह तो महाराज कसियुग है । यहाँ धर्म-धर्म का निबाह होना मुश्किल है ।

ता बों कहो, बीस बिस्वे के पाण्डे हो कर रोटी क एग टुकड़े के लिए तुम ने फिरगियों की गुलामी की है। धर्म-धर्म रहे बाह जाय।

'ऐसा न कहो महाराज गुलामी हमने नहीं की है। हमने सुन बेचा है धर्म नहीं।

'और यदि धर्म जाय ?'

'प्राण भले ही जाय पर धर्म न जाय महाराज।

'यह किस का कौस है ?

मगल पाण्डे का कौस है महाराज तुहाई इन धरणा की — उसन गापाल के धरण पकड़ कर भपय सी।

अच्छी बात है पाण्डे म भी बीस बिस्वका पाण्डे हूँ। याद रखना हम मल ही काम क्षत्रिय का करें—पर हे ब्राह्मण। और ब्राह्मण हिन्दू-धर्म का मामिक होता है। वह म तो खुद धर्म से डियगा म दूसर किसी को डियन देगा। समझे।

खूब समझ रला है महाराज। हम एग नमक हलान्त चाकर नहीं हे। बीस बिस्वे के पाण्डे हूँ। हमारे बाप-दादा ने धर्म पर बड़-बड़ कर वाने बी। समय आबगा तो हम भी दिपा देंग कि पाण्डे में कितना दमकतम है।

'जीत रहो मगल, जीत रहा भैया। ब्राह्मण का एसा ही करना चाहिए। अच्छा आज रात हमारी महामागत कराव। मय छोटे बड़े सिपहियन को बुलाव। आज एकादशी है। हमारा निजम रात है। पवित्र दिन है—आज हम सवन का गीता का ब्रह्मज्ञान बछाएँ जो भगवान् म खून को बताना का।'

'धन्य भाग हमारे महाराज मैं सब बन्दोदस्त कर दूंगा। निजम रात तो हमारा भी है। फिरगिया की नौबरी बरत ह। मूस धर्म-धर्म तो हमारे साथ ही हूँ।'

‘यही बात है पाण्डे मगर एक बात और है ।’

‘वह कहो महाराज ।’

‘दखो विश्वास की बात है पाण्डे हमारे तुम्हारे बीच गंगा है ।

“अरे महाराज यह क्या कहते हो । मगस के प्राण आपके हैं ।

‘तो देखो जा अपने दास आदमी हैं, उनको कषा-वार्ता के बाव फनाहार के बहाने रोक सेना । मुझे उनसे एक भेद की बात कहनी है । देखना—ऐसे आदमी हों जो एक जान दो कामिब हा । बात फूनी तो जान नहीं बचेगी ।

‘महाराज आप मेक चिन्ता न करें आपका मतसब में समझ गया । में ऐसा बन्दोबस्त करूँगा कि किसी को कानोकाम खबर न पड़े ।

‘तो मगस भैया ऐसे भरोसे के कितने आदमी हैं तुम्हारी पस्टन में ?’

आदमी तो बहुत हैं । पर आठ ऐसे हैं जो जान जाम पर खवान नहीं हिसा सबसे ।

सब बाह्यण हैं ?

छह बाह्यण हैं दो खत्रिय हैं ।

‘कोई हर्ज नहीं । तुम उन्हें जाकर कह दो । आज एकावधी है । महाभारत की कषा-वार्ता होगी । गीता का ब्रह्मज्ञान होगा । सबक पीछ फनाहार होगा । उन्हें फनाहार के लिए राक सेना । कषा-वार्ता में सब को मुसाध्रा ।

“मे सब बन्दोबस्त कर भूँगा महाराज ।

‘तो मगस में गंमाम्नात का जाता हूँ । वहीं सध्या-बग्दन कर तीसर पहर तक सौदू गा । हूँ कषा-वार्ता की बात अफसर स कह बना । गुप्त मत रक्षना ।

“तहीं महाराज, अफसर हमारे बहुत अच्छे हैं। उमकी मेम साहब ब्राह्मण की बेटी हैं। बंगालिन हैं। साहब की मेम हैं जकर, पर धर्म कर्म में ब्राह्मण ह। देबी क्य हैं। ब्राह्मण को बहुत मानती हैं।”

अच्छा ऐसूंगा इस ब्राह्मणी को भी। तुम मरे खाने की बात उमके कान में भी डाल देना।”

‘जकर महाराज।

गोपाल पाण्डे अपने टटटू पर सवार हो गंगा को चम दिए। और मगध पाण्डे अपने बन्नावस्त में जुट गए।

★

१८

कथा-वार्ता का प्रोग्राम बड़ा प्रभावशाली रहा। ३४ मन्वर पन्टम के सब सिपाही जमादार, हकनदार, दगी अफसर आए, सबक बीच आसन पर तिलक-छाप लगाए। रामनामी बोड़ गोपाल पाण्डे ने बड़ी मार्मिक शमी में प्रबचन किया। महामारत क उद्योग पत्र के कुछ वर्णन किए। अधिमन्यु क रणपत्र में अधियान का ओजपूर्ण वर्णन किया। अन्त में गीता क कमयोग ब्रह्मज्ञान और अनासक्ति याग का वर्णन हुआ। मून कर दयक, आशा मुग्ध हो गए। वारंवार बे धस्य कहत। कुछ की आँखों से आनन्दामु बह जैसे। कुछ भाषा पत्र में रायागापाल रायागापाल कह कर भाव पीडित हो गए, कथा समाप्ति पर भयवान् का पूजन हुआ, चरणामृत बँटा और अपनी अपनी हँसियत्र क अनुसार दक्षिणा द-नेकर सब सिपाही गोपाल पाण्डे का नमस्कार-प्रणाम कर अधम-अधम इर पर गए। मगध पाण्डे न केबल उन्हें ही रोक लिया जिन्हें पारण करना था तथा जिन्होंने

व्रत किया था। वे कुस जमा आठ आदमी थे तथा सभी की आयु ४० से ऊपर थी।

जब बाहरी सब मोग चले गए, और वे आठ आदमी तथा मगम और गोपाल कुस बस आदमी रह गए, तो भीतर के भाग में गोपाल ने उन्हें से जाकर बात की।

गोपाल पाण्डे ने कहा—

‘सब सिपाही हैं ? या कोई अफसर भी ?

‘चार सिपाही हैं दो हवमदार और दो सूबदार।

‘और मगम तुम्हारा क्या दर्जा है ?

‘मैं तो एक सिपाही हूँ पाण्ड जी।

अच्छा ता इन सब के नाम बताओ। इनका परिचय दो।

पाण्डे ने सब का नाम विवरण सहित मुना दिया।

कुछ देर मौन रह कर गोपाल ने कहा— ‘पाण्डे मने कहा था कि मुझे कुछ गुप्त बात कहनी है वह इसके सामने कहूँ ? इन पर विस्वास करें ?

‘अगर कहा महाराज।’

अच्छा ता सब कोई गंगा-जल छू कर कमर लाएँ कि बात गुप्त रखेंगे और तन-मन में एव रहेंगे। पाण्डे ने गंगा जल की पीपी निवाय कर आगे रज दी। सब ने गंगा जल छू कर कमर बाँधे। बात-बरण अत्यन्त गम्भीर हो गया।

धीरे-धीरे गोपाल पाण्डे ने कहना आरम्भ किया— ‘माइयो ! तुम यहाँ मोरारी बरस धाए हो और मैं तुम्हारा घम तुम्हें यहाँ बताने आया हूँ। तुम जानत हा घम मोरारी से बड़ा है। तुम्हें तन-बाह पा सामय है पर मुझे किसी बात का सामय नहीं है। मैं तुम्हें मारि समझ कर घम की गद् दिवाने धाया हूँ। अरे देगो—

य फिरंगी तुम्हारे ही मुल्क में तुम्हारे मालिक बने बैठे हैं और तुम अपने ही घर में उनके गुलाम हो । ये तुम्हें चार रुपन्नी देते हैं और तुम्हारा खून सेते ह भसा कहो—यह कैसा सौदा है ? ऐसा सुट रहा है । रई, तम रेघम सब विसायत ल गए । तुम्हारे पत्न क्या पडा ? दसो तो वे जसाहे जिनके बनाए महीन वस्त्र वधा-वधा में सरनाम से भव अपने हाथ के अंगूठे कटवा-कटवा जहाँ-तहाँ मिहनत मजूरी करके पापी पेट की ज्वाला बुझा रहे ह । उनके घर-दार सब उजड़ गए । गाँव बीरान हो गए । पुरान रईस मिट्टी में मिस गए । सूडा की हबलियाँ कसकल में आकास झूमती हें और ये फिरंगी, जिन्हें न सुभर से परहेज है न गो माठा से—आ न हिन्दू न मुसलमान, क्या मज स बगसा में छूटे घोड़ पर सवार हो कर सैर करने और मौज-मजा करने हें । उनके घर रोज दिवासी चूठी है । किसकी बदीमत ? तुम्हारी भाइ की लसवार की बदीमत । मुल्क तुम जीतल हो पर राजा व होते ह । यह कैसी बात ! मुल्क तो हिन्दुओं का है मुसलमानों का है य कौन न तीन में न तरह में । भाइयो ! ओखे खासा खेतो । अभी भी समय है । इन गारे शतानों को अपने मुल्क से निजाम बाहर करा । मुसलमान हमें छूटत थ सही—पर दन का घन दन में ही रहता था पर यह ता सात समुन्दर पार से भाग । देखो तो भसा नमक और अफीम पर भी महसुस । साँसी का राजा मर गया है । उसमे शके व साथ अशकी निजान किस पर सगाया । इसलिये कि अशक उमक वास्त हें । पर दना ये कैसे दोस्त निकसे । उसकी रानी को किसे से निकाल कर बाहर किया । बट का बटा मही माना । क्यों भाई, अब तो तुम्हारा बेटा भी नहीं बसगा । भगवान मे गोद न भरी ता गोद नहीं से बसत । नरक में पड़ रहना होया । राम राम, यह तो मुसलमानों से भी बुर राजा

हैं। देखो तो सतारा हड़प लिया। शिवाजी की सन्तान पर तमाशा। अथर्व के बादशाह को गद्दी पर से उतार दिया। नागपुर भी हजम कर लिया। अरे भाइयो! तुम्हारे बदन में खून है या नहीं। बदन सा। अब भी समय है। उठाओ तमबार और दिखा दो इन्हें उसका जोहर। खूप रहने का समय नहीं मारा! समय न दारम्भार। ब्राह्मण का बचन प्रमाण। अंग्रेजों के खून से हाथ रगो। सुना नहीं तुमने बिलायत की मसकामे हुकम दिया है कि अब कसकत्ते की कासी भाई पर गो-रक्त चढ़ा करेगा। देखो कितनो का धर्म समुद्र पार उतार कर बिगाड़ दिया, अब क्या है। वीन के रहे न पुनिया के। चलो! चेतो!! वर्ना अब कासपानी भोज जाओगे। इसी वैरकपुर में कैसा कल्लभाम हुआ था। जानत हो? क्या अब फिर उसी की इन्तजारी कर रहे हो? अब तो न कोई ब्राह्मण रहगा न क्षत्री। तुम्हारी भीसाव की जात गई। अब क्या रस्ता है। कसम ल्हाओ कि अपना खून वहाएँगे—पर हुकम गोरों का न मारेंगे। तो वस खून बहाने को तैयार हो जाओ। अरे, में तुमसे कह रहा हूँ। ब्राह्मणों से, क्षत्रियों से। कोई मंगी-बमारा से नहीं कह रहा हूँ। जब तुम समुद्र पार से सौटोग तो तुम्हारी जात बसी जाएगी। तुम्हारे बाल बच्चों की पानी कहाँ हागी? देखो तो नया कानून बनाया है। अब तो ब्राह्मण-क्षत्री सब की बिधबाएँ फिर न ब्याह करेंगी। राम-राम। अब सती भी तो कोई नहीं हो सकती। जम्म भर रौड़ हाकर बठे। कभी राजपूठ अपनी बहू पराई बना सकता है? कहा तो मत्ता! फिर ब्राह्मण का धर्म कहाँ रहा? अब तो तुम्हारी गैरत भी गई। दीन-धम बसा गया। तुम नष्ट हो चुके।

अब कहा बसब का टीका किसके माये पर भोगेगा। मारा हिन्दुस्तान इन पिरंगियों ने फटह कर लिया। तो मई अब भोजे

की सड़क बन गई है और सार लग गए । भारत की भूमि बाँच ली गई । यह नया गोरखधन्धा है । यह मोहों की पट्टी कस तक जब पहुँच जाएगी, तो तुम्हारे सब दास-बन्धु उसमें भर-भर कर कस मँज दिए जाएँगे । यहाँ अंग्रेज बन्धु रहेंगे । अरे माइया अब मत जाओ । इन अंग्रेजों को बल्ल कर दो । सो, यह गीता की पोथी है । इसे छुकर कसम खाओ । मैं मारे हिन्दुस्तान में घूमता रहा हूँ । मुझे बारह बरस हो गए । अब सारे हिन्दुस्तान में भाग लगने वाली है । चिनगारी रखने की देर है । यह घड़ा का होगा कि इन फिरगियों का नामोनिधान न रहेगा । सारे हिन्दुस्तान की फौजों ने इसी गीता को छुकर कसम खाई है । तुम भी कसम खाओ । सब मेद गुप्त रखोगे । बकत का इन्तजार करोम और ज्यों ही ज्वाभामुक्ती फटेगा तुम भी तंगी तसवार लेकर उठ सड़े होये । बोसो जय कालीमाई । जय काँगड़ वाली ज्वाभा माई । बस मुझे कालीमाई की जाम है । कालीमाई मे मुझे भेजा है । उसीके हुक्म से मे काम करता हूँ । मर दो सप्पर कालीमाई का इन अंग्रेजों के बून से । अंग्रेज बकेस है । अपने मुक्क से दूर हूँ । इनका आदमी कम है । मे ईरान और बस से सड़ रहे हैं । बस यही मीका है । सा, खुसी गीता महारानी को खौर कसम खाओ । फिर में जाऊँगा बनारस इलाहाबाद कानपुर और मेरठ ।'

सब धाता सज्जे की हासत में बे । पहले मगस पाण्डे ने और फिर प्रत्यक ने गीता छुकर प्रतिज्ञा की कि हम सँवार हैं, तयार रहेंगे सब बात गुप्त रखेंगे और समय पर दा-दो हाथ निभाएँगे ।

दुमदा ने गुना एक मैट्रिक ब्राह्मण बरक में आया है। मंगल पाण्डे के डेरे पर ठहरा है। भागवतपुराण बौद्धता है। गीता के कर्मयोग की खास टीका करता है। रास उसने प्रवचन किया था। बहुत अच्छा बसाता है। दुमदा को ऐसे पुरुष से विद्यप मगाव था। उसने उसे अपनी कोठी पर बुला भेजा।

गोपाल पाण्ड भी उसने मिलने को उत्सुक था। वह गया और बरामदे में लड़ा हो गया।

दुमदा ने बाहर जाकर पाण्ड की हंस कर धम्यधना की। उसने कहा— 'ब्राह्मण की बेटी हूँ मरे पति अवश्य अंग्रेज हूँ पर मैं हिन्दू हूँ। गुना है आप बड़े भारी विद्वान् हूँ। शास्त्रों के ज्ञाता हूँ। आइए हुपा कीजिए, कुछ मुझ भी शास्त्र की बात सुनाइए।

आप क्या सुनना चाहती हैं ?

आप भीतर आइए तो सही।

गोपाल भीतर जाकर एक चौकी पर बैठ गया। बैठ कर उसने कहा। कहिए आप मुझसे क्या चाहती हैं ?”

'बुद्ध मुझे भी धर्म-ज्ञान कराइए।

आप को उससे बुद्ध नाम न होगा। जिस बोध से बचने के लिए धर्मज्ञान सिखाया जाता है वह बात तो आप कर चुकी।

'यानी एक अंग्रेज से विवाह ?

'हाँ।

'क्या आप मरे दुर्भाग्यपूर्ण जीवन से परिचित ह ?

सब सुन लिया है।

'ठा आप क्या समझते हैं—कि मेरा जितना पर जस मरना ही ठीक था ?

“मैं तो यही समझता हूँ ।”

“किस अपराध से ? भसा सुनू तो ।

अपराध की बात तो तब उठती है, जब कोई दण्ड दिया जा रहा हो ।”

“एक निरपराध लघोध बासिका को जीवित जसा देना आपकी समझ में क्या है ?

कोई आप को जबरदस्ती गह से उठा कर तो जमाने ल नहीं गया था । आपके पति की मृत्यु हो गई थी—और धर्म की रू से आपको उसके साथ सती होना आवश्यक था ।

‘मैंने उस पति को और उठा कर देखा भी न था । मुझसे इस विवाह की स्वीकृति भी न ली गई थी । न मेरा उस पति नामघाटी व्यक्ति से कोई सम्बन्ध ही रहा ।”

‘तो इससे क्या ? क्या आप उस पति की पत्नी होने से इन्कार कर सकती हैं ? आप यह कह सकती हैं—कि वह आपका पति न था ।”

‘मैंने न तो अपनी स्वीकृति ली थी न मुझमें उस समय इन बातों का ज्ञान था कि मैं जानूँ कि पति क्या है और पत्नी क्या है ?’

‘तो फिर आप ही कहिए कि आप क्या राय दे सकती थी । खैर । उस समय तो आप फिर भी आठ वरस की बालिका थी कुछ-न-कुछ समझती थी । परन्तु जब आपन जन्म लिया था—और आप केवल एक नवजात शिशु थी तभी अनिवार्य रूप से एक पुरुष आपका पिता बन गया, दूसरी स्त्री माता बन गई । आपके माता पिता न पुत्र-पुत्री आप न भाई-बहन बन गए, उनसे सम्बन्धी आपके चाचा, ताया चाची, ताई बन गए । और जया ही आपन बोलना पहचानना सीखा, आपने बिना विरोध उन्हें उम्मी रिक्तों से सम्बोधन

करना आरम्भ कर दिया । फिर जब इतनी समझदार जानी स्त्री होने पर भी आप इन सम्बन्धों और रिश्तों को मस्वीकार नहीं कर सकती । आप यह भी नहीं कह सकती कि मरी स्वीकृति इन रिश्तों के लिए नहीं भी गई थी । इसलिए मैं उन्हें चाहूँ तो माता पिता भाई-बहन मानने से इन्कार कर सकती हूँ ।

‘इन रिश्तों की बात जुदा है पर पति-पत्नी के सम्बन्ध की बात जुदा है ।

‘जुदा क्यों है ?

पति-पत्नी तो जीवन-साथी होते हैं ?

जीवन-साथी ? म तो ऐसा नहीं मानता । मने हिन्दू धर्मशास्त्र पढ़ा है वे तासोक-सोकान्तर के जन्म-जन्मान्तर के साथी हैं । हाँ—माता-पिता भाई-बहन अवश्य इसी जन्म के साथी हैं । परन्तु जब इनका अटूट और अविच्छिन्न सम्बन्ध है तो पति से क्यों नहीं । आप यह क्यों नहीं मानती कि यह पति भी जन्म-जन्म का साथी था । समय और भाग्य से वह विछुड़ गया अब आप दूसरा विवाह कर कैसे सकती हैं ? आपका तो पतिगामिनी होना चाहिए ।’

आप यह तो मानेंगे कि पति-पत्नी का सम्बन्ध उनके अपने मुल-बुन का सम्बन्ध है ।

‘मैं तो नहीं मानता ऐसा । ऐसा होता तो फिर विवाह का इबासना ही क्या ? यह तो सामाजिक सम्बन्ध है व्यक्तिगत नहीं । इसलिए हम मामल में सामाजिक और धार्मिक नियम पालन किए जान चाहिए, व्यक्तिगत नहीं ।

बड़े विचित्र रुढ़िवादी विचार हैं आपके इन मामला में ।”

मर तो अपन कोई विचार नहीं है । धर्मशास्त्रों के विचार हैं । इन विचारों की सत्ता स्थापित होने में हजारों वर्ष लगे हैं ।

हजारों धनुमद बड़े-बड़े मुनियों को हुए हैं। जीवन-धर्म लोक-परलोक समाज सब बातों पर ध्यान करके उन्होंने ये नियम बनाए हैं। साधारण पुरुषों को उन नियमों का उत्सर्जन करने का अधिकार नहीं है।”

‘बड़े आदर्श की बात है कि आप नौ वर्ष की एक अबोध बालिका को उसका मृत पति के साथ जीवित जसा देने जैसे कर्म का समर्पण करते हैं।’

इसमें भी अधिक क्रूर कर्म हैं जिसका हमें समर्पण करना पड़ता है। युद्ध-क्षेत्र में मरन-मारने की परिपाटी कितनी प्राचीन है। सो यह कितना क्रूर कर्म है। फिर मरन-मारने वाले सिपाहियों का एक पैसा बना देना कितना क्रूर कर्म है। सम्पूर्ण युद्ध में शत्रु पर जिसने व्यक्तिगत रूप में कोई शत्रुता नहीं की उसका काबार करना कितना क्रूर कर्म है। पर ये सब क्रूर काम अनन्तकाल से होते रहे हैं, समाज की भलाई के लिए। उनकी अपेक्षा तो एकाध अबोध बालिका का पिता पर जसा दना किसी गिनती में ही नहीं है। अब यदि सिपाही कहे कि—हमें क्यों मरने के लिए युद्ध में भेजा जाता है ता राज्य व्यवस्था जैसे काममें रह सकती है। इसीलिए—समाज में जीवन भी है—मृत्यु भी है। जैसे जीवन की आवश्यकता है—वैसे ही मृत्यु की भी है। इसीलिए स्त्री हा या पुरुष—उसे कमी-कमी इस प्रकार अस्वाभाविक रूप में मरना ही पड़ता है। और वह असाधारण मृत्यु साधारण मृत्यु से बढ़ कर यज्ञस्वामी मानी जाती है। युद्ध में मरने वाले वीरों को सूर्यलोक मिलता है। देवता उनके लिए बिमान भेजते हैं और पति के साथ चितारोहण करने वाली स्त्री स्वर्ग पाती है, पति-साक जाती है।”

“क्या ये सब इकोसमे अल्पविश्वास की बातें नहीं हैं ?”

“हो सकती है। पर इनके बिना तो काम चलता नहीं न। यारों ही समझ सीजिए कि मिथी के साथ भीठी कर के कड़वी दवा खी जाती है।

‘पति के मरने पर स्त्री दूसरा विवाह करने में स्वतन्त्र है।

‘वह विवाह न करे तो भी किसी पुरुष के साथ सम्बन्ध करने में स्वतन्त्र है। पर वह सामाजिक सम्बन्ध नहीं ध्यमिधार कहाएगा। इसी प्रकार युद्ध से प्राण बचा कर भाग आने में सैनिक स्वतन्त्र है पर वह वीर नहीं कायर कहाएगा।

‘तो आप क्या मृत्यु न इतने पदापाती है ?

‘इस प्रकार की असाधारण मृत्यु, जो कर्तव्य और मर्यादा के आधार पर स्त्री-पुरुषों को वरण करनी होती है बलिदान कहाती है। इन बलिदानों से समाज का कल्याण होता है। समाज की जड़ें मजबूत होती हैं। यदि यह भी मान लिया जाय कि घम स्वर्ग की वार्ते बखोसना है तो भी समाज की वार्ते बखोसना नहीं बही जा सकती। यदि किसी दम में योद्धा जन्म ही न लें या वीरपुरुष कर्तव्य ही न पानन करें तो उस देश की सुल-समृद्धि कायम न रहेगी। आप जानती है कि विद्वान की बड़ी-बड़ी प्रभावशाली घटनाएँ युद्ध के परिणामस्वरूप ही हुई हैं। इसी प्रकार स्त्रियाँ यदि स्वेच्छा से पतियों को अद्रमती-वामती र्हें तो समाज की मर्यादा कायम नहीं रह सकती।

बँस नहीं रह सकती। पुरुष दूसरा व्याह कर सकता है—तो स्त्री क्यों नहीं कर सकती ?

“दमलिए कि पुरुष समाज का आधार व्यक्ति है। और स्त्री उसकी पूरक है। विवाह के बाद पुरुष अपन घर रहता है—पर स्त्री पति न घर आ जाती है। पत्नी के मरने पर पुरुष दूसरा व्याह

ता है, तो उसके सामाजिक सम्बन्ध टूटते नहीं—अपितु टूटते सम्बन्ध बन जाते हैं। टूटी गृहस्थी जुट जाती है। उबहा परिवार उ जाता है। पर स्त्री यदि दूसरा ब्याह करे, तो उसके सब पूर्व सामाजिक सम्बन्ध टूट कर छिन्न-मिन्न हो जाते हैं। क्योंकि वह कैसे पति ही की पत्नी नहीं है उसके परिवार वालों की भी रिश्तेदार। किसी की चाची, किसी की छान्दी, किसी की भौजाई। ये सम्बन्ध उधारण नहीं ह। समाज के भारी भंग ह। दूसरा विवाह करने र वह सम्बन्ध टूट जाएंगे और समाज भंग हो जाएगा। इसके तिरिक्त एक बात है—आप स्त्री ह आप से कहने में सकोष प्यता है।'

आप की बातें विचित्र ह वाकियामुसी ह—पर प्रमादशासी ह, आप क्या कहना चाहते है, वह कहिए।"

आप आज्ञा देती हें तो कहता हूँ—'हमार हिन्दू-धर्म-शास्त्र में श्री को युवती होन स प्रथम ही वास्यावस्था में ब्याह देन की आज्ञा है।'

"यह प्राचीनकाल में नहीं होता था पीछे से यह घुराई बढ़ाई गई है।

"पीछे से ही सही। पर यह घुराई नहीं है। बहुत बढ़ी भसाई है। जिस साध-भयभर कर ही दूरदर्शी बुजुर्गों में बढ़ाया है।"

"दूरदर्शिता इसमें क्या है?"

वही कहता हूँ। बन्या का युवती होन स प्रथम ही हिन्दू ब्याह देते ह। बह पति घर में जा कर युवती हाती है। इसस एक तो पति के परिवार से उसकी आत्मीयता के सम्बन्ध जुड़ते ह। दूसरी बात यह है कि उसकी सन्तान का पिता—अमुक व्यक्ति उसका पति ही है—इसका अमदिग्य प्रमाण प्राप्त रहता है। अब यदि

स्त्री बिधवा होने पर पति की सहगामिनी नहीं होती—दूसरा ब्याह करती है, तो सन्तान का पिता कौन है—इसके सौ झगड़े लड़े जा सकते हैं । एसा भी सम्भव हो सकता है—कि वह पूर्वपति की गमिनी हो । फिर सम्पत्ति के बँटवारे और अन्य सामाजिक मामलों में ब्यापात पहुँचता है । पिता का असंदिग्ध होना हिन्दू-धर्म का सबसे भारी महत्त्वपूर्ण दृष्टिकोण है । और यह आर्थिक भी है, सामाजिक भी और आध्यात्मिक भी । इसी से एक स्त्री के एक ही पुरुष के संसर्ग में रहने की एकान्त चेष्टा की जाती है ।

‘म आपकी बातों से सहमत नहीं हूँ परन्तु आप बड़े विचारशील हैं इसलिये आपका सम्मान करता हूँ ।’

आप जीवन को अनन्त नहीं मानतीं । शरीर के अन्त तक ही जीवन मानती हैं । मौलिक संसार ही से आप का नाता है । इससे आप मुझ से सहमत नहीं हो सकतीं परन्तु आप एक साहसी और उदार स्त्री हैं मैं भी आपका आदर करता हूँ । बहिये आपकी मैं क्या सवा कर सकता हूँ ।

“क्या आप ज्यादा प्य जानते हैं ?”

“जानता हूँ ।”

“अबिये कह सकते हैं ?”

‘बहु सकता हूँ ।’

‘तो इपया मेरा अबिये कहिये ।’

‘नहीं कहूँगा ।’

क्या ?

क्याकि आप थडावग नहीं कीतूहसबस मह प्रपन करती हैं । साम्त्र कीतूहस निबारण करन के सिए नही होते ।”

आप की बात यथाय है । अशुद्धा एक बात बताइए ।”

‘पूछिए ।’

“आप मेरी सब जीवन-कथा सुन चुके हैं । अब मुझे यहाँ इस स्थान पर इस दवा में देस कर आप प्रसन्न हूँ या नहीं ?

‘नहीं ।’

“मं पिता पर जस मर्दि होती तो सन्तुष्ट होते ?”

“बबन्ध ।

‘बयों भसा ?’

‘ब्राह्मण हूँ निष्ठा की पूँजी से ब्राह्मण का सब कारोबार होता है । आप उस तरह धन मरी होतीं—और कभी मैं इस स्थान से गुजरता और जान पाता तो सती माता कह कर उस पिता भूमि में माया रख आपको प्रणाम करता और भद्रा के खाँसू आपकी भेंट करता ।”

‘किन्तु अब ?’

अब तो मैं केवल आप पर दया कर सकता हूँ ।

धुमदा को एक असह्य भार दवाए डाल रहा था उसने कहा—

“क्या आप साहब से मिलना पसन्द करेंगे ?

‘नहीं ।’

‘क्या ?”

‘साहब लोग हम कामे हिन्दुस्तानियों से मिलना पसन्द नहीं करते । वे अपने को हमसे भय और हमारा स्वामी समझते हैं । परन्तु मैं ब्राह्मण हूँ, मैं ऐसा नहीं समझता ।’

“क्या साहब से आप कुछ चाहते हैं ?

‘कुछ नहीं ।’

धुमदा देवी कुछ वर चुपचाप बसिभूठ-सी लड़ी रहीं । फिर उन्होंने इस रूपसे निकाल कर देते हुए कहा—“मं जानती हूँ कि

आप मेरे यहाँ भोजन नहीं करेंगे। अतः ये रुपये सीजिए, भोजन के लिए देती हूँ।

‘नहीं से सकता। मैं केवल निष्ठावान् ब्राह्मणों का ही अन्न खाता हूँ। बारह वर्ष से मैंने यह व्रत लिया है।

‘मैं भी तो ब्राह्मण की बेटा हूँ।

‘क्या आप मुझसे कुछ माँगती हैं ?

आशीर्वाद दीजिए।

‘कसा ?’

धुमदा क्षण भर चुप रही। एक चमक उसके मन्त्रा में आई। उसने कहा—‘जैसा आप देना चाहें। जसा अपना धर्म समझें।

‘तो आशीर्वाद देता हूँ—तुम्हारा यह मुहाग अक्षय रहे।

धुमदा ने गले में आँसु डाल कर ब्राह्मण की पग-भूमि की ओर गोपाल पाण्डे वहाँ से तेजी से चला दिए।

पहली ही बार धुमदा ने अपने अन्तः जीवन में गोपाल पाण्डे के समान अपने को नगण्य समझा—वह अनिभूत-मी उसके पीछे बरामद तक चली आई। पर ब्राह्मण ने पीछे फिर क देता नहीं वह फाटक गोन बाहर चला गया। धुमदा उसे लड़ी बगनी रही।

ही समय उसने देखा—फाटक के बाहर एक बूढ़े के नीचे एक हीन हीन बूढ़े ब्राह्मण पाटी टके लड़ा एकटक उठी की ओर दग्न रहा है। उसका शरीर पर पूरे बदन नहीं है बिचड़े ह। दाढ़ी उमकी

बड़ी हुई है और कमर झुक गई है। कुछ तो इस समय धूमदा का मन भावुकता से आन्दोलित हो रहा था, कुछ वह स्वभाव से ही दयालु थी। उसके हाथ में दस रुपए थे जो उसने पाण्डे को देने चाहे थे, पर पाण्डे ने अस्वीकार कर दिया था। उसने वीरा को बुसा कर और उसके हाथ में वे रुपए बेकर कहा— 'देखो यह फाटक के बाहर बूढ़ा ब्राह्मण खड़ा है य रुपए उसे दे जाओ।

वीरा रुपए लेकर चला गया। धूमदा वहीं खड़ी होकर ब्राह्मण को देखती रही। पर ब्राह्मण ने रुपए नहीं लिए। उसने कहा— वह इस घर की मामकिन के दर्शन करना चाहता है। वीरा से यह बात सुन कर धूमदा ने ब्राह्मण को भीतर बुलाने की आज्ञा दी। बूढ़ा ब्राह्मण माठी टेकता काँपते पैरों से कुटी मुर्कों पड़ी हुई सड़क पर आगे बढ़ा। अभी वह मुझिम से बीस कदम आगे आया था कि धूमदा ने उसे पहचान लिया और वह इस तरह उसकी ओर दौड़ी जमे गाय बछिया को बन्ध कर डौड़ती है। ब्राह्मण के निकट पहुँच कर वह वहीं सड़क पर उसके पैरों में सोल गई। ब्राह्मण के हाथों में साठी छूट गई। उसने काँपते हाथों से धूमदा का उठा कर हृदय से मगा लिया। अब पिता और पुत्री दोनों मूक मौन रहने लगे थे। यह एक आहत पिता और माय्यविदग्धा पुत्री का मिलन था, जिसकी कभी उन्हास आशा नहीं थी थी। नौकर चाकर और वीरा सब बड़ बन दग रह गये—पर किसी का कृष्ण कहने का साहस न होता था।

बहुत दूर जा धूमदा ने आसू पोंछ कर कहा— "मे लो आपको सपनों में देखा करती थी बापूजी अब आप से मिलने की क्या आशा थी ?"

“जब मैंने तुझे पिता पर बैठने के लिए घर से बाहर किया, तो मैं तेरी ससुरास तक तेरी पासकी के पीछे-पीछे रोता-बसपता जाया था। तेरी माँ तो पछाड़ खा कर गिर गई थी और बहन जोर-जोर से रो रही थी। पर मैं तो तेरे ही ध्यान में सबका भूल गया था। बेटा, मैंने निश्चय किया था कि तेरे ही साथ मैं भी पिता में बूद पड़ूँगा तुझे मैंने कितने भाव से छाती से सगाकर पाला था—और उस दिन तुझ दुःखमु ही को मैं चितारोहण के लिए भेज रहा था। मेरे जैसा निष्कुर पिता कौन होगा भला ? कौन मुझे ब्राह्मण बहू सक्ता है ? मैं तो कसाई हो गया था बटी। और घम के इस दुःख बन्धन ने मेरी आँसू मची कर दी थीं। मेरे सोचने बिचारने की शक्ति मूट हो गई थी पर तेरे साथ जब मरने की मैंने ठान ली थी।

‘मैं किसी को मुँह दिखाना न चाहता था। इसलिए छिप कर मैं वहीं बठ गया जहाँ पिता बनाई गई थी। मैंने देखा मरी बेटा तो रो ही नहीं रही है। मुझे मासूम था कि तुझ पसुरा मिला कर भाँग पिता दी गई थी। फिर तुझे मसे-भुरे का क्या ज्ञान था भला ! मैं चाह रहा था जितनी जल्दी यह काम खरम हो तो ही भला। मैं इस प्रतीक्षा में था कि पिता की ज्वाला सेज हो तो मैं उसमें बूद पड़ूँ। पर इसी समय एक शील मार कर तू पिता से बूद पड़ी। तरे बपड़ा में आग मग रही थी। मेरा बनेजा मुँह को आ रहा था। उन्होंने तुझे पकड़ कर फिर जसठी पिता में झाक दिया। मैं पागल की भाँति झपटा कि तुझे बचा लूँ। पर इतने में ही फिरंगी डाकू आ गए और तुझ से भागे।

हे परमेश्वर ! मेरा घम-बर्म पुण्य सब मूट हो गया। मैंने उन डाकूआ का पीछा किया—पर वे गोमी दागते जा रहे थे। एक गोमी मेरी टाँग में लगी और मैं मूर्च्छित होकर वहीं गिर गया। मैं नहीं

महीं जानता कब तक वहाँ पड़ा रहा । जब होश आया तो पहले तो मुझे समझ ही में न आया कि क्या हुआ होगा । जाग्रत बटना हुई या स्वप्न देखा । पर धीरे-धीरे सब बातें याद आने लगीं । शोक ! कि बस मरने का सौभाग्य भी मुझे न मिला । मेरी बेटि कहीं गई ? उसका धर्म कैसे वधेगा ? यही सोचकर मैं विक्षिप्त हो उठा । मेरे शोक-परमोक दोनो विगड़ गए । फिर मैं धर सौट कर नहीं गया । अपना जनेऊ टोड़ डाला कपड़े फाड़ डाले और वहाँ की भूम सिर पर उछाम ली । फिर मैं वहाँ से यहाँ और यहाँ से वहाँ भटकता फिरा । मेरी टाँग में गोभी लगी थी । मैंने उसका कोई इलाज नहीं किया । बरसों वह बरूम सड़ता रहा फिर आप ही अच्छा हो गया । पैर लँगड़ा जरूर हो गया । आज चौदह वर्ष बीत रहे हैं तब से मैं बेध-भ्रम मारा फिर रहा हूँ । भीख माँग कर इस पापी पेट की प्याला बुझा लेता हूँ । कबस तरी वह मूर्ति, जब तू भीख मार कर चिता से कूदी थी, मेरे मानस-पटल पर छाई हुई है । वह मुझे न मरने देती है, न जीने देती है ।

महा इस बात की भाषा और कल्पना कब हो सकती थी कि मैं फिर तुझे देख सकूँगा और इस रूप में । बहुत दिनोंवाट में बसबत्ता आया । वहाँ एक दिन मजूमदार महाशय से भेंट हा गई । वे मुझे अक में मरने को दीड़े, पर मैं पीछे हट गया । मैंने कहा—“ना-ना मुझे मत भूना मजूमदार महाशय । मैं ब्राह्मण नहीं हूँ, चाण्डाल हूँ, पतित हूँ । फिर कुछ देर हमने आसू बहाए और उन्हीं से मुस तरा यहाँ का पता लगा । तुझे अपनी आँकों से एक बार देख लेने का मोम मैं नहीं संबरण कर सका । आज पन्द्रह दिनों से मैं यहाँ आकर गुवह से घाम तक लड़ा हूँ—पर तेरी सजर मुझ पर नहीं पड़ी । आज मरे नाग्य जागे । मैंने तुझे देखा । मिसना हो गया । बड़ी बात हुई । बस अब जाकर गया में डूब गईंवा ।

शुभदा चुपचाप अपने पिता की यह भीषण बद भरी कहानी सुनती रही। उसमें न जवाब देने की सामर्थ्य थी—न कुछ करने की। उसने सुवक्तियाँ लेते हुए कहा—“पिता यह न हागा। अब आप मुझे छोड़ कर नहीं जा सकते। बसिए, भीतर बसिए।”

नहीं बेटा। तेरे घर भसा मैं कैसे जा सकता हूँ ? कभी ब्राह्मण था—यह अब भी नहीं भूसा हूँ।”

‘हाय रे भाम्य ! जिन्हें विवाह यज्ञोपवीत आदि धनुष्ठानों में बुलात बड़े-बड़े राजा रईस हाथी और पासकी सवारी के लिए भेजते थे—जिनके शिष्य समूचे नविया प्रान्त में फैले हुए वही वीनवन्धु बन्धोपाध्याय आज इस वीन-हीन वशा में पुत्री के सम्मुख खड़ा है। कैसी बिडम्बना है !”

बृद्ध ने कहा— कम-घस इन बातों से क्या ? होंगे कोई दिन वन्धु बन्धोपाध्याय। मैं नहीं आनता उन्हें। मैं एक पतित पापी पुरुष हूँ और गंगा की गोत्र में धरम सेना ही मेरा कर्तव्य है। भगवान् तेरा कल्याण करे। सो मैं यह भसा।

इतना कह कर वह निर्मोही बृद्ध पिता मुँह मोड़ कर चल खड़ा हुआ। शुभदा चिल्लाती ही रही पिता-पिता-पिता—ऐसा न करो। ऐस निर्मोही न बनो। पिता यह तुम्हारी बही शुभदा है एक बार इसकी ओर देखो।

पर बूढ़ा ब्राह्मण अपनी सेंगड़ी टाँगों को जल्दी-जल्दी घसीटता हुआ, ठकी से चल कर गूँघ में बिलीन हो गया। शुभदा मूर्च्छित होकर वहीं भूमि पर गिर गई।

दो दिन के दौरे के बाद मेकडानल्ड कमकलत से सौटे थे । उन्हें अब कमाण्डर-जनरल बना दिया गया था । अब वे अपन सेप्टर के सर्वोच्च सैनिक अफसर थे । वे जर्क-वर्क पोसाक पहन धीरे नए ओहूवे का तमगा छाती पर लगाए, आनन्द और उत्साह से मरे हुए घर में आए । उन्होंने सुना शुभदा सपनागार में है । वे सीधे सपनागार में जाकर बोस— 'बेका-दखो तो शुभदा—यह मेरी नई ड्रेस—मरे समय । और सुना, म मेजर-जनरल बन गया हूँ । क्या तुम खुश नहीं हो ?"

खुश हूँ ।" शुभदा न बुरी हुई आवाज से कहा । मेकडानल्ड न शुभदा के विषय पर ध्यान नहीं दिया । उन्होंने कहा— 'इस बर्षी में कैसा सगता है तुम्हें ?

"बहुत बड़े आदमी सगते हो ।"

"मेरी प्यारी शुभदा, मेरी हर तरफकी में तुम्हारी भी तरफकी है, मेरी बड़ोठरी तुम्हारी ही बड़ोठरी है ।"

"यह केवल तुम्हारे अनुग्रह के कारण । सब पृथो तो मुझ इन कपड़ों में तुम्हें बेस कर डर सगता है ।"

'कैसा डर ?"

"वैसा ही, जैसे किसी छोटे आदमी को होसा है बड़े आदमियों से ।"

"तुम छोटी हो यह तुम से किसन कहा ?"

'मेरी आत्मा में । आखिर, मैं हीन-हीन, अष्ट पतिता स्त्री हूँ ।

'क्या कारण है कि तुम इस समय एसी बातें कर रही हो ? तुम्हारा मुह सूखा हुआ है । बाल रक्त ह । बाकी खोखली

तुम्हें क्या हो गया है, मेरी प्यारी सुमदा ? क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है ? क्या मैं पौत्र के बड़े डाक्टर को बुलाऊँ ?

“डाक्टर की जरूरत नहीं है । मैं बीमार नहीं हूँ ।

“लेकिन तुम्हें हो क्या गया है ? कहां तो क्या मेरे पीछे काई बटना पटी है ?”

‘मेरा मन खराब हो गया है और मैं जरा सोना चाहती हूँ ।

‘तो तुम सो रहो ।’ मेकडामरुड ने यत्न से सुमदा को दिखौने पर मुला दिया और वह चिंतित भाव से बाहर आए । नौकरों के द्वारा उन्हें उन दोनों मुसाकासियों के आने की बात विदित हुई । पाण्डे के सम्बन्ध में वह जानता था । उसे सूचना मिल चुकी थी । पर दूसरा मुसाकाती कौन था—यह वह न जान सके । उन्होंने यह निणय किया कि जब सुमदा स्वस्थ होगी तो उससे बातें करेंगे ।

और रात को जब दोनों भोजन करने बैठे तो मेकडामरुड ने कहा—“सुमदा प्रिये । मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ । तक-सीफ न हो तो बताना ।

‘पूछो ।

“मने मुना मरी गैरहाजिरी में दो आदमियो से तुम्हारी मुसाकात हुई । इस समय जा तुम्हारी तबियत खराब हो रही है क्या उन मुसाकातों का तो परिणाम नहीं है ?”

‘उन्हीं का परिणाम है ।’

‘पाण्डे के सम्बन्ध में तो मैं जानता हूँ । वह सिपाहियां का गुरु है । मरी ही आकास उन घाबनी में क्या-कहाँ कहन की अनुमति मिली थी । मुना है—बड़ा विद्वान् पण्डित है ।’

‘केवल विद्वान् ही नहीं है, त्यागी और निप्टावान् बाह्य है । उन्होंने मुझे मेरे जीवन का सिप सञ्चित कर दिया । अब तक तो

मैं उस काम को बर्खास्त समझ रही थी जो मेरे साथ हुआ, और प्रायः भारतीय हिन्दू विद्यार्थियों के साथ होता ही रहा है। मेरे समक्ष वड़े प्रवक्त सभ्यों में उसने उसका समर्पण किया। मैं नहीं जानती थी कि कोई मेरे विचारों को बिगाड़ सकता है, पर उसने ऐसा ही किया।”

वे भी सुनूँगा कि वह उस मयानक रिबाज के समर्पण में क्या दलील रखता है। मैं आज शाम को उस बुझाऊँगा।”

‘वह नहीं आएगा। मैं तुम से बातें ही करेगा न मुसाकात करेगा।’

“क्या तुमने उससे कहा था ?

‘कहा था पर उसने स्वीकार नहीं किया।’ कहा— ‘इससे कुछ फायदा नहीं है। वास्तव में वह बिल्कुल पुण्य विधारी का हिन्दू है और उसकी बातें बहुत प्रभावशाली हैं।’

“मासूम होता है उसकी बातों का तुम पर बहुत प्रभाव पड़ा है।”

“क्या तुम कल्पना कर सकते हो कि उसने मुझसे क्या कहा ?”

“मैं तुम्हारे मुँह से वह बात सुनना चाहता हूँ जिसने तुम्हें बिभसित कर दिया है।”

“मैंने जब उससे पूछा—कि क्या वह मेरे इस नए जीवन को दख कर प्रसन्न है ? तो उसने मरी नाराजी की विना परवाह किए कहा— नहीं। और जब मैंने बड़कठे हृदय से उससे पूछा—यदि मैं पिता पर उस दिन जल मरती, तो क्या वह प्रसन्न होता ? तो उसने बेपङ्क कहा—हाँ। और जब मैंने उससे इसका कारण पूछा—तो उसने कहा—कि यदि मैं उस भूमि पर कभी जा पहुँचता जहाँ कि तुम सही हो गई होती तो मैं ‘सती माता’ कह कर तुम्हें धरती पर माया टेक कर प्रणाम करता, पढा के मासूम बहाता। परन्तु अब ? उसने कह दिया अब तो मैं केवल तुम पर रह्य कर सकता हूँ।”

पर मैं इन भारतीय ब्राह्मणों की नस जानता हूँ । कुछ खया पाने से उनकी वातचीठ का टोन बदल जाता है ।”

‘ऐसा भी वह आदमी नहीं है । मैं जानती थी कि वह मेरा दुआ कुछ भी खाए-पिएगा नहीं । इसी से मैंने उस खए देने चाहे थे । पर उसने नहीं लिए ।”

“वह खए लिए बिना ही खला गया ?”

वह मुझे आसीर्बाद दे गया कि तुम्हारा यह नया मुहाग बना रहे ।”

“मुझे तो ऐसा तभी से प्रतीत हो रहा है जैसे मंगी तसबार लिए वह ब्राह्मण मेरी रखा यत्न से कर रहा है ।”

आश्चर्य है । मैंने आज से पहले तुम्हें किसी व्यक्ति से इतना प्रभावित होते नहीं देखा था । वह दूसरा बड़ा ब्राह्मण कौन था ?”

“बेचारे भाम्य के मारे मेरे पिता थे ।”

‘क्या ? तुम्हारे पिता थे ? तुमने उन्हें रोका नहीं, खसा जाने दिया ।

१

शुभरा ने मद्गद् कण्ठ से आँसू बहाते हुए पिता-मुनी की उस मुसाकात का जिक्र किया । उसके १४ बरस मटकने की कथा भी सुनाई, फिर सिसकियाँ सेते हुए कहा— ‘मे बरामर की सीकियों पर भी नहीं चढ़े और अब गंगा की गोद में अनन्त बिधाम मेंने को खसे गए ।”

“टहरो मैं उन्हें तमाग करने को सिपाही भेजता हूँ । हमें उन्हें डूँडना होगा ।”

‘मने उन्हें पाकर गो दिया । अब तुम उन्हें डूँड कर न जा सकोगे ।”

‘परन्तु शुभदा, हमारे रहते उन बुजुर्ग का इस प्रकार प्राण देना कैसे सम्भव हो सकता है। मैं अभी सिपाही मेजता हूँ। इतना कह कर अंतरस मेकडानन्द तेजी से उठ कर चले गए।

उन्होंने बहुत स सिपाही धारा ओर दौड़ाए। परन्तु बाह्यज का पता न लगना था न लगा। गोपाल पाण्डे भी वहीं से जा चका था, अतः उससे भी मेकडानन्द की मुलाकात न हो सकी।



२२

मैत्रीदास की आवादी से डेढ़-दो मील नीचे घाटी में पातासेश्वर महादेव का एक मन्दिर था। सन्धे अर्धों में इसे मन्दिर न कह कर गुफा कहना ठीक होगा। गुफा बहुत चौड़ी और लम्बी थी। उसमें धादमी सीमा खड़ा होकर नहीं जा सकता था। गुफा के उम छोर पर शिवलिंग था। शिवलिंग भी एक अनगढ़ पत्थर की शिमा के रूप में था। लिंग पर एक झरने से जो जल गिरता था वह गुफा में भीतर ही भीतर गायब हो जाता था। यह गुफा अति प्राचीन थी। गुफा के बाहर एक मनोरम झरना था जिससे काफी ऊँचाई से जल गिरता था। कुछ दिन पूर्व एक अबधूत महारमा यहाँ आकर रहे थे। उन्होंने एक कुटिया बनाई थी—और कुछ और पानी थीं। महारमा के पास आस-पास के गाँवों के कुछ स्त्री-मुदय आते—भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम करते और उनके उपदेश तथा आशीर्वाद प्राप्त करते थे। महारमा बहुत बड़े थे और कहीं आते-जाते न थे। वे केवल दुग्ध-आहार करते थे। भक्त-जम उन्हें दुग्ध दे जाते या माय का दुग्ध वे कुह मते थे। परन्तु वे किसी से कुछ माँगते न थे। सब मोग उन्हें दुग्धाहारी वादा

कहते थे । उनके आने से पूर्व इस गुफा के सम्बन्ध में कोई कुछ न जानता था । यहाँ भयानक गहन बन था, तथा वह राह-बाट से बहुत हट कर था । यहाँ तक आने की राह न थी । महात्मा जी ने गुफा को साफ किया, आम रास्ते से एक पगडब्डी की राह बनाई और नियमित रूप से शिवार्चन आरम्भ किया । पहले कुछ गढ़ेरियों ने उन्हें देखा— फिर उनके द्वारा आसपास के गाँवों में उनकी खर्चा हुई, और इस प्रकार भक्त लोग उनके पास आने-जाने लगे तथा पातालेश्वर भगवान की पूजा करने लगे । शिवरात्रि को यहाँ एक मेला भी लगने लगा । बहुत से स्त्री-पुरुष जुटने लगे । चन्द्रसाह ने महात्मा की पक्की कुटिया बनवा दी थी, और एक बारहवरी बनवा कर उस पर छप्पर ढाल दिया था—जिसमें भक्त-जन आकर बैठते, चिसम-सम्बाकू पीते और भयवान् पातालेश्वर पर जल चढ़ाते थे । गुफा और सिय की बनाबट तथा उस पर निरन्तर जल गिरना और सोप होना एक प्राकृतिक संयोग था किन्तु मोसी मासी धामीष जनता उसे चमत्कार समझती थी । धीरे-धीरे पातालेश्वर और दुग्धाहारी बाबा की खर्चा सारे मैनीताल और आसपास के गाँवों में होने लगी थी । शिवरात्रि पर वहाँ सौ सौ सौ श्रावमी आ जुटते थे ।

कुछ दिन बाद बाबा पैसापबास कर गए । कुट्टी सूनी हो गई । भोगों का आना-जाना भी बन्द हो गया । धीरे-धीरे कुटिया टूट-फूट गई—बारहवरी का छप्पर भी सड़ गस गया । किसी ने उसकी मरम्मत नहीं की । अतः बहु म्याज फिर गहन भयानक जंगल में परिणत हो गया । वय पगु वहीं चरने लगे । रात की बात तो दूर, दिन में भी लोग उपर जात्र भय पाते थे । गढ़ेरिए अलवत्ता कभी-कभी खरियाँ चरते हुए उगर आ निकलते थे और वे पातालेश्वर को प्रणाम कर एकप विन्वपत्र पत्रा देते थे । परन्तु शिवरात्रि का मेला बहाँ अबद्व

दोता था । यद्यपि उसकी बहू घूमघाम न थी, और उसे मेला भी कठिनाई से कहा जा सकता था, परन्तु उस-बीस जन वहाँ आठ स्थान को साफ करते मारियस फोडते, झरन में स्नान करते और पातासेश्वर बाबा का प्रणाम कर सूर्यास्त से प्रथम ही अपने घरों को प्रस्थान कर बैठते थे । रात को बहाँ रहने का साहस किसी को न होता था । कुछ सोचों में तो यह भी कहना आरम्भ कर दिया था कि रात का बहाँ भूत प्रेत, बीतासों की धौकड़ी बैठती है । उसका वीच बैठकर साक्षात् भूतनाथ पातासेश्वर मण-वतूरा ध्यानते हैं । एसी ही और भी कई किबदन्तियाँ प्रचलित होती जा रही थी ।

जिस दिन की बात हम कह रहे हैं उस दिन अमावस की अँबेरी रात थी—और इस भयानक स्थान पर अभी रात के समय दस-नयाँरहू मनुष्य एकत्रित थे । उनकी भाकृति और वैशामूया भी भयानक थी । वे चुपचाप किसी की प्रतीक्षा कर रहे थे । हवा बड़े जोरों से चल रही थी । पहाड़ों में हवा के टकराने का बड़ा भयानक शब्द होता था । चारों ओर का वातावरण ऐसा भयावह था—कि अन्धे-अन्धे वीर पुरुषों का भी कलेजा दहल जाय । परन्तु ये लोग अचरित ही जीवट के आदमी थे । जो इस समय यहाँ एकत्रित थे, अचरित ही उनका कोई भयानक इरादा था, और वे अचरित ही अपने से अधिक किसी भयानक आदमी के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

परन्तु उन्हें अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी । एक अति विकराल पुरुष ने बहाँ प्रवेश किया । उसका आते ही जो लोग पीरे-धीरे घातें कर रहे थे, वे सहम कर पंक्ति बाँध कर खड़े हो गए, और उस भयानक प्राणिकृ की ओर देखते सगे । यह आदमी बंद में इन सबसे सम्भा था । इसका अविश्विक्त बहू बहुत मजबूत आदमी था । उसमें साँड को मार गिरान की ताकत थी । उसका कन्धे पर एक कुल्हाड़ी थी,

जिसकी तेज धार बासा मोहा बंधरे में भी बमक रहा था। उसकी कमर में एक सम्झी तलवार सटक रही थी, और एक बड़ा-सा छुरा उसकी फेंट में खुसा था। उसका खूँतार चेहरा बनी काली दाढ़ी से घिरा हुआ था। जिसमें मास-आस धाँसों इस अन्धेरे में भी बड़ी बरबनी मालूम हो रही थीं। उसने धाँसे ही एक-एक करके प्रत्येक आदमी के शरीर से कुस्हाड़ा छुआया। और प्रत्येक आदमी ने कुस्हाड़े को दोनों हाथों में बाम कर 'जय माँ काली—तेरा बार कमी न जाए खासी' कह कर सिर मुकाया।

फिर सब लोग चुपचाप इस भयानक आदमी की आशा की प्रतीक्षा करने लगे। उसने भेद भरी दृष्टि से एक-एक की ओर देखा—फिर उनमें से एक की ओर देख कर कहा—

“कहाँ है ?”

“हाजिर है सरदार।”

“सामो।”

वह आदमी भीतर बोटरी में चला गया। और हाथ-पैर बँधे हुए एक आदमी को बकेसता हुआ ले आया। यह मण्डूघाह था उसकी ओर दो कदम आगे बढ़ कर उस भयानक पुरुष ने कहा—

“क्या बने हरामी बनिए, क्या तुझे उस पेड़ से सटका दूँ ?”

“सरदार, मुझ पर रहम करो बाल-बन्धेवार हूँ मैं।”

“तो सा, पाँच तोड़े गिन दे।

“सुहाई है इतना रुपया मेरे पास नहीं है।”

“तो जातिमहिह डाल इसके गले में फँदा।”

वही साथी जो उसे लाया था—आगे बढ़ा। उसने रस्सी का फँदा उसके गले में डाल दिया। मण्डूघाह गिड़गिड़ा कर सरदार के पैरों में फिर पड़ा—और कहने लगा—

“सरदार, भगवान् की कसम है झूठ नहीं बोलता । इतना र मेरे पास नहीं है ।”

“तुम्हें तो पन्द्रह दिन की मोहलत दी गई थी ।”

“सेकिन साठे जहाँ से ? मेरा तो सारा कारोबार ही च हो रहा है ।

“झूठा दगाबाज, कपटी, खोर हमेदा रूप की बेसी बेता वह बारह हजार का माल था सेकिन तुने पाँच दिए और अँगूठा । दिया । बाकी तेरे मोटे पेट में गया कि नहीं ?

“कसम भगवान् की सरदार, उस मौद में तो मुझ कुछ भी मिला । तमाम माल सौदा था ।”

“और, तो भव या तो पाँच तोड़े गिन या मर ।”

“इतने बेरहम न बनो सरदार । हमारा-तुम्हारा साबका । का है । मेने कमी तुम्हें घोखा नहीं दिया ।”

“म नहीं जानता । पाँच तोड़े गिन और सम्बा बन । अ यह जगल छोड़ने वाला हूँ । वह साला अपेज कमिस्तर मेरे पीता है । और मेरे पास घसा नहीं है । मुझे छपया र ।”

“तो सरदार, ऐसा करो कि साँप मरे न साठी दूटे ।”

“सूअर, कोई गहरी जाल खँसना चाहता है ।”

“कसम भगवान् की सरदार, मेरी बात तो मुन सी । कि क्या पचास हजार पर हाथ साफ करो ।”

“तो जन्नी कह क्या कहना चाहता है, माल जहाँ है ?”

“मरे भाई के घर ।

“जहाँ मुझे फँसाने का जाल फँसाया है तुने । मैं ऐसी गोसी नहीं लेता । जासिम सटका द सामे जो ।”

“नहीं सरदार, मुनो तो—मेरा भाई मेरा जानी दुस्मन है

बहुत-सी रकम हड़प कर घेठा है। मकद रुपया इस बन्त उसके घर में है, कम-परसों ही दिस्ती से आया है। यह अबसर मत चुको सरदार। रुपया कहाँ रखा है—वह मैं जानता हूँ।

“दगा तो नहीं करता।”

“बस मेरे तुम्हारे बीच पंगा है सरदार।”

“अगर दगा की तो घर-दार में आग लगा दूँगा। एक को भी चीता न छोड़ूँगा।

“सरदार, तुम्हारा काम बनेगा मेरे दिम का बाँटा निकसेगा। दगा मैं नहीं करूँगा।”

“खैर, तो कब?”

“बस परसों!”

“इतनी जल्दी?”

“रुपया फिर उठ जायगा। हाथ कुछ नहीं मगेगा।

“तो परसों ही सही, उस घर में आदमी कितने रहते हैं?”

“परसों रात सिर्फ तीन-चार रहेंगे। मारि, उसकी औरत और मौबर।”

“हथियार है उसके पास?”

“तसवार है। तमचा, वन्दूक कुछ नहीं है। मारि मेरा सम्बू है। सड़ेगा नहीं।”

“मौर तू?”

“फाटक तुम्हें तुला मिलेगा। आगे का काम तुम संभालना।”

“देखा जायगा। अब तू क्या वेठा है?”

“मुदिम से पाँच सौ रे सकता हूँ।”

“बाम्हन नहीं हूँ रे साले, वह नाम तो परसों होगा, पर तू तो आज ही मर, जातिम निबटा इसे।”

जालिमसिंह उसे घसीट कर पेड़ के नीचे ले गया और फाँसी का फटा उसके गले में बाँध दिया । मण्डूसाह बहुत रोया-मिड़गिड़ाया, अन्त में एक हजार देने को राजी हो गया । सरदार ने कहा—“बम्बसा एक हजार ही सही । जालिमसिंह तारे साथ जायगा दपमा इसे ही दे देना । काम रातो-रात होना चाहिए, और परसों तीसरे पहर मरे दो आत्मी मौका-मुहाम दखने तारे घर आएँगे उन्हें सब मौके दिखाना और अपने घर में छिपा रखना । खबरदार, चूकना नहीं नहीं तो जान नहीं बचेगी ।

‘इत्मीमान रक्ता सरदार, तुम्हारा हुकम पूरी तौर से बजा माया जायगा ।’

इस पर सरदार ने फिर एक बार अपनी सुझार नजरों से सध साधियों की ओर मेढ़ भरी नजर से देखा और कुछ इचारा किया । सबन अपने-अपने बल्सम के लोहे के फस माठियों से निकाल कर अटी में छिपा लिए और एक बार उस भयानक पुरुष के कन्धे पर रखी कुन्हाड़ी का छू-छू कर ‘जय माता वाली तेरा बार कमी न जाए साली’ कहा । तब उस पुरुष ने भी कुन्हाड़ी का फस निकाल कर कपड़ों में छिपा लिया और अब सबके हाथों में केवल साठियाँ और सरदार के हाथ में एक डंडा रह गया । सरदार ने कहा—‘सब कोई अलग-अलग जाओ और परसों पहर रात गए यहीं मिलो ।’

बिना एक शब्द बोस—एक-एक आदमी चुपचाप वहाँ से चस दिया । जालिमसिंह न मण्डूसाह के हाथ-पैर खोल दिए, और वह भी उसे लेकर एक ओर चल गया । सरदार अकेला उस भयानक स्थान पर रह गया । वह कुछ देर चुपचाप वहीं पड़ा रहा और फिर वह भी तेजी से एक ओर का चस लड़ा हुआ ।

परन्तु यह किसी को नहीं मामूम हुआ—कि किसी गुप्त थोटा ने उनकी सारी बातें सुन ली है। जब सरदार भी वहाँ से चला गया तो वह गुप्त थोटा एक घट्टान के पीछे से निकला और धीरे-धीरे उस अन्धरी रात में तग पथरीली पगडंडी पर चमने लगा। सब सोयीं का रुक गहन खंगस की ओर था और वे यद्यपि भिन्न-भिन्न दिशा में गए थे—पर नीचे की ओर ही गए थे। परन्तु यह पुरुष बिना शब्द किए मैमीतास की ओर ऊपर चढ़ने लगा। इस समय तीन पहर रात जा चुकी थी। बस्ती में सन्नाटा था—एकाम कुत्ता बीच-बीच में भूँक उठता था। वह व्यक्ति बस्ती को पार कर ताल के किनारे-किनारे चलता चला गया और फिर वह ऊपर पहाड़ी पर चढ़ने लगा।

यह पुरुष वही गोरा सन्त था जिसकी चर्चा हम पिछले परिच्छेद में कर आए हैं। जिस समय वह अपनी कुटी में पहुँचा—पी फटने लगी थी और पूर्व में आममान पर सफेदी छाती जाती थी। उसने एक दृष्टि पूर्व दिशा पर गसी और फिर अपनी बकरी और उसके बच्चों को देखा। फिर वह कुटी में आकर अपने कमबस पर सेट गया।

जब वह सोकर उठा तो पहर दिन बढ़ गया था। यह इतवार का दिन था। आबक्यक वृत्तियों में फारिग होकर उसने बकरी का दूध दुहा और उसे चरने का छोड़ दिया। इसके बाद वह बैठ कर एकाग्र चित्त से अपनी नोट बुक में कुछ लिखता रहा—जैसा कि उसका दस्तूर था। फिर वह उठा बकरियों का बाड़े में बन्द किया। भोसा बन्धे पर डासा और हाम में साठी सेबर बस्ती की ओर चल गया हुआ। बस्ती में आपर उसने बताता बटि—और फिर धीरे-धीरे चल कर वह मण्टगाह के द्वार पर जा गया हुआ।

गोरे सन्त को मण्डूसाह अच्छी तरह जानता था । उसमें उसका हंस कर स्वागत किया । गारा सन्त उसके पास बैठकर इधर-उधर की बातें करने लगा । घातघोत पहलें साधारण विषयों पर हुई । पीछे काम-धन्ये रोजगार की बातें होमें लगी । मण्डूसाह ने कहा—

‘दादा काम-धन्या रोजगार कहाँ है अब जब से कम्पनी सरकार का राव हुआ है, सब चौपट हो गया ।’

‘लेकिन तुम्हारा भाई तो सब सुधाहास नजर आता है ।’

मण्डूसाह को सामु का यह कहना अच्छा न लगा । उसने सफाई से कहा—

अपनी-अपनी सबदीर है साहब ।

सामु ने कहा— ‘लेकिन सफाई और ईमानदारी से कारोबार करने से उसमें जरूर लाभ होता है ।’

मण्डूसाह ने बिगड़ कर कहा— ‘क्या मैं बर्झमानों और मूठ का कारोबार करता हूँ ?’

‘मरे दोस्त में यह बात कैसे आन सकता हूँ ।’

‘तो तुम्हें साह्य इस पचायस से क्या काम है ? तुम अपना काम देखो । असल में इस समय मण्डूसाह किसी से बात चीत करने क मूड में न था । अनेक प्रकार की चिन्ताएँ उसे बेचन कर रही थीं । रात की भयानक घटना का असर भी उसके चेहरे पर अभी था । उसके चेहरे का रंग उड़ा हुआ था । वह मौत के घाट उतरने से वास बचा था । उस पर हजार रुपए की सपठ पड़ी थी और अब एक एक ममानक जिम्मेदारी उसके ऊपर सवार थी ।

सन्त ने कहा— ‘दोस्त, सब सोगों को भसाई करना मेरा काम है ।’

“तो तुम मेरी क्या मसाई कर सकते हो ?”

“देखता हूँ, आज तुम परेशान हो । तुम्हारा मन अच्छा नहीं है, क्या तुम बीमार हो ?”

“मैं बीमार नहीं हूँ !”

“तो फिर तुम किसी फिक्र से परेशान हो । इतना कहकर गोरे सन्त ने तेज नजरों से साधु को देखा । सन्त की बातों से साधु के चेहरे का रंग उड़ गया । उसने कुछ शक्ति चित्त से सन्त की ओर देखा— और कहा—

“मैं गृहस्थ हूँ—मुझे हजार चिन्ताएँ रहती हैं । तुम किस-किस का बन्दोबस्त करोगे ?”

“कर सकूँगा तो जरूर करूँगा दोस्त । मैंने कहा न सबकी मसाई करना ही मेरा काम है । बताओ आज तुम खुश क्यों नहीं हो ?”

“कौन कहता है कि मैं खुश नहीं हूँ ?”

“तुम्हारी ही चेष्टाएँ । तुम कोई बात छिपाने का यत्न कर रहे हो । मण्डूपाह पवरा गया और तेज नजरों से साधु की ओर देखने लगा । पर साधु ने दाम्ब वाणी से कहा— ‘बे आदमी खुश हैं जो चिन्ताओं से मुक्त ह । प्रभु यीशू मसीह ने कहा है—ऐ मेक आदमी मेकी बर और नेक बन । जितना अच्छा है मेक बनना । मेक आदमी को कभी किसी बात का खतरा नहीं होता न वह दूसरों के लिए खतरा बनता है । वह सब लोग की मसाई करता है और अपना भी मसा करता है ।”

इतना कह कर सन्त वहीं से उठ खड़ा हुआ । मण्डूपाह के मुँह से एक शब्द भी न निकला । उसके दिम में खोर बैठा था । परन्तु जब साधु पवरा गया—तो उसने आप ही आप कहा—ओह वह एक पागल

फिरंगी है। उसका क्या? उसने मुँह फेर कर साधु की ओर देखा—
 जो अब उसके भाई के द्वार पर खड़ा उसे हाथ उठा कर आधीर्षाद दे
 रहा था। मण्डूसाह का मन हुआ कि वह छिप कर उसकी बातें सुने।
 एकाध बार वह उन दोनों के निकट होकर निकला। उसने सुना कि
 साधु उसके भाई से भी वसी ही बात कर रहा है। उसका भाई साधु से
 अत्यन्त नम्रतापूर्वक बातें कर रहा था। वह साधु से कह रहा था—
 “मेरा बच्चा दो सप्ताह से बीमार है। जरा बाबा बस कर देख लो।
 तुम्हारी दवा से बहुतों को साम होता है। मेरा भी भला करो।

मण्डूसाह ने भाई के ये उद्गार सुने। साधु ने कहा—“सबकी
 भलाई करना मेरा काम है।” यह भी सुना। फिर उसने देखा—कि
 वह मण्डूसाह के पीछे-पीछे उसके घर में चला गया है। मण्डूसाह अब
 साधु की ओर से अपना मन हटा कर अपने आवश्यक कामों में जुट
 गया।

घर के भीतर जाकर सन्त ने बासक को देखा। बच्चा ज्वर म
 बेसुख पड़ा था, और मण्डूसाह की स्त्री उसके निकट बँठी ब्याकुल भाव
 से पुत्र का मुँह निहार रही थी। एक दासी घर का काम-काज करती
 फिर रही थी। बासक का मुँह पीला पड़ रहा था और वह कण्ठ से
 धीरे-धीरे साँस ले रहा था। सन्त को देख कर मण्डूसाह की स्त्री
 अघोर होकर रोती हुई सन्त के पैरों में लोट गई। उसने कहा—
 “बाबा चाहे जिसना रुपया खर्च हो जाय मेरा साम बच जाय।” सन्त
 न करुणा के भाव से स्त्री को देखा और प्यार से बासक के शरीर पर
 हाथ फेरते हुए कहा—“बस फल सभी को भोगना पड़ता है। तुम्हारी
 गीता की पोथी में यही तो सिखा है। पर तुमने मुझे पहले नहीं बुलाया
 और बच्चा इतना कमजोर हो गया। इसके फेफड़े घराव हो गए हैं।
 लो साँस बिलनी तकलीफ से आ रही है। पर चिन्ता न करो, यत्न

करो । मैं दबा देता हूँ । दबा दो, पथ्य करो । ईश्वर मत्ता करेगा । वह हमारा दयामु पिता है । प्रभु यीशु मसीह कृपा करें ।

इतना कहकर उसने होने से एक जड़ी निकाल कर भीर उसमें कुछ दूसरी दवा मिलाकर उसे दी । और कहा— 'यह दवा दो— मैं फिर कस सुवह आऊँगा ।

स्त्री ने रोस हुए कहा— 'बच्चा मेरा बच्चा अच्छा हो भी पायगा ?'

'मैं ईश्वर से प्रार्थना करूँगा । तुम भी करना । उसी की कृपा से तुम्हारा बच्चा अच्छा होगा ।

इसना कहकर सन्त उठ कर कमरे से बाहर आया । उसके साथ ही मण्डूशाह भी आया । सन्त ने एक दृष्टि उसके घर पर डाली और बिना कुछ कहे—मुने वहाँ से बस दिया । उसने निश्चय कर लिया था कि भाने वाली विपत्ति से बह उसकी रक्षा करेगा ।

२४

जिम समय सन् १८५६ के मार्च में इसहीजी भारत से जा रहा था प्लासी के युद्ध को मौ बगम पूरे हो रहे थे । इन सी बरसों में अपनी सेना और सामन के उत्कृष्ट नियंत्रण के बस पर अंग्रेज निरन्तर भारत की शक्तियों से टकराते रहे और सदैव ही भारतीय शक्ति उनसे टकरा कर चूर चूर होती गई । भारतीय प्रदेश ज्यों-ज्यों अंग्रेजों के हाथों में आते गए, अंग्रेज वहाँ शासन का नियंत्रण करते चले गए । अथर्वस्या और अंग्रेजों का अब भी दूर-दूर का परम्पु अब कुछ सुपार हो रहे थे । अंग्रेज कर्मचारियों के उत्पात

और स्वेच्छाचारिता भी कम होती जा रही थी। पिण्डारियों और ठगों के उत्पात दब गए थे। पुलिस की व्यवस्था सुधर गई थी। अदालतों और सबर अदालतों के बन जाने से जनता के मन में न्याय की आशा बँघसी जाती थी। यद्यपि अदालतों में धूसखोरी और भ्रष्टाचार अभी तक कायम था। पर कुछ हाकिम अच्छे भी थे। मिश्र-मिश्र प्रान्तों में एक ही शासन कायम होने से सड़कों और पातायात की व्यवस्था सुधर गई थी।

अंग्रेजी राज में सबसे अधिक सुविधा किसानों को मिली थी। जिन दिनों देश में छोटे-छोटे अनियन्त्रित राज्य थे और उनसे आए दिन युद्ध होते रहते थे—तो किसानों ही की खेती-बाड़ी की वर्षावी अधिक होती थी। फीजें खेतों को रोइती भसी जाती थीं रसव-राशन सूट लेती थी। जान-माल की सलामती नहीं थी। अब भीतरी युद्ध समाप्त हो चुके थे और किसान निर्द्वन्द्व हो खेती-बारी करते थे। अंग्रेजों ने अपने अधिकृत प्रदेशों में सगान की व्यवस्था निश्चित कर दी थी और उसे अमल में लाने के लिए सना अदालत और पुलिस का काम विद्या दिया था। किसान निर्द्वन्द्व होकर खेती करता था और सरकारी मासगुजारी करता करता था। पंजाब रणजीतसिंह की मृत्यु के बाद दस वर्षों तक नरक यन्त्रणा भोगता रहा। अब अंग्रेजी अमल में आने पर सर हेनरी लारन्स जैसे अनुभवी समझदार, प्रशासकता में अतुर अंग्रेजों के कारण यौवनी की समाप्ति पंजाब के लिए बरदान बन गई थी।

इसहीजी ने कई अच्छे काम भी किए। नई योजनाएँ बनाईं। यद्यपि सफलतापूर्वक अपना राज्य बसाने के लिए ही नहीं पर काम देखावासियों को भी हुआ। जमीं के शासनकाल में पहली रेल लाइन बिछी। जो बम्बई से पाना तक बीस मील लम्बी थी। बाद में

वेश भर में उसका काम फैलता चला गया । तार का धारम्भ भी उसी ने किया । इस काम को पूरा करने में इलहौजी को बहुत-सी कठिनाइयों को पार करना पड़ा । सन्ते पोस्टेज के पोस्ट आफिस उसने खुलवाए । इससे प्रथम हरकारे चिट्ठी वांटा करते थे और स्थान की दूरी के अनुसार बिरामा सगता था । इलहौजी ने दो पसे का पोस्ट काड बनाया जिसे रेल के कारण काफी सफलता मिली । शिक्षा के क्षेत्र में उमर प्राथमिक शिक्षा का माध्यम वेद्य की भाषाओं को रखा तथा सहायता प्राप्त स्कूलों की परिपाटी बनाई । उसने पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेंट भी खोला । जिसका उद्देश्य सड़कों पुलों नहरों की व्यवस्था करना था । गंगा की बड़ी नहर उसने निकामी और सबक आजम बसबत से पेदाबर तक बनाई ।

निस्सन्देह ये सब काम शासन की सुविधा के लिए ही किए गए थे । पर साम इनसे प्रजा को भी पहुँचा और साधारण तथा सब साधारण अंग्रेजी राज्य को माध्य विधान की भाँति मानने लगा । इलहौजी से प्रथम अंग्रेजी सरकार की सेनाएँ कुछेक प्रेसीडेन्सी नगरों में इकट्ठी रहती थीं । परन्तु इलहौजी के काल में मराठा राज्य बर्मा और पंजाब की लड़ाइयों के कारण सेना की संख्या बहुत बढ़ गई थी । सेना में जमनोप की भावनाएँ भी दीखने लगी थीं । यों । ग्वासकर बरकपुर व सिपाही विद्रोह से अंग्रेज चौकले हो गए थे । अतः इलहौजी ने यह अनुभव किया कि एक ही के केन्द्र में बहुत अधिक सिपाहियों का जमाव खतरनाक है । उसने सबसे प्रथम बरकपुर की ही समाओं को दूर-दूर फसा दिया । उत्तर भारत पर बड़ी नजर रखने के लिए मेरठ की छावनी को नए सिरे से सुपठित किया गया और वहाँ जो सेना रनी गई वह अपने समय की एक मजबूत सेना थी ।

अब एक नई उलझन पैदा हुई । अंग्रेजी सेना की छावनियाँ देश भर में विस्तार गई थीं । अब यदि कहीं उपद्रव हो या सीमा पर कहीं झगड़ा उठ सड़ा हो, तो इस विस्तारी हुई सेना को तुरंत-फुर्त कैसे काम में लाया जाय । अब तक यातायात के साधन सुसभ्य न हो, तब तक इतना बड़ा साम्राज्य कैसे काबू में रखा जायगा । यद्यपि दूरदर्शी इन्सहोजी ने सड़क आज़म के अतिरिक्त और भी सबकें बनवाई थीं परन्तु उसकी दृष्टि से यह यथेष्ट न था । अतः उसने रेल और वन्दरगाहों को आधुनिकतम बनाया । रेल घनाने के समय उसका दृष्टिकोण यह था कि एक ऐसी ट्रक साइन बनाई जाय जो प्रेसीडेन्सी के आन्तरिक मार्गों को वन्दरगाहों से जोड़ दे और साथ ही प्रेसीडेन्सिया को एक दूसरे से जोड़ दे । यह काम यद्यपि सेना की सुविधा के लिए किया गया था—पर इससे विदेशी व्यापार को भी बहुत लाभ हुआ । इन्सहोजी का लक्ष्य रेल द्वारा जीते हुए प्रदेशों को बुढ़ करना और साम्राज्य के हर केन्द्र को सैनिक शक्ति के प्रहार के दायरे में लाना तो था ही, इसके अतिरिक्त रेलों द्वारा इंग्लैण्ड और भारत के मूलभूत को व्यापार की ओर अधिकाधिक मात्रा में उन्मुख करना भी था । उसने भारत के वन्दरगाह यूरोप के व्यापारियों के लिए उन्मुख कर दिए । इसका परिणाम यह हुआ कि उसके शासनकाल ही में रई और अन्न का निर्यात चौगुना हो गया तथा विदेशी माल भी भारत में बाई गुना आया । कच्चे माल के जाने और पक्के माल के आने का जो प्रवाह इन्सहोजी के प्रयत्नों से ठीकी से बसा तो देश के दोषय में थार बाँव भग गए । संक्षेप में इन्सहोजी का दृष्टिकोण यह नहीं था कि प्रजा की सुख-समृद्धि की बूझि हो या शिक्षा प्रसार हो । उसका मुख्य उद्देश्य यह था कि—समस्त भारत कसे जीता जाय राज्या को कैसे स्थिर बनाया जाय और भारत से इंग्लैण्ड को अधिक से अधिक

साम कैसे पहुँचाया जाय । यदि अंग्रेज भारत में व्यापारी की हिसियत से, धन कमाने की नीयत से न आए होते और केवल भारत को विजय करना उनका मुख्य होसा तो निस्सन्देह भारत का इतना शोषण न होसा जितना कि हुआ । वे आए तो धन कमाने की भीर बन गए राजाधिराज भारत के स्वामी । इसी से कम्पनी राज्य में सबसे अधिक भारत के व्यापार और वित्त का विनाश हुआ ।

शोषण का प्रारंभ बंगाल से शुरू हुआ । वहीं से सबसे प्रथम कम्पनी का राज्य कायम हुआ । पुर्तगाल-फ्रान्स और हासैण्ड थोड़े थोड़े नाम के लिए राजनीति और व्यापार में भारत में इन्सैड के प्रतिद्वन्द्वी रहे । पर अब प्लासी और बक्सर के युद्धों के बाद अंग्रेजों को बंगाल की दीबानी मिल गई, और धीरे-धीरे सब प्रतिद्वन्द्वी अन्तर्धान हो गए तो प्रथम बंगाल की और इसके बाद अन्य प्रायों की आधिक सत्ता अंग्रेजों के हाथ में आ गई । और प्लासी के युद्ध के बाद सन् १८५६ तक सौ वर्षों में अकेली ईस्ट इण्डिया कम्पनी ही भारत की आधिक साम्यविधाता रही । जिस समय उन्हें बंगाल की दीबानी के अधिकार मिले थे—उस समय तुर्क अरब ईरानी और तिब्बत के व्यापारियों का भारत से घबेष्ट व्यापार-विनिमय होता था । बंगाल से निर्यात ही अधिक होता था । इन जानेबानी चीजों में मूत रेशम के बस्त्र चीनी नमक, पटसन और अफीम प्रथम थी । बंगाल के महीन सूती मसमल की दुनिया भर में लपट और माँग थी । सासुरर यूरोप के व्यापारी उम बहुत चाहते थे । उनके द्वारा ठाके की मसमल एक ओर जापान और दूसरी ओर हासैण्ड तक पहुँचाई जाती थी । उस समय बंगाल में सोना बरसता था क्योंकि बिदे नियाँ में सोने ही में मुख्य निदा जाता था इसीसे बंगाल तक सोने का बंगाल प्रसिद्ध हो गया था । परन्तु अंग्रेजों को दीबानी मिलते

पिपके हुए—ये फाइलों के गठ्ठर बमस में दबाए मुबह सपटवे हुए सफ़्तरो में जाते हैं और काम को बके-मादे घर की ओर धीरे सगाते हैं । कीड़े-मकोड़ों की भाँति इनकी जिन्दगी है । इनकी इस भाँति को अंग्रेजों ने पैदा किया है । अपने जीवन से ये असन्तुष्ट हैं । पड़े-सिख और बिचार करने योग्य हैं पर निरुपाम और जीवन के बोझ से दबे हुए हैं ।

इस प्रकार अंग्रेजों ने बंगाल में दो जातियाँ पैदा कीं । एक जमींदारों की दूसरी इन कसकों की । जमींदारी प्रथा में जब उस-फेर और उन्मूलन हुआ और कसकों की कुर्सी पर जब एक पर बस दूट पड़े तो बंगाल ही में एक नए समय का जन्म हुआ और आगे चल कर ये सब क्रान्तिकारी बन गए ।

दलहौजी की इस नीति का सीधा फल इंग्लैंड को मिला । भारत का भाग जमींदारों और किसानों से धिक्का गया जिससे बच्चा मास बिनाश होता गया, और अंग्रेज विविध रूप में बच्चा मास और पक्का सोना इंग्लैंड भेजने लगे । इन परिस्थितियों से पूरा काम उठाया गया । ज्यों-ज्यों भारत का व्यापार खोपट होता गया—इंग्लैंड में पुँजी और इंग्लैंड का व्यापार दिगन्त व्यापी हो गया । बंगाल की ही पद्धति सगमग सारे देश में प्रसारित की गई । अंग्रेज निरन्तर भारत के कारीगरों और व्यापारियों की कठिमाइयाँ बढ़ाते चले जा रहे थे—यद्यपि थक वह पुरानी, मुली जाने-जानी जरा सम्य सूट में बदन खुकी थी—कानून भाषकों के दिक्कंजे में फँस कर । बिलायती विचार, भाषा संस्कार रूढ़-सहज आदि के साथ ही साथ बिलायती फलन बिसास और भी बढ़ा चला गया । इसका परिणाम यह हुआ कि बिलायती मास की माँग बढ़ती चली गई । साथ कर

बिसायती कपड़ों और जूतों का व्यापार खद धमका । पर सब पर बाजी मार से गया बिसायती शराब का बाजार ।

यही वह समय था जबकि इंग्लैंड का शिम्पोसोम पर सया कर उड़ा था रहा था और वह भारत से डोए हुए सोने के पंखों पर उड़ रहा था । इंग्लैंड में उत्पादन की बाढ़ आ रही थी । उस समय भारत में यदि भारत के हित की बिम्बा करने वाली कोई सरकार होती, तो वह अवश्य ही कानून बना कर देश के शिल्प और व्यापार का सुरक्षण करती । परन्तु यहाँ तो आदर्स अंग्रेज इमहोजी का बोलवासा था और उसने विदेशियों के लिए भारत क दन्दरगाह खोल दिए थे जिसके द्वारा बिसायती मास का निर्वास प्रवेश भारत में हो रहा था । इसका परिणाम तुरत ही यह देख पड़ा कि भारतीय शिल्प और व्यापार चौपट हो गया, और मूझिदाबाद डाका, सलनऊ अहमदाबाद, नामपुर, मद्रास, बनारस उज्जौर, पूना और काश्मीर जैसे शिल्प उद्योग के केन्द्र उजाड़ हा गए और उनके स्थान पर मान-चेस्टर और जिवरपूस क कारखाना की बिमनिया आकास से स्पर्धा करने लगी ।

जिस समय भारत में अंग्रेजों ने अपना कदम जमाया, उस समय मुगल साम्राज्य टूट रहा था । परन्तु मुस्लिम प्रभावित एक नई सम्पत्ता बन रही थी । अब ज्यों-ज्यों अंग्रेजी राज्य पैर फस्ताता गया—मुगल प्रभाव सिमटता गया । और अन्ततः वह साम किले की दीवारों के भीतर सिमट-सिमटा कर—सीमित रह गया । और अब तो सामकिले में मुगलों का अन्तिम बिराग टिमटिमा रहा था । जिसकी दीप ज्योति बुझने की अब तक हो रही थी और उसके बाह सामकिले के पद धन्द हाने वाले थे ।

सन् १७८५ में जब सिधिया ने दिल्ली पर अधिकार किया था सभी शक्ति मुगल सम्राट के हाथ से छिन गई थी। सिधिया ने राज्य शक्ति अपने हाथ में ले कर बादशाह शाहआलम को ६ लाख रुपए वार्षिक पेंशन दी थी—पर वह कभी भी बादशाह को समय पर नहीं मिसी। १८०३ में दिल्ली पर अंग्रेजों ने कब्जा किया और शाहआलम उनके हाथों की कठपुतली बना। अंग्रेजों ने वारह साल रुपए वार्षिक बादशाह की पेंशन नियत की। बूढ़ा और अंधा वहादुर शाह निरुधाय था। अब मुगल सूर्य तेजी से अस्तावसत को जा रहा था। परन्तु यमगने शाह आलम और उसके उत्तराधिकारी किसी क्षीण आशा की ज्योति का सहायता तक रहे थे। थोड़े ही दिनों बाद अंग्रेज गवर्नर जनरल ने बादशाह की परवाह करना ही छोड़ दिया। वास्तव में अब मुगल बादशाह एक निरर्थक सत्ता और अंग्रेजों के सिर पर नागहानी का भार था। शाह आलम व उत्तराधिकारी ने खंदन क ठार छटछटाने राजा राममोहनराय को भजा—परन्तु बेकार, क्योंकि अंग्रेजों व और बादशाह के दृष्टिकोण ही भिन्न हो गए थे। बादशाह अभी भी अपने को भारत के अधिराज समझते थे। परन्तु अंग्रेज उसे महज पुराने जमान की कुतुबमीनार समझते थे। आरम्भ में अंग्रेजों की यह नीति थी कि बादशाह के बेबन अधिकार ही छीन लिए जायें किन्तु उसकी मान-मर्यादा कायम रखी जाय। परन्तु बाद में यह ढकोसला भी उठा दिया गया और बादशाह के पद को ही अस्वीकार कर दिया गया। दूसरे शब्दों में अब तक बादशाह नवाब-बे-मुल्क बने हुए थे पर अब इतने भी न रहे।

इसहीजो चाहता था कि बादशाह सामकिले को छोटें और अपने कुनबे के साथ कुतुब वास अपने महल में बसे जायें ? और बिने में सरकारी मंगजीन रखी जाय। परन्तु इसमें उसे सफलता

उसने अपने जीवन को भी दूसरे में डालने का निश्चय कर लिया। मण्डूसाह से मिल कर उसने उसने मन में पश्चात्ताप उत्पन्न करने की चेष्टा की थी। पर कुछ तो स्वभाव दोष से और कुछ परिस्थिति के कारण मण्डूसाह विवश हो रहा था। सन्त ने समझ लिया कि डाका अवश्य पड़ेगा और वह यथासम्भव मण्डूसाह की रक्षा करेगा। दूसरे दिन उसने अपने नित्य कर्म से निवृत्त हो कर यत्न से छिपाई हुई पिस्टल निकाली। उसकी ममी माँठि जीब की, और उसमें गोलियाँ भरी। और भी कुछ गोलियाँ उसने अपने शोल में डाल लीं। और वह दोपहर हाने के कुछ बाद ही घर से निकल पड़ा। बस्ती में घूमता हुआ वह सभ्या से कुछ पूर ही मण्डूसाह के द्वार पर आ पहुँचा। उसने एक वार छिपी नजरों से उसे देखा और गम्भीर स्वर में कहा— 'घर भसा, होगा भसा।'

मण्डूसाह इस समय किसी से बात करना नहीं चाहता था। उसने कहा— 'बाबा तुम अपना रास्ता मापो मुझ तुम से फिजूस बात करने की फुर्सत नहीं है। परन्तु सन्त न उसकी रक्षा की परवाह नहीं की और कहा— 'तुम्हारे भाई का सड़ना बहुत बीमार है बल मने उसे दबा दी थी। उसके बेधारे माँ-बाप बहुत दुखी हैं क्या तुमने उसे देगा अपने भाई-भावज को तसस्ली बी ?

तसस्ली बी या नहीं तुम्हें इसका क्या ?'

भाई-भाई का धुन एक होता है। तुम्हारे जाने से व प्रसन्न हाँग। तुम दोनों भाई सुन-दुख में एक हो कर रहो यह कितना अच्छा है।

'क्या भाई ने कुछ कहा है ?

नहीं मैं ही कह रहा हूँ।

इसी समय सायु न देखा—कि दो अजनबी आदमी आ कर सामन बढ़ की छाँह में गढ़े हा गए। निस्साम्येह सायु ने इन्हें पहचान

सिया, वे अवश्य ही रात वाले डाकू थे। परन्तु उसने ऐसा भाव प्रकट किया जैसे उसने उन्हें बला ही नहीं। उसने मण्डूशाह के घर की ओर दड़ते हुए कहा—'आओ आओ अपने भाई व बीमार बच्चे को देख आओ।'

परन्तु मण्डूशाह तेजी से घर के भीतर घुस गया। और सन्त ने मण्डूशाह के द्वार पर जा कर कुण्डा छटकटाया। मण्डूशाह ने धा कर द्वार खोला और आदरपूर्वक सन्त को भीतर ल गया। बच्चे की दगा में कोई सुधार न था। वह रूह रूह कर कराह रहा था। सन्त ने उसे देखा ही। और कहा—'आज रात भर मैं तुम्हारे घर रहूँगा। तुम्हारे बच्चे का देखूँगा।'

दृढमता से मण्डूशाह गद्गद् हो गया। रात ही आई। सन्त ने मण्डूशाह के साथ भोजन किया और द्वार के पास एक बटाई पर सो रहा। घर में मण्डूशाह के अतिरिक्त दो नौकर और ध। दोनों जबान भादमी थे। वे दोनों भी काम-धंध से निवृत्त हो कर सन्त के पास ही सो रहे।

रात बीतती गई और सन्त सज्जत रहा। बच्चा रूह रूह कर कराह रहा था और मण्डूशाह की पत्नी उसके विछीन पर धुपधाप बँटी कमी-कमी धूम्र बहा लती थी।

भापी रात हुई और सन्त ने उठ कर प्रथम बच्चे का ध्यान से देखा और देखा ही। इसी समय मण्डूशाह भी उठ बैठा। उसने बाहर कण्ठ से पूछा—'क्या है मरा बच्चा?'

परन्तु सन्त अभी उत्तर न दे पाया था कि द्वार पर एक सटका हुआ। किसी न बिबाड़ा पर कुस्थाड़ का प्रहार किया था। मण्डूशाह ने चौंक कर कहा—'यह कैसा घण्ट हुआ?'

"ममी हम देखेंगे। तुम जब दोनों मोरों का जगा दा।"

“क्या कुछ खतरा है ?”

‘रात अंधेरी है । हो सकता है । पर डरने की कोई बात नहीं । तुम्हारे पास रास्त्र हैं ?’

‘दो तलवारें हैं ।’

‘सो एक तुम न सो । एक उस खवान को दो । और चुपचाप देखो क्या होता है ।’

मण्डूसाह धरारा गया । मौकरों ने तलवार और साठी सम्हाली और सलकारा— ‘फाटक पर कौन है?’

इसी समय फाटक टूट गया और द्वार खुलने का शब्द हुआ । साथ ही दो आदमी घमाघम सहन में आ बूदे ।

सन्त मण्डूसाह को खींच कर आड़ में ले गया और बस्त्रों से अपना पिस्तौल निकाला । परन्तु मण्डूसाह एकदम चित्सा कर घामन की आर दौड़ा कि एक डाकू का भाला उसके पेट में घुस गया । इसी समय सन्त ने गोसी बाग दी । मण्डूसाह और डाकू एक साथ मरे ।

मण्डूसाह के मिरत ही उसकी पत्नी रोती-खीकती उधर दौड़ी । उधर सन्त ने और एक गोसी बागी । एक और डाकू डर हो गया । उधर दोनों मौकर साठी और तलवार चुमाठ हुए खोर-खोर बिस्ताने मगे ।

डाकूओं के पैर उखड़ गए । उन्हें विश्वास नहीं था कि यही उनका इस प्रकार स्वागत होगा । ब भाग निकस ।

सन्त न भागल हुआ पर एक और गोसी बागी और वह सपट कर मण्डूसाह के निकट पहुँचा । भाला उसक पेट में पार हो गया था । भाल क पस के साथ ही उसकी आँतें भी बाहर निकस आईं । मण्डूसाह उल्टी साँसें मने मगा । उसकी स्त्री खार-खोर स रान लगी ।

सीमा ही मण्डूसाह और दा-चार पडोसी आ गए । सन्त की खेटाएँ कारगर न हुईं । और मण्डूसाह ने दम तोड़ दिया । मण्डूसाह ने बहुत फूँफूँ की । भाई के लिए रोने का भी अभिनय किया । मण्डूसाह की स्त्री रोते रोते बेहोश हो गई । उसे मण्डूसाह की पत्नी की मदद से परसंग पर लिटा कर सन्त ने उसका उपचार किया । फिर वह चुपचाप वज्जे की चारपाई के पास आ बैठा । मण्डूसाह डाकुओं को गालियाँ दे रहा था । बदला लेने की बात कह रहा था । सन्त चुप था । वह सत्य बात बोल चुका था । वह सोच रहा था अब इस बदनसीब औरत का क्या होगा ?

दिन निकल आया । पास-पडोस के बहुत आदमी आ जुटे । पुलिस भी आ गई । पुलिस वाले मण्डूसाह की लाश का पाने उठा ले गए । उसकी पत्नी का हास-व्येहास था । वज्जा सांघातिक स्थिति में पड़ा था । अब सन्त कभी वज्जे की, और कभी उसकी माँ की सुश्रूषा कर रहा था ।

पुलिस ने डाकुओं का पता लगाते हुए यह भी सुराग निकाला कि मण्डूसाह के घर में डाकू छिपे थे । सन्त ने पुलिस को सब हाल बता दिया । पुलिस मण्डूसाह को पकड़ ले गई ।

मण्डूसाह की पत्नी को डारस बँधा कर तथा वासक की सुश्रूषा की ओर ध्यान दिला कर सन्त धीरे-धीरे घर से बाहर हो गया ।

★

२६

यद्यपि भारतीय जन सन्त का नाम नहीं जानते थे और सब कोई उसे गोरु सन्त ही कहते थे, पर उसका नाम सन्तजान था ।

सन्त की कोई कोशिश कारगर नहीं हुई और मण्डूसाह का वह दासक भी मर गया। भर में असहाय मण्डूसाह की विधवा स्त्री रह गई। उसके दुःख-दर्द का अन्त न था। उसके घर का चिराम बुझ चुका था। यद्यपि डाके की मूट से उसका घर सन्त की हृपा से बच गया था परन्तु वह तो मूट चुकी थी। उसका हृदयभन उसका पति मर चुका था और उसकी आँसु का सहारा पुत्र भी उससे छिन चुका था। परन्तु विपत्ति का यही आत्मा नहीं हुआ। पुत्र के मरते ही मण्डूसाह ने भाई की सम्पत्ति पर अपना दावा किया। उसका कहना था—भाई का कोई कानूनी वारिस नहीं है अतः मैं ही उसके सब धन-सौलत का स्वामी हूँ। मुबदमा कमिश्नर साहब बहादुर के इजलास में आया। उन दिनों एक पण्डित और एक मौसवी अदालत में मजहबी कानून में जज की सहायता करने को हाजिर रहता था। पण्डित न धर्मशास्त्र की रुस कहा दोनों भाइयों में विधिमत बटवारा नहीं हुआ। बटवार का कोई प्रमाण उपस्थित नहीं है इसलिए भाई की सम्पत्ति पर भाई का अधिकार है। स्त्री रोटी-कपड़े पाने की हकदार है वगैरे कि उसका दासबसन खराब न हो और वह मृत पुरुष की विधवा की भाँति विधवा के सब धर्मों और नियमों का पालन करे।

परन्तु मण्डूसाह उस असहाय स्त्री को रोटी-कपड़ा भी बना नहीं चाहता था। अतः उसने उसका दास बनन पर भी गवे आरोप लगाए। सन्त ने उसकी बहुत सहायता की। बहुत दौड़-धूप की। पर मण्डूसाह न सन्त की यह दौड़-धूप ही उस माग्यहीन स्त्री के बिपत्त प्रमाण रूप में उपस्थित की। उसने कहा यह गांग बदमाश ही सन्त बन कर उसका धर्म नाश कर रहा है। वास्तव में उसका उसी ने गुप्त सम्बन्ध है। इस अपवाद में गिरा हो कर सन्त ने उसका घर

जाना-जाना भी छोड़ दिया। अब बेचारी स्त्री का यह सहारा भी गया। और एक दिन सरकारी प्यादो की मदद से मण्डूशाह ने अपने नाई की बिभवा को घर से निकाल बाहर कर दिया। उसका सब माल-मता हथिया लिया। एक प्रतिष्ठित साहूकार की सुधीला धर्मपत्नी निरपराध अपना सब कुछ गँबा कर पय की भिसारिणी बन गई।

प्रभात का समय था। सूर्योदय हुए काफी देर हो गई थी। पर अभी बौह्य चारों ओर छा रहा था। सर्वाँ बहुत थी। सन्त अपना सवादा सपटे आग के सामने बठा कुछ लिख रहा था। उसने अनुभव किया—बोई आया है। उसने आँख उठा कर देखा एक स्त्री बहुत धीरे-धीरे उसकी कुटी की ओर आ रही है। सन्त लड़ा हो गया। पास आने पर उसने देखा—मण्डूशाह की स्त्री थी। साज और सकोष स वह मरी जा रही थी और दुःख स उमका बह्य मुर्मा कर सूत्र गया था।

सन्त ने कहा—‘तुम आई हो?’

हाँ में हूँ।”

“मैं तुम्हारी कुछ सेवा कर सकता हूँ ?

बहुत सेवा की आपने। अब मैं आपकी सेवा करने आई हूँ ?

‘क्या कहा?’

‘क्या आपने नहीं कहा था कि आप का घर है बकरी है खेत

है पर स्त्री नहीं है ?

ओह बह तो हँसी की बात थी।

“तो अब एक स्त्री मकमूष आपकी धारण आ गई है। आपकी

यह कमी पूरी हो गई।

“सबिन क्या तुम

“म यहाँ आपके साथ रहने आई हूँ।”

‘परन्तु मैं एक साधु हूँ। मेरे पास रुपया-पैसा नहीं।’

‘मैं अपने परिश्रम से अपना पेट भर सूँगी। आप पर मेरा कोई भार नहीं होगा।

‘लेकिन तुम्हारा घर-बार ?’

“सब मेरे देवर ने छीन लिया।

“पर वह तुम्हें आना-जपटा दे सकता था।

‘इससे बचने के लिए ही उमन आपके साथ मेरा सम्बन्ध जोड़ा था।

‘यह तो विष्णुम झूठ बात है। कृष्ण गवाह है।

‘तो अब वह सब्बी होगी। मेरा भी भगवान् है। भगवान् ने मुझे जो राह दिखाई है, मैं उसी पर चली हूँ।

‘लेकिन यह मुमकिन कम हो सकता है ?’

‘हो ही गया। मैं आ गई। अब यहाँ से जाऊँगी नहीं।

‘तुमने बहुत जल्दी में बिना सोचे-विचारे यह फैसला किया है। मेरे साथ चलो मैं मण्डूसाह का समझाऊँगा। तुम अपने घर में रह सकती हो।

‘तो आप एक अभागिनी स्त्री को कारण नहीं बसकते ?’

‘मैं न यह बात नहीं हूँ। मेरा मतलब है

आपका मतलब जो कुछ भी है। मैं आपकी कारण आई हूँ, विष्णु आप पर भार बन कर नहीं। एक बार पुरुष की भाँति यदि आप मुझ कारण में अपने हैं तो ठीक है। बरना मैं अभी नदीतास में जाकर डूब सकती हूँ। मण्डूसाह के घर नहीं जाऊँगी।

समझाने से मण्डूसाह मान जायगा। मैं गाँव के और तुम्हारी बिरादरी के पंच बुलाऊँगा।”

“आपको शायद यह नहीं मालूम कि मण्डूसाह ने मुझसे क्या कहा है ?”

“क्या कहा है ?”

“वह मेरे साथ अपना अवध सम्बन्ध कायम करना चाहता है। उसका कहना है कि यदि यह बात मजबूर हो तो वह मुझे रख सकता है। प्रथम तो मेरा धर्म मेरे साथ है। दूसरे मुझ और आपको भी मामूम है कि मेरे पति की हत्या का जिम्मेदार तो वही है। खुद उसने मेरा सर्वस्व भी हरण किया है। मला उस पशु के साथ में रह सकती हूँ ?”

‘किन्तु यहाँ मैं अकेला हूँ। मेरे यहाँ दूसरी कोई स्त्री नहीं है, यहाँ तुम कैसे रह सकती हो ?’

दूसरी स्त्री की यहाँ क्या जरूरत है ? यहाँ तो एक ही स्त्री की कमी थी, वही कमी मैं पूरी कर रही हूँ। वस, आप और मैं दोनों यहाँ रहेंगे।’

‘मगर किस तरह ? मेरा खुदा मुझे न बखड़ेगा।’

‘क्यों नहीं। मेरा भगवान् तो मेरी इच्छा से सहमत है। आपका खुदा क्या नहीं है।’

‘तो क्या तुम चाहती हो कि तुम

‘हम पति-पत्नी की भाँति रहेंगे, वहाँ है आपका खुदा, मुझे बताइए। मेरा परमेश्वर यह है। उसने छाती में छिपी छोटी-सी पामिग्राम की मूर्ति निकाल कर दिखाई। आइए, अब हम भगवान और आपको खुदा के सामने गड़े होकर प्रतिज्ञा करें कि हम परस्पर पति-पत्नी हैं। और जब तब जित्वागी है, हमें कोई तावत एक दूसरे में अलग नहीं कर सकती।’

‘मार्द गाड़ यह तुम क्या कह रही हो। मैं सबत्यागी बापु

सामु तो सज्जन को कहते हैं । आप सामु हैं तभी तो मैं यहाँ आई हूँ । मेरे साथ रहने से आपका सामु-व्रत भंग नहीं होगा । हम गृहस्थ सामु बनेंगे । दोनों मिलकर वीन-दुस्त्रियों की सेवा करेंगे । आप औपच्य बाँटना मैं उनकी सेवा करूँगी ।

सन्त के विस की चढ़कन बढ़ गई । बहुत दूर तक वह गहरे सोच में लड़ा रहा ।

साहब की पत्नी ने कहा क्या सोच रहे हैं आप ?

‘यहाँ मेरे दोस्त बुक साहब हैं मैं उनकी सहायता सूँगा ।’

‘तो उन्हें अभी यही बुझाए ।’

सन्त ने सरोप में बुक साहब को आकर सब हाल सुना दिया । सुन कर बुक साहब उठकर सन्त की कुटिया में आ गए । क्षण भर उन्होंने गौर से साहबकार की पत्नी की ओर दृष्टि । पातिव्रत की धामा से उसका मुँह जगमगा रहा था । बुक साहब ने होठों पर मुस्मान फैल गई । उन्होंने कहा— ‘तुम दोनों मेरे साथ आओ, मेरे बच्चों ।’

और वह सन्त मधुसूक्त एक वर्ष की भाँति बुक साहब के पीछे आ लड़ा हुआ उसका पास ही वह स्त्री भी । बुक साहब ने उन्हें ईशामसीह के आस के सम्मुख खड़ा करके दोनों के हाथ मिला दिए और कहा— ‘आज से तुम दोनों लुदा मसीह और दुनिया के आगे पति-पत्नी की भाँति रहो जब तक जीवित रहो ।’

सन्त घुटना के बस मसीह के आस के सम्मुख झुका गया और उम स्त्री ने अपना ठाकुर की स्थापना आस के निचट करके धरती पर माया टेकरकर भगवान् का प्रणाम किया ।

बुक साहब ने इस लुम विवाह के उपसदय में सन्त की कुटिया में बैठकर मीठे टुकड़े खाए, और इसके बाद इस अद्भुत नयदम्पति

ही नबीन दिनचर्या शुरू हुई। दूसरे दिन नैनीताल में भारतीय और अंग्रेजीय सभी स्त्रियों में इस विवाह के सम्बन्ध में भाँति-भाँति की चर्चा होने लगी।

★

२७

नैनीताल ही में नहीं दूर-दूर तक इस सन्त दम्पति का यश बिस्तार हो गया। बृक साहब के उद्योग से उसके पति की बहुत-सी सम्पत्ति उस निम्न गई तथा सरकार ने भी उन्हें यथेष्ट सहायता दी। बृक साहब ने आर्थिक सहायता ही न दी सन्त की कृटिया को एक बिद्याल गिरजे के रूप में परिवर्तित कर दिया। अब प्रति रविवार को वहाँ उपासना होती। स्वयं सन्त धर्मोपदेश देते। उनकी दृष्टि उदार थी। भारतीय और यूरोपियन दोनों उनकी उपासना में समान भाग लेते। गिरजे के सामे एक अश्रद्धा अस्पताल और एक प्रसूति-गृह भी स्थापित हुआ गया। जहाँ गरीबों की मुफ्त सेवा, जन्मादिरी और अन्य उपचार होते थे। इस अस्पताल की ख्याति सरकारी अस्पताल से भी अधिक बढ़ गई। दोनों सन्त दम्पति दिन-रात दीन-दुखियों की सेवा करते उनके दुःख-दद सुनते और उन्हें धर्म का उपदेश देते। यद्यपि वह स्त्री धर्मी भी अपने ठाकुर पर धरदा रखती थी पर अब बहुत से हिन्दुस्तानी साग ईसाई बन चुके थे और बनत जा रहे थे। वे सब उनके गिरजे में आते और सन्त की भाँति उनकी पत्नी को भी थरदा भाव से देखते थे। यूरोपियन पावरियों ने इस विवाह का निषेध किया था—परन्तु वह शीघ्र सब पया। दोनों ने अपनी सब सम्पत्ति धर्म के अर्पण कर दी

अब चर्च की अपनी धामधमी भी बहुत बढ़ गई थी। कुछ साह्य ने बड़ी सगम से उसका नकशा बनवाया और उसकी इमारत खड़ी की।

यद्यपि सन्त एक ईसाई मिशनरी थे परन्तु उनके विचार उदार थे। वे लोगों को ईसाई बनने की प्रेरणा नहीं देते थे वे उन्हें मलाई की ओर सगात थे। भले बनने का उपदेश देते थे। मण्डूपाह को उसकी करनी का फल क्षीप्त मिस गया। उसके घर डाला पड़ा और उसका सब मासमता लुट गया। बाद में एक जाल के मामसे में उसे जेल हो गई।

सन्त का प्रभाव यूरोपियनों और भारतीयों पर समान था। पर वह भारतीय धर्मिता ही का सदा पक्ष में और उनकी सहा करते थे। हिन्दू भी इस ईसाई सन्त और उसका चर्च को बहुत दूर-दूर से भाते थे जहाँ सबको भोजन और विद्याम मिसता था।

आज भी यह सम्प्रदाय का अथ धुर्वाहम की ऊँची पहाडिया में ऊँचे-ऊँचे देवदलों की स्पर्धा-सी करता हुआ इस गौर सन्त की यथा गाथा मौल भाषा में बचानता है।

✱

२८

मन् १८२७ का नया दिन इस बार कनकसे में बनी धूम्रपास में मनाया गया। वास्तव में यह ब्रिटिश साम्राज्य का पलायनी-समा रोह था। अब प्लासी के युद्ध को भी बरग वीत रहे थे और सम्पूर्ण भारत में अगण्ड ब्रिटिश साम्राज्य का बालयामा था। दलहौजी के महान् काय मूर्तरूप धारण कर चुके थे विज्ञान की नई दम—रेस तार, डाक, नहर और दूसरी राज्य व्यवस्थाएँ अब भारत में

एक समृद्ध साम्राज्य की रक्षाएँ बना चुकी थीं। यद्यपि भारतीय मन खिन्न थे और अग्रज मन में समझते थे कि चाहे अब विस्फोट हो सकता है, पर इसहीजी और कोर्ट आफ डाइरेक्टस को इसकी परवाह न थी। इलहीजी का कार्यकाल अब समाप्त हो रहा था। और वह अपने अमर कारनाम भारत में स्थापित करके जाने की तैयारी कर रहा था। दूसरी ओर मुगल बादशाह, राजा और महाराजा, व्यापारी और शिल्पी प्रजा और राजकर्मचारी सबके मन में अविश्वास और सन्नेह तथा भय भर था। पर अग्रजों को इसकी चिन्ता न थी। और इस बार के धूमधाम से बड़ा दिन मनाने की तैयारियाँ कर रहे थे। इस बड़े दिन के समारोह में सम्मिलित होने दूर-दूर के अग्रज भी एकत्र हुए थे। कमाण्डर-इन-रस मेकडानल्ड और उनकी पत्नी धूमदा भी आई थी।

गवर्नमेंट भवन यही पानवार रीति से सजाया गया था। हजारों फानूस रोशन थे। अनेक बान्ने बज रहे थे। बड़े भारी डिनर की तैयारियाँ थीं। बहुत-सी मंत्रज महिसाएँ अपनी सज-भज दिखाने आई थीं। गरब और नाच रंग का दौर-दौरा था। कर्नल हिअरर्स की मेम साहब न अपने मौन्दर्य और सज-भज से यहाँ भी रग जमाया हुआ था। उमते चारों ओर मुन्दरियों का जमघट जमा था जो खरनी-अपनी पागाओं और धौवनों की बहार लिता रही थीं। अभी साढ़े नौ बज थे। झाड़-धानूस जगमग कर रहे थे। उसकी सिलसिल राशनी में मुन्दरियों के झुरमुट का दिखाव दिगुण हो रहा था। जमीन पर कोमली कानीन बिछे थे और फूमवानों में बड़-बड़ ताजे फूलों के गुनगुन सज थे। रंग-त्रिरंगे पशों में छन कर फानूसों की रोशनी अग्रज बहार दिता रहा थी। बाजों की मुरीसी ध्वनि पिल को उछास रही थी। बालरूम में नाच की तैयारी थी। सब मेहमान एक-आ

करके आ चुके थे । गवर्नर-जमरत डमहीजी यद्यपि अस्वस्थ थे, पर वे खूब भड़कीसी पास्ताक पहने सुन्दरियों से हँस-हँस कर हाथ मिला रहे थे । इन सुन्दरियों की क्षिरोमणि मङ्गल हिअरर्स बड़े ही नाज-मखरे से मिझने वासों का सलाम स तथा हाथ मिला रही थीं । इस समय उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में प्रम की तरंगें उठ रही थी । उसके गाउन का मिचला भाग कासीम पर धसिट रहा था । उसकी टोपी एक दम सफ़द थी जिस पर दूतरमुर्ग का पर बहार दिखा रहा था । उसका हाथा में एक छोटा-सा हाथी बाँठ का सुन्दर पखा था । जिससे वह जब तब अपन मुक्कमण्डम को ओट में कर सती थी ।

मेहमाना का ताँता सगा था । इसी समय एक दूसरी पोड़शी ने प्रवेग किया । इसके नब किसमय अंगसौप्टक को दलकर मोग चकित रह गए । यह किसोरी सर डगसस की पुत्री थी जो अमी बिलायत से आई थी । सर डगसस इस समय बसबत्ते में थीफ जस्टिस थ । इस किसोरी के झान स मिचज हिअरर्स का रग फीका पड़ गया । जो सुवतियाँ उस पर कर लड़ी थीं वह मिस डगसस से जान-बहुवान करने उधर को चम दी । दो अथड़ स्त्रियाँ उसके पास रह गई थीं । एक ने कहा— 'उस छाबरी पर तो खूब जोबन खिसा है पहले इस कमी मही देगा ।

'दसती पही से इसी सप्ताह तो इस नए मास का आसाम थाया है ।

नया मास तो है पर गाहक जुटे ता बाठ है ।

'घाहका की क्या कमी है । बेसती नहीं । साग उधर ही दल रहे हैं ।'

रस रही है । मकिन बह कासीम मम कही है ?'

“ओह ! मेकडानन्द की घीमी ? यह क्या सा कर यहाँ अग्रेजों की मोहबत्त में आयगी । बचारी हिन्दुस्तानी बुहिया ।

‘तो इस से क्या ? मुझ उस कासी कुतिया को मसाम करना होगा ?’ वो चार और स्त्रियाँ इस दिनबम्प वातचीत में भाग लेने का जुटी ।

एक ने कहा ‘सबमुक्त यह तो वही धर्म की बात है । मसा हिन्दुस्तानी औरत का यहाँ क्या काम ?

‘लेकिन यह क्या बहुत कासी है ?

मैं ने तो देखा नहीं । कासी है कि पीसी ।

‘पर यह महाँ आन का साहस नहीं कर सकती । अभी उस भयङ्ग स्त्री के मुँह से यह बात निकली ही थी—कमाण्डर-जनरल मेकडानन्द के साम धुमदा ने प्रबध किया । मेकडानन्द अपनी पूरी फौजी बर्नी में था और धुमदा कुछ भारतीय वग में । उसने मुगिदावाद की बनी एक कीमती साड़ी नफासत में पहनी थी । हाथों में हाथी दाँत का सास खुड़ा और माँग में सिन्दूर । एक भद्र माहक भारतीय महिया के रूप में यह धीर मन्यर चाम से बली आ रही थी । एक वार सभी का ध्यान उसकी ओर केन्द्रित हो गया । मेकडानन्द उस सीधे बर्नर-जनरल के निकट ल गया । इसहीजी न हँस कर उसका स्वागत किया । उसके मोहक रूप सुबुब भारतीय बेग भूया और साहसिक पूबूब ने सभी का ध्यान उस पर केन्द्रित कर रगा था ।

मकिन मिसेज हिमरने यह रही थी— ‘क्या यह कासी औरत हम से भी आबर मुमावात करेगी ?’

‘क्यों ? क्या तुम इसके लिए बहुत उरमुक हा ?

‘बिस्तुन नहीं । बस्कि मैं तो बिरोध करती हूँ । वे लोग इन कासी औरतों से दावी करते हैं या उन्हें उनकी मोहबत्त पसन्द है तो

करें। पर वे उन्हें हमारी घरावरी में बठाते हं यह मैं बर्बास्त ना सकती।

‘मैं भी नहीं कर सकती। पर मैं तो इस बात पर हैरान मेकडानलड अस अफसर को यह पूछा क्या? क्या उस जैसे ए जवान अफसर को औरतो की कमी थी। यही मिस डगमस हजार भी-जान स चाह सकती थी। सो—ब सोग तो इमर। रहे हैं। अब मिसन को तैयार हो जाओ।

‘क्या क्यामत है मैं तो उससे मिलना मुतलब नहीं चाहूँ।
‘लेकिन जरा बात करने में हर्ज ही क्या है। विल्मगी ही रं मगर क्या वह हम सोगों की बोसी समझ-बोस सकती है?

न सही गूँभी की तरह इशारे ही करमी।

इतने में ही कमाण्डर जनरल-मेकडानलड ने आकर मुस हुए मिसेज हिअरस को समाम किया सथा अपनी स्त्री से उन्हें पति बरपाया। जरा-सा झुक कर मिसेज हिअरस ने कमाण्डर का अभिन प्रहण किया। फिर मखरे से मुस्करा कर दुमदा की आर संकेत ने कहा—

क्या यह हमारी सोहबत पसन्द करेगी?

इस पर दुमदा न मुस्करा कर दुड अंग्रेजी में कहा— ‘हवा यदि आपको आपसि न हो।’

मिसेज हिअरस न अपनी सखी की ओर दगा जो दुमदा क उच्छ्वारण स बमतकृत हा रही थी। फिर उसन बसी ही हँसी हँस कहा—

“आप की बाबत तो हम सोचां ने बहुत कुछ सुना है। लेकिन मुसावात आज हुई।”

“यह मेरा ही कसूर है। आप जब स्ववेदा से यहाँ आई, तो मुझे ही आपस मिलने जाना चाहिए था। मेरे पति ने कहा भी—पर मैं ही कुछ सकोच में पड़ गई।

कैसा सकोच ?”

यही कि शायद आप एक हिन्दुस्तानी औरत से मिलना पसन्द न करें।”

‘नेकिन अब कैसे आपका सकोच दूर हो गया ?’

सच पृथ्वा जाय तो सकोच है ही। मैं तो अभी तक नहीं जानती कि आप मुझसे मिलकर प्रसन्न हुईं या नहीं।

‘मुझे प्रसन्नता है मैंबम !’

‘तो मेरा नाम शुभदा है। यह छोटा-सा नाम याद रखिए।

‘जबकि याद रखूंगी। आपको दायर अग्रेजों की ऐसी पार्टी में जाने का ही पहला अवसर है ?’

‘जी हाँ पहला ही।’

आप हिन्दुस्तानी स्त्रियाँ इस प्रकार के आमाद पसन्द नहीं करतीं।

“पसन्द क्यों नहीं करतीं। परन्तु तरीका जुदा-जुदा है। हम भारतीयों का स्त्री-समाज पुरुषों से जुदा है। अपने स्त्री-समाज में हम सब आमोद-प्रमोद करती हैं।

“सैर, तो आज हम आपका एक हिन्दुस्तानी माना सुनेंगी।’

“कभी आपके घर आकर मुना दूँगी। इस प्रकार के समारोहों में पुरुषों के सामने माने का मुझ अम्वास नहीं।”

“आप एक अग्रेज अफसर की बीबी होकर भी दायर पर्व में रहना पसन्द करती हैं।’

“एक हव तक । हमारा यह दस्तूर है कि समाज में मिसमे जुमने की एक सीमित मर्यादा है ।’

‘तब तो मुझे भय है कि आप हमारे अप्रेजों क समाज में लोकप्रिय नहीं हो सकेंगी ।

‘हो सकता है पर मैं हिन्दुस्तानी हूँ । मैं एक अच्छी पत्नी होना ही चाहती हूँ ।

‘इसके लिए कमाण्डर-जनरल महादय हमारी बर्षाई के पात्र हैं । उन्होंने हॉसबर मेकडानल्ड की ओर बला जो भूपचाप दोनों की बातें सुन रहे थे ।

इस समय मेकडानल्ड ने कहा— अरे वह दलौ बगाल पदल सेना के कमाण्डर था रहे हैं । मुझे उचित है कि मैं आगे बढ़कर उनका स्वागत करूँ । वे मेरे पुराने दोस्त हैं । मैं अभी आया दुमका देवी तब तक तुम मिसज हिअरर्स से बात करो ।

और वे मपकत हुए नबगन्तुक अफसर की आर पले । इस आदमी की आयु पचास के लगभग होगी । परन्तु वह सम्वा-तगड़ा हष्ट-पुष्ट आदमी था । उसके रंग-रुंग से कुछ धमण्ड और अहमग्यता अवस्य नमन रही थी । परन्तु मेकडानल्ड ने आगे बढ़कर हॉसबर हुए कहा— आप हैं जनरल कॅनेडी बहुत दिन बाद मिस । कहिए मिजाज ता अण्ड है ।

“आपसे मिसबर बहुत मुसी हुआ जनरल मेकडानल्ड । सकिन आपकी यह हिन्दुस्तानी बीबी कहीं है ? मैं ता उनम मिसने को उत्सुक हूँ ।

‘बहु क्या मामने गयी है । मिसज हिअररम म गर्पें सड़ा रही है ।
“सचमुच ? धण्डरफुन । जनरल मेकडानल्ड मैं आपकी बर्षाई देता हूँ और दुमिया अवा करना हूँ ।

'दुनिया किसलिए जनरल ?'

'कि तुमने माई ईसूमसीह की सच्ची सेवा की। एक गुमराह हिन्दुस्तानी को त्रिदिशयन बनाकर उसका नर्क से उधार किया। मगर यह मैं क्या देख रहा हूँ बेबी मेकडानलड तो बिल्कुल हिन्दुस्तानी सिवास में है।'

'जी हाँ ! क्या आप नहीं जानते कि वह एक मानवानी ब्राह्मण की बेटी है।'

मान्सन्स ! जनरल मेकडानलड ! यह आपन क्या मन्दी बात कही। ये बदनसीब हिन्दुस्तानी कितन गन्ने भीर गुमराह हैं। म तो समझता था कि आपने उसे एक धादन त्रिदिशयन मन्दी बना दिया होया।

त्रिदिशयन तो नहीं पर वह एक भादर्भ हिन्दू मन्दी है।

'मा गाड ! आप तो कुछ दूसरे ही टोन में बोल रहे हैं। खुदा के लिए आप यह तो फर्माइए कि आप खुद भी त्रिदिशयन हुआ नहा ?'

'यकीनन में त्रिदिशयन हूँ।'

'तो यह कैसे मुमकिन हो सकता है कि आप त्रिदिशयन हों और आपकी बीबी हिन्दू ?'

पहले म भी यह नहीं समझता था कि यह कैसे मुमकिन है। पर अब समझ गया।

'खुदा की कसम ! आप पर जकर पतान का माया पड़ा है। तभी आप एमी बहकी-बहकी बातें कर रहे ह।

म तो एसा भद्दा समझता। मर हाग हवाम बतर्न दुस्म ह।

तो इसका मतलब यह है कि आप ईमार्श प्रम को जब्दा नहीं समझते।'

“बहुस अच्छा समझता हूँ और मैं क्रिदिचयन हूँ—परन्तु मैं एक सैनिक अफसर हूँ—मिसनरी प्रचारक नहीं।”

मैं भी एक अफसर हूँ जनरल मेकडानल्ड परन्तु मैं पहले मिशनरी हूँ, बाद में अफसर। सना के हिन्दुस्तानी सिपाहियों को ईसाई बनाना मेरा मिशन है और मैं सगाठार अट्टाइस साल से हिन्दुस्तानी सिपाहियों को ईसाई बनाने का काम कर रहा हूँ। हिन्दू या मुसलमान जो भी सिपाही ईसाई बन जाता है मैं उस तुरन्त जमादार या हवलदार बना देता हूँ। चाहे योग्य हो या न हो।

‘सकिए आप क्या समझते हैं कि ऐसा करने आप अपने सैनिक शायित्व से बिभन्नित नहीं हो रहे ह ?’

‘तनिक भी नहीं। अभी इन मूर्तिपूजक जगती हिन्दुस्तानी सिपाहियों की धारणा को घतान के पंजे से यचाना भी मेरी मिसिटी द्यूटी है। मैं ऐसा मानता हूँ। फिर इसके अतिरिक्त एक और भी तो बात है जनरल !’

‘बहु क्या ?’

‘बिस्फज हिन्दुस्तान में हम अंग्रेजों के लिस्साफ बगावत फ़ैस आए ता हमें ये ईसाई देगी सिपाही सबसे अधिब सहायता दे सक्ते ह ।’

‘मुझे अक़मास है जनरल कि मरे बिचार तुमन नहीं मिसत । मैं तो यही समझता हूँ कि घर्म के मामले में हम लोगों को निरपक्ष और उदार हाना चाहिए ।’

जनरल बुद्ध बहना चाहता ही था कि भोजन की घण्टी बज गई ।

मकडानल्ड ने कहा—“अभी और बातें फिर हागी जनरल अब तो तुम बगाल पदम रेजीमेंट में तैनात होकर आ ही गए हो । मैं भी ३४ नं० पल्टन का कमाण्डर हूँ ।

“तब तो मुझे खुशी है कि जल्दी-जल्दी मुलाकात होगी और तब शायद तुम्हारी पत्नी को अच्छी त्रिदिशयन सँडी बना सकूँ ।

‘मुझे प्रसन्नता होगी अनरल । परन्तु यह समझ नहीं है । इतना कहकर वे शुभरा की ओर चले । वह उनकी प्रतीक्षा ही कर रही थी । उसने कहा— ‘जरा ध्यान रखना मरे सामने कोई अस्त्राद्य न आने पाए ।’

‘मुझ ध्यान है । तुम इतमीनाम रहो । मन पहल ही स प्रधान सानसामा से कह दिया है । उसने अवश्य एक-दो शिवा तुम्हारे लिए बंधासी ढग की बनाई होगी ।

इसके बाद सब कोई अपने-अपने जोड़ के साथ भोजन का टबुम पर बठ । टबुम पर बहुत सी जिम्में परसी गई थी । तथा धव झाड़ फानूसों के प्रकाश में घोटलों में भरी हुई धराव सोने की तरङ्ग जमन रखी थी । टेबुम पर भाँति भाँति की धराव भाँति भाँति के पत्र मान तथा पकवान और फल भरे हुए थे । बाहर बँड बज रहा था और भीतर छुरी चम्मचें ताल दे रखी थी । यह मन् सत्तावन का नया दिन था । मन् सत्तावन की पहली जनवरी ।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक बम्पनी के मैजिस्ट्रो के पास बाउन बेस बन्दूकें थीं । उन्हीं में उन्होंने बड़ी बड़ी मड़ायो जीती थीं । परन्तु मन् १८३३ में एक नए प्रकार की परिष्कृत बन्दूक का प्रयोग हुआ था । त्रिमका नाम इन्फ्रेल्ड राइफल था । इस राइफल में कुछ नए सुधार किए गए थे और वे अपराधन दीघ और सम्बी

मार करती थीं। सन् १८५६ में भारत में उसका प्रयोग आरम्भ किया गया। इस राइफल में एक नए प्रकार के कारतूस लगते थे—जिनमें ग्रीस लगा हुआ था। शुरू में वे कारतूस इंग्लैंड से आए थे बाद में इनको तैयार करने के लिए—मेरठ दमदम और बसकत में कारखाने खोल गए और इस नए कारतूस तथा राइफलों का इस्तेमाल करना सीखन के लिए कुछ सैनिक दमदम स्यालकोट अम्बाला के प्रशिक्षण केन्द्रों में भेजे गए थे। ये कारतूस दाँत से काट कर प्रयोग किए जाते थे।

दमदम में एक दिन एक ब्राह्मण सिपाही—जो प्रशिक्षण के लिए बेंगलपुर से आया था—हुएँ पर स्नान कर रहा था। तभी एक महतारन जो वहाँ के कारतूस बनाने के कारखान में मौकूर था—ब्राह्मण सिपाही से पीन को पानी माँगा। परन्तु परम्परा के अनुसार ब्राह्मण न महतार को पानी नहीं पिनाया यह कह कर इन्कार कर दिया कि महतार न पानी पिनाय स उसका लोटा अशुद्ध हाँ जायगा। इसपर महतारने ब्यगस हँस कर कहा— 'महाराज हमका पानी पिनायने में तो आपका लोटा अशुद्ध होता है पर सुम लोग जो दाँत स काट कर कारतूस लगाते हो तो तुम्हारा धर्म कहाँ रहा ? उसमें तो मूअर और गाय की खर्बी लगती है।

महतार ता यह बात कह कर वहाँ से चला गया। पर वह ब्राह्मण सिपाही यह सुन कर जड़ हो गया। जब उसन सिपाहियों से यह बात कही ता सिपाहियों में बड़ी बबनी फैल गई। आग की तरह यह खबर प्रशिक्षण केन्द्र में फैल गई। अंग्रज अफसरों तक के कानों में भी यह बात गई। इस घटना के दूमरा दिन दमदम मन्बेन्त्री डिपा न संजानक मेजर ओन्टीन न सार भारतीय सिपाहियों की परख कराई। जिसमें सिपाहियाँ ने गई राईफल में दाँत से काट

कर कारखूस लगाने तथा उन असुख कारखूसा को हाथ से छूने से इन्कार कर दिया । मजर बोन्टीन ने इस घटना की रिपोर्ट अपने अफसर को भेज दी । यह घटना २२ जनवरी के दिन घटी । इन कारखानों में जो मे कारखूस बन रहे थे—उनके लिए ग्रीस और चर्बी की सप्लाई का ठेका एक बगामी ब्राह्मण को दिया गया था । यह ब्राह्मण ठकदार मेड़-बकरी की मेहगी चर्बी न सकर सूखर और बसा की सप्ती चर्बी सप्लाई करता रहा था और उसी का प्रयोग इन कारखूसा में होता रहा था ।

बाद में कलकत्ते के मजर फोर्ड ने इस बात की जांच के लिए एक कमीशन बैठाया तो उस समाह दी गई कि एक हिन्दू और एक मुसलमान को भी इस कमीशन में नियुक्त किया जाना चाहिए । किन्तु वास्तुशाखा के अधिकारी इससे सहमत नहीं हुए । फलतः इन कारखूसा का वास्तविक रहस्य सिपाहिया से छिपा रहा और असताप के साथ उनके सम्बन्ध बढ़ते ही रहे । जिस दलकर बर्नस टेकर ने सैनिक बोर्ड को बताया की कि यदि भारतीयों को मे कारखूस दिए गए तो उसके घुरे परिणाम निकसेंगे । इन कारखूसों में चर्बी की तीव्र पुर्ण्य जाती थी । और य ही कारखूस दिल्ली और उत्तर भारत के दूर प्रदेशों में प्रचिदान के लिए भेज दिए गए ।

जनरल हिमरस ने जो बरकपुर में कमाण्डेंट आफीसर था—यह सुझाव दिया था कि सिपाहिया का कारखूसों पर अपनी इच्छा अनुसार ग्रीस लगाने की अनुमति दी जानी चाहिए । परन्तु २८ जनवरी तक इस सुझाव पर सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया । सपटीनएक रिपोर्ट देने और कलकत्ते से सरकार का उत्तर ध्यान में ६ दिन बीत गए । इस बीच सिपाही अत्यन्त गुस्से हा उठे और वे आबे में भरकर यह चर्चा करने लग कि सब सिपाहियों को मारने

मार करती थीं। सन् १८५६ में भारत में उसका प्रयोग आरम्भ किया गया। इस राइफल में एक नए प्रकार के कारतूस लगते थे—जिनमें ग्रीस लगा हुआ था। शुरू में वे कारतूस इम्फैड से आए थे, बाद में इनको तैयार करने के लिए—मेरठ दमदम और कनकसे में कारखान खोले गए और इस नए कारतूस तथा राइफलों का इस्तेमाल करना सीखन के लिए कुछ सैनिक दमदम स्थासकोट अम्बाला के प्रशिक्षण कन्द्रों में भेजे गए थे। ये कारतूस दाँठ से काट कर प्रयोग किए जाते थे।

दमदम में एक दिन एक ब्राह्मण सिपाही—जो प्रशिक्षण के लिए बरकपुर से आया था—बुएँ पर स्नान कर रहा था। तभी एक महतर ने जो वहाँ के कारतूस बनाने के कारखान में नौकर था—ब्राह्मण सिपाही से पीने को पानी माँगा। परन्तु परम्परा के अनुसार ब्राह्मण ने महतर को पानी नहीं पिलाया यह कह कर इन्कार कर दिया कि महतर के पानी पिलाने से उसका मोटा अंगुष्ठ ही जायगा। इस पर महतर न ब्यगस हँस कर कहा— 'महाराज हमको पानी पिलाने में तो आपका मोटा अंगुष्ठ होता है पर तुम मोग जो दाँठ से काट कर कारतूस लगाते हो तो तुम्हारा घर्म वहाँ रहा ? उसमें तो सूअर और गाय की खर्ची लगती है।

महतर तो यह बात कह कर वहाँ से चला गया। पर वह ब्राह्मण सिपाही यह सुन कर जड़ हो गया। जब उसने सिपाहियों से यह बात कही तो सिपाहियों में बड़ी बचनी फैल गई। आग की तरह यह खबर प्रशिक्षण केन्द्र में फैल गई। अग्रज अग्रजों तक के बाना में भी यह बात गई। इस घटना के दूसरे दिन दमदम मम्फेटरी डिप्टी व संचालक मैजर ओन्टीन ने सारे भारतीय सिपाहियों की परेड कराई। जिसमें सिपाहियों ने कई राइफल में दाँठ से काट

कर कारतूस सगाने तथा उन अशुद्ध कारतूसों को हाथ से छून से इन्कार कर दिया। मेजर बोन्टीन ने इस घटना की रिपोर्ट अपने अफसर को भेज दी। यह घटना २२ जनवरी के दिन घटी। इन कारखानों में जो ये कारतूस बन रहे थे—उनके लिए घीम और चर्बी की सफाई का ठका एक बगाली ब्राह्मण को दिया गया था। यह ब्राह्मण ठकेदार मेड-बकरी की मँहगी चर्बी न लेकर सूअर और बकों की मन्नी चर्बी सफाई करता रहा था और उसी का प्रयोग इन कारखानों में होता रहा था।

बाद में कमरत के मेजर फोड ने इस बात की जांच के लिए एक कमीशन बठाया तो उसे सलाह दी गई कि एक हिन्दू और एक मुसलमान को भी इस कमीशन में नियुक्त किया जाना चाहिए। किन्तु रास्त्रदासा के अधिकारी इसमें सहमत नहीं हुए। फलतः इन कारतूसों का वास्तविक रहस्य सिपाहियों से छिपा रहा और अमतोप के साथ उनके सन्तुह धड़ते ही रहे। जिसे बलकर कर्नल टेकर ने मैजिक बॉर्ड को बतावनी दी कि यदि भारतीयों को ये कारतूस दिए गए तो उसके बुरे परिणाम निश्चय। इन कारतूसों में चर्बी की तीव्र दुर्गन्ध आती थी। और ये ही कारतूस दिल्ली और उत्तर भारत के दूर प्रदेशों में प्रशिक्षण के लिए भेजे दिए गए।

जनरल हियरर्स ने, जो बीरकपुर में ब्रमाण्डण्ट थापीसर था—यह सुभाव दिया था कि सिपाहियों को कारतूसों पर अपनी इच्छा अनुसार घीस सगाने की अनुमति दी जानी चाहिए। परन्तु २८ जनवरी तक इस सुभाव पर सरकार ने कोई ध्यान नही दिया। सफोनण्ट के रिपोर्ट दन और कमरत से सरकार का उत्तर देने में ६ दिन बीत गए। इस बीच सिपाही अत्यन्त दुःख हो उठे और वे भावेण में भरकर यह चर्चा करने लगे कि सब सिपाहियों को घण्ट कच्चे

और उन्हें ईसाई बनाने का यह सरकार का पढ्यन्त्र है । परन्तु इसी बीच एडजुटेण्ट जनरल को यह सरकारी आदेश दे दिया गया कि प्रीस लगा कर कोई कारतूस मेरठ से न भेजा जाय । साथ ही अम्बाला और स्यालकोट के सिपाहियों को सूचित कर दिया जाय कि वे अपनी मनपसन्द का प्रीस मोम और सेन का घना कर प्रयोग में ला सकते हैं । यह भी फैसला किया गया कि प्रधान सेनापति एसी एक सामान्य धापणा कर दें । परन्तु एडजुटेण्ट जनरल के विरोध के कारण ये आदेश वापस ले लिए गए । यह स्पष्ट था कि हिन्दुओं के लिए गोमांस निषिद्ध था और मुसलमानों के लिए सूअर । और अफसर इस बात का खण्डन नहीं कर रहे थे—कि उक्त कारतूसों में सूअर और गाय की खर्बी नहीं लगी है । इसी प्रकार मार्च का महीना आ गया और मार्च में जनरल हियरर्स को सूचित किया गया कि वह दमदम में खादमारी के समय इन कारतूसों का प्रयोग बन्द कर दें । परन्तु अब काफी बर हो चुकी थी और आजाएँ अस्पष्ट थीं । बिबाद का मूस कारण पूरी तौर पर नहीं हटाया गया था सरकार न केवल यही आदेश दिए थे—कि हिंदों में सिपाही चाहें तो मोम और सेन के प्रीस का प्रयोग कर सकते हैं परन्तु इस बात का कोई आश्वासन नहीं दिया गया था कि युद्ध क्षेत्र में उन्हें वे कारतूस नहीं दिए जाएंगे । इसी समय मत्ता में एक और अफवाह फस गई—कि सिपाहियों को जो आटा दिया जाता है उसमें हड्डियों का चूरा है तथा कुएँ के पानी को अपवित्र कर दिया गया है ।

इस सब कारणां से सना में अनुशासन का ह्याम होता जा रहा था । और अफसरों को इसकी चिन्ता हा रही थी । जमरूम हियरर्स एक गमलानार और साहमी अफसर था । उसने अपनी जवानी में पंजाब के विद्रोह का दबाया था । वह सिपाहियों की भाषा बोलता

वा और उनसे सहानुभूति रखता था। परन्तु कर्नल ह्यूसर जनरल हियरर्स से विल्कुल ही भिन्न प्रकृति का अफसर था। उस बैरकपुर जाए बोडे ही दिन हुए थे। वह पिछले बीस वर्षों से मैनिचा में ईसाई धर्म का प्रचार करता रहा था। वह कहा करता था—म सरकार को सरकार की चीजें और ईश्वर को ईश्वर की चीजें बता ह। परन्तु देता हूँ। परन्तु इस प्रकार के पादरी अफसर बैरकपुर में तथा अन्यत्र छावणियों में और भी थे। इनके धर्माग्रह के कारण सिपाही जनरल हियरर्स की उदार बातों को थोधी और घनावटी ही मानते थे। यद्यपि ह्यूसर ३४ वीं पल्टन का अफसर था—पर उसके धर्माग्रह के कारण सभी सेनाओं में असन्तोष भरम सीमा का पहुँच गया। बैरकपुर और उसके आस-पास तथा रानीगज में आग लगान की छु-मुट घटनाएँ होने लगीं। असन्तोष का यह शीगणदा था। इसके बाद ही कुछ अधिक गम्भीर दुर्घटनाएँ मुशिदाबाद के निकट बहरामपुर में घटित हुईं, जो अब नाममात्र को मन्दायों की राक्षानी थी।

बहरामपुर में कर्नल मिचल की कमान में १६ वीं वेगी पैदल सेना तैनात थी। मिचल एक तज मिजाज और अदूरदर्शी अफसर था। कारतूसों की बर्बाद बहरामपुर में पहले ही पहुँच चुकी थी। और एक ब्राह्मण हथ उदार इस सम्बन्ध में बहुत पूछताछ करता रहता था। इसी समय ३४ वीं वेगी पैदल सेना की दो टुकड़ियाँ बैरकपुर से बहरामपुर भजी गईं। इस रेजीमण्ट के सिपाहियों के कारतूसों की बात और भी पुष्ट हो गई। अतः परेड के समय १६ वां रेजीमण्ट ने कारतूस की पटी पहनने से इन्कार कर लिया। कर्नल मिचल ने इस समय मैनिचो की भावना की परबाह नहीं की। वह मुँड हो कर पाणियाँ बरने लगा और सेना को सन्त सजा देने की उत्तम धमकी

ही । और सब भारतीय अफसरों का बुला कर उसने कहा कि यदि कस स सिपाहियों न कारखूस सभ से इन्कार किया, तो उन्हें कठोरतम दण्ड दिया जाएगा और सब को चीन या वर्मा भेज दिया जाएगा । जहाँ न सब मार डाल जाएंगे ।

परन्तु दूसरे दिन मोर होन पर कबालद स प्रथम ही तोड़ फोड़ धारम्भ हो गई । सिपाहियों ने शस्त्रघाला को तोड़ डाला और अपने हथियारों पर कलपूर्वक कब्जा कर लिया । और अपनी-अपनी बन्दूकें भर ली । कर्नल मिशम ने दक्षिण स उनका मुद्दाबला करने का इरादा किया । यद्यपि उसक पास यूरोपियन सना नहीं थी पर बहु भारतीय घुड़सवार और तोपखाना सेवर बिद्रोही सेना क सामने पहुँचा । स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गई थी । परन्तु भारतीय अफसरों क समझान स उसने घुड़सवार रितासा और तोपखाना बापस मज्र दिया । और इस प्रकार एक भयानक दुर्घटना होते-हीत बच गई ।

परन्तु अनुशासन क नाम पर मना का इण्ड वना अनिर्धार्य का । एडवोकेट जनरल कबील मग ने राय दी थी कि सेना को चीन या ईरान तुरत भेज दिया जाय । परन्तु गवर्नर-जनरल स फैसला लिया कि सारी रेजीमण्ट को अविमम्भ भय कर दिया जाय । इस अवसर पर मय था कि मलिक राजी स हथियार नहीं रखेंग । परन्तु यह भी मय था कि भारतीय घुड़सवार और तोपखान वाले जायद अपने छात्रिया पर नासी बसाने का राजी न हों । ऐसी दशा में ११ वीं रेजीमण्ट यदि प्रतिरोध करती है, तो ग्वाड़ी के उस पार स रंगून स ८४ वीं मंग्रजी रेजीमण्ट को बुलाया जाना अनिर्धार्य होगा । अतः बहु काय भी तुल्य अमल में साया गया और रयून स ८४ वीं मंग्रजी रेजीमण्ट क। नाम क लिए बहाज रवाना कर दिया गया ।

इस समाचार से सिपाहियों के मन में भय और क्षोभ की लहर दौड़ गई । शीघ्र ही ८४ वीं अंग्रेजी रेजीमेण्ट भा गई और उस चिनसुरा में रखा गया और मिशम को हुकम हुआ कि वह ११ वीं रेजीमेण्ट को बैरकपुर ल जाय ।

११ वीं रेजीमेण्ट ज्याही बैरकपुर पहुँची, तो चारा मोर सनसनी फँस गई । सब यही खर्चा करने लगे कि अब यह रेजीमेण्ट भग कर दी जाएगी । सिपाही इसस और भडक गए और हथियार रख देने की अपेक्षा उनका उपयोग करने को तैयार हो गए ।

परन्तु ठीक समय पर सिपाहियों ने धर्म का परिचय दिया । यथावत् परब पर बुला कर सब हथियार छीन लिए गए । चूँकि सिपाहियों ने प्रकट में कोई बिरोध प्रदर्शन नहीं किया—उनके साथ यह रियायत की गई कि उनके कवल हथियार छीन लिए गए किन्तु उन्हें अपनी वर्दी पहने रहने का अधिकार द दिया गया । उन्हें वेतन और पेंशन के हक में तो संबिध कर दिया गया परन्तु धर तब जान का खर्चा द दिया गया । और ऐसा प्रतीत हुआ कि यह जोखिम भरा काम आसानी से पूरा हो गया । परन्तु यह वास्तव में क्रांति का धीमपदा था ।

— ० —

३०

१६ वीं इंग्लैण्ड के भग होने पर यद्यपि प्रत्यक्ष में कोई दुयटना नहीं हुई परन्तु भारतीयों को यह भान हो गया कि अब कुछ अनहोनी घटना हान बानी है । बानाबरण बहुत घासिम हा गया था । अंग्रेज भफसरों और देगी रुफसरों में अब वह पन्न जमा

विश्वास और एकता का भाव न था। सभी की नज़रें वदसी हुई थीं। अविश्वास भय और आशंका की घंटाएँ चारों ओर घाँस हुई थीं।

सन् १९ वीं इन्फैंट्री का मामला ठण्डा भी नहीं हुआ था कि दूसरी इन्फैंट्री मिनेडिमस के दो सिपाहियों को राजद्रोह के अपराध में १४-१६ वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया गया था। सिपाही इस उलझना का अभी दमन नहीं कर पाए थे कि जमादार सलिय रामसिंह का कोर्टमार्शल करके उस घनास्त कर दिया गया। उस पर आरोप था कि उसने कागलूसा के सम्बन्ध में उल्लेखक अफवाहों सेना में फैलाई ह।

सब मिला कर अग्रज अफसर केवल अनुशासन पर ही ध्यान दिए हुए थे। वे सिपाहियों की भावना का जरा भी विचार नहीं करते थे। न वे जान बानी गम्भीर स्थिति का भी ग्यान करते थे। बसी अफसरों तक से अग्रज अफसर सुरा व्यवहार करते थे। सेना में यद्यपि अग्रज अल्पसंख्यक थे—और हिन्दुस्तानी सिपाहियों की संख्या बहुत अधिक थी पर उनके बीच कोई भाईचारे की भावना नहीं थी। कम्पनी के धारमिक बिनों में भाईचारे की जो भावना थी—अब उसका कहीं नामोनिशान भी न था। उन दिनों तो अंग्रेज सन्तुष्ट भारतीयों न दोस्ती का व्यवहार करते थे। गमियाँ में उनके नाम — नाम भारतीय कर देते थे। परन्तु अब तो मिशन पर प्रत्येक अग्रज अफसर सूझर कुत्ता भादि कह कर बात करते थे। साजेंट अफसर गामी-मुप्पा तो बेटे ही वे मार-पीट भी कर बैठते थे। इस समय सिपाहियों की प्रत्येक कम्पनी के साथ एक यूरोपियन साजेंट रहता था जिसका व्यवहार सदैव ही सिपाहियों के साथ जगमी होता था। एडजुटेंट आफीसर भी सदैव साजेंट का पदा सेता था। बाठ

बात में उन्हें कामा आवमी कहा जाता था। प्रत्येक अंग्रेज प्रत्येक भारतीय से हीन-मनु की भाँति व्यवहार करने ही में अपनी जातीय श्रेष्ठता समझता था। आफ़ीसर अपने बँगले पर मिलने जान जाने प्रत्येक भारतीय सिपाही से कुछ हो कर बात करता था। बहुधा कमीशन प्राप्त भारतीय अफ़सरों का भी अपने स बम उन्न और अनुभवहीन अंग्रेज अफ़सरों के इशारे पर नाचना और उनकी गामियाँ मुनमी पढ़ती थी। इन सब बातों ने भारतीय सिपाहियों का आत्मसम्मान और ईर्ष्या का भाव जगा दिया था।

भारत की प्राचीन परम्परा यह थी—कि प्रायः क्षत्रिय ही सैनिक होते तथा युद्ध करते थे। इस परम्परा का मग वंशज में हुआ जब मराठा जाति का नवीन संगठन हुआ। और मराठा की हीन जातियाँ ऊँची उठ कर सत्तार, ग्वासियर, इंदौर, कोल्हापुर और वड़ोदा में राज्यपदासीन हुईं। मुसलमान सैनिक हिन्दू विरोधी सैनिक थे। परन्तु अंग्रेजों ने अपने हाथों के नीचे हिन्दुओं और मुसलमानों ही का नहीं—हिन्दुओं की दूसरी ऊँची जातियों को भी सैनिक श्रेणी में ला सड़ा किया। एक तरह उन्होंने जहाँ नीच जाति के गोप केवत और शूद्रों को राजाबहादुर और महाराजा बना दिया वहाँ दूसरी बार कुलीन ब्राह्मणों को सिपाही बना दिया। इन ब्राह्मण सिपाहियों में अवयव के कुलीन ब्राह्मण ही अधिक थे। उनमें कुसानिमान था। पर अंग्रेज तो सभी हिन्दू-मुसलमानों को नीच समझत थे। अतः अंग्रेजों की हीन भावना का सबसे अधिक प्रभाव इन ब्राह्मण सिपाहियों पर ही पड़ा। मंगल पाण्ड एक ऐसा ही तरुण ब्राह्मण था। वह स्वभावतः ही उन्न था। फिर गोपाल पाण्ड की उत्तमना उमका नख मस में भर गई थी। वह अंग्रेजों को विष दृष्टि से देखता था और छपर का कर्द-नई पटनाएँ हो रही थीं, उन्हें नेत्रकर उमका भून सोस

हा था । उसे ज्ञात था कि क्षीण ही एक बड़ा विस्फोट होना वाला है ।
रन्तु वह घबरेरहित हो गया और अपने मस्तिष्क का संतुलन खो बैठा ।

२६ माघ रविवार का दिन था । बहुत से अफसर और अंग्रेज
निज गिरजे में गए हुए थे । यद्यपि सब कुछ साधारण-सा ही लग रहा
था परन्तु किसी के मन में उत्साह और आनन्द न था । दीपहर का समय
था । अंग्रेज अफसर और उनकी पत्नी गिरजे से सौट रही थी । सभी
ने जबान पर बेसी सनिका के आचरण की बात थी । इन्हीं इन्फण्ट्री
रज के लिए एक बांध कर लड़ी थी । अकस्मात् ही मंगल राइफल
टा कर पस्ति म बाहर आया । उसने अपनी तलवार भी म्यान से
निकाल ली—और उसे हवा में घुमाता हुआ चिल्ला-चिल्ला कर बहने
लागा—'वहादुरो किस मोर्चे में पड़े हो । उठो उठो आगे आओ ।
मैं धर्म की सोग्रह हूँ । हिन्दू को मंगा और मुसलमान को मक्का की
तम है । आगे बढ़ो जबानो ! इन अंग्रेज दुश्मनों के खून से अपने
सज की धाग ठण्डी करा । धम-मुठ का समय आ चुका है ।

सारी पलटन में हलचल मच गई । मंगल लपकता हुआ विगुनर
के ओर घमा—और उससे तब आवाज में कहा—

यसत क्या हो विगुन वजाओ और सारी फौज को इकट्ठा
रो ।

सजिन विगुनर ने समझा कि मंगल अंग के मश में बीसता रहा
। वह उसकी बात सुन कर हँसने लगा ।

उसी कम्पनी के सार्जेंट मजर प्लसन ने चिल्ला कर निपाहियों
को आज्ञा दी कि— 'इसी समय इस अज्ञात को गिरफ्तार करा ।'

परन्तु कोई सिपाही अपने स्थान में नहीं हिंसा । इस पर सार्जेंट
मजर प्लसन रुक्य आगे बढ़ा । गगन में तिराना साया और राइफल
गयी । गोमी ने सार्जेंट की खोपड़ी चकनाचूर कर दी । वह
मि पर गिर पड़ा और तुरन्त मर गया ।

छावनी में हलचल मच गई । समाचार पाते ही एडजुटेण्ट सेप्टिनेण्ट वफ और साजण्ट हडसन घोड़ों पर सवार होकर घटना स्थल पर पहुँचे । मंगस न एक तोप की धाड़ बेकर गोमो दाग दी । गोमो वफ के घोड़े को लगी—घोड़ा अपने सवार को लेकर गिर गया । परन्तु वफ ने तुरन्त उठकर पिस्तौल मंगस पर दाग ली । निशाना भूक गया । मंगस की बन्दूक अब खाली थी वह तनवार लेकर वफ पर टूट पड़ा । इसी समय हडसन ने धाग भड़ उसके सिर पर बन्दूक की नाख से बार किया । पर मंगल धड़ी फुटों से बचा और तनवार लेकर दोना से भिड़ गया । दोना अफसर मिलकर भी इस वफर हुए घर का कुछ न बिगाड़ सके । वे घायल हो गए । इसी समय बनम ह्वीसन ने चित्ला कर कहा—‘पकड़ो-पकड़ा गिरफ्तार करो । इस पर शोक पसटू ने भागे बढ़कर मंगस का हाथ पकड़ लिया । इस समय बवाटर की झूठी पर जो सैनिक थे वे निबट ही लड़े तमाद्या बल रहें थे । उन्होंने पसटू से चित्ला कर कहा—‘रखरदार पाण्डे का हाथ म सगाना । वरना जान न बचगी ।’ पसटू बचरा गया और उसने मंगस का धाड़ दिया । दोनों अफेज अफसर वहीं से भाग गए । मंगस में फिर अपनी राइफल में गोसियाँ भर ली ।

इसी बीच अमरल हिमरस को इस घटना की सूचना मिली । वह तुरन्त अपने दोना सड़कों और कुछ गारे सैनिकों की टुकड़ी लेकर घटना-स्थल पर पहुँचा । जनरल को आते दख मंगस न पुवार-सगार्ड—
“जवानो भाग आमो पम भूट करी । ये हमारे पात्रु मंगेज हमारे परम के दुस्मन आ रहें हैं । इन्हें खत्म कर लो । परन्तु पावटन के लोग कुछ दूर हट गए कुछ चुपचाप परपर की मूर्ति की भाँति गड़ गहे । मंगस की पुवार पर कोई भाग न बढ़ा । तब उसने अपना अन्त गमय निबट जान कर जोर से चित्ला कर कहा—“म आह्वय हूँ, बिबली

पाण्डस के हाथ मेरे गसे में फांसी का फदा नहीं डाल सकते ।” इतना बड़ बर उसने राइफस अपनी छाती से लगा कर दाग वी और उसका सोह-सुहान धरीर भूमि में पड़कर छापटाने लगा ।

— ० —

। ३१

जान फिमिप कामपुर की दली पस्टन में पादगी सफटीनेष्ट के नाम के प्रसिद्ध था । वह बहुधा हिन्दू-मुसमान सिपाहिया को ईसाई बनन का उपदेश देता और अनक धम की निम्दा किया करता था । उसकी मातृती में एक मुसलमान सिपाही मुहम्मद याकूब था । याकूब अपन रोजा-नमाज का पक्का और सच्चा सिपाही था । एक दिन सफटीनेष्ट स उस अपने आफिस में बुला कर कहा— ‘तुम्हारा यह बीमा पायनामा तो एकदम बाहिमास है । इस न पहना करो जाओ ।

बहुत अच्चा हुजूर इतना कहकर वह सामा करके जाग सगा । सफटीनेष्ट ने पुकारा— ‘ठहरो ।’

याकूब ने फिर सल्यूट किया— ‘हुबम ?’

‘तुम्हारी यह दाढ़ी भी सलुकी है ।’

‘हुजूर हमार कुरानपाक में दाढ़ी रखना मजहबी उमूमों में माना गया है ।’

‘कुरान बाहिमास बिठाव है तुमने कभी शरीफ पढ़ी है ?’

‘नहीं हुजूर, मैं हमसा कुरान शरीफ पढ़ा करता हूँ ।

मेकिन शरीफ भी पढ़ा करो ।’

“बहुत बन्धा हुआ, वह फिर जान सगा तो सप्टीनेण्ट ने उसे रोक कर कहा— ‘ठहरो ।’

सिपाही ने फिर सँस्यूट किया और लड़ा हो गया । सप्टीनेण्ट ने कहा—

‘क्या तुम यह समझते हो कि कुरान पढ़ने से तुम्हारा गुनाह माफ हो सकते हैं ?’

‘हूजूर, रसूल अल्साह ने कहा है कि तौबा करने से गुनाह माफ हो सकते हैं ।’

‘सफिन तुम्हारा रसूल अल्साह तो इस बक्त नोजव न है तुम यदि उसी पर ईमान साए रहोगे तो तुम भी दोजब में जाओग ।’

बहुत बन्धा हुआ, वह सँस्यूट कर भत पड़ा तो सप्टीनेण्ट ने तबारा राव कर कहा— ‘ठहरो ।’

वह फिर रुककर और सँस्यूट करके एट-घन लड़ा हुआ गया । सप्टीनेण्ट ने कहा— ‘ठहरो ।’

यूसुफ फिर एट-घन में लड़ा हुआ गया । मामत से एक सिपाही गोपालसिंह जा रहा था । सप्टीनेण्ट ने कहा— ‘उस बुलाओ ।’ यूसुफ गोपालसिंह को बुला साया । सप्टीनेण्ट ने उससे कहा ‘यह क्या हिनाबत है कि मंग बदल भूम रहे हो और तुम्हारा तिर पर यह इतना बड़ा गुनाह क्या है ।’

‘हूजूर आज एषादगी है । मैं सगा नहा कर जा रहा हूँ और पूजा करने का पक्ष पहल सकता हूँ ।’

‘कैदा और जंगमी तरीने है तुम्हारा । यह माथ पर तुमने क्या सगाया है ।’

‘यह तिलफ है हूजूर ।’
‘इसे पोछ दो और आइया बैरक में तिलक नहीं सगा सकते ।’

'बहुत अच्छा हुआ' वह धमने लगा। सपटीनेष्ट ने कहा—
'ठहरो।'

गोपालसिंह रुक गया। उसने भी संस्युट किया। सपटीनेष्ट ने कहा देखो—तुम दोनों हिन्दू-मुसलमान गुमराह हो। तुमको साजिम है सच्चे ईश्वर और उसके बेटे ईसूमसीह की सख्त आज्ञा और बगावत और सराब राम और मुहम्मद का पस्ता छोड़ दो।'

'बहुत अच्छा हुआ'।

तुम यदि ईसाई बन जाओगे तो हम तुम्हें सरकारी देंगे। तुम्हारा खोहवा बड़ेगा। सिपाही को हम हवसदार और हबलदार को सूबेदार-भेजदार बना देंगे।

'बहुत अच्छा हुआ'।

दोनों सिपाहियों ने संस्युट किया और धम दिए।

— • —

३२

आम तौर पर मरबारी तथा व्यक्तिगत पत्र व्यवहार में अंग्रेजों ने भारतीय हिन्दू और मुसलमानों का एक संयुक्त नाम रखा था—
'हींदम'। यह नाम पूजा और तुच्छता का छोटक था। इसका अर्थ था—जंगली मिथ्याबिदवासी। और हिन्दू-मुसलमान दोनों को अपसम्भ बनाने के लिए अंग्रेज सार भारतवर्ष के निवासियों को ईसाई बनाना चाँहते थे।

जिम समय अंग्रेज इस प्रकार भारत के पैरों में दासता की बेड़ियाँ डाल रहे थे उग समय के सारे संसार में धर्माश्रमण का आरम्भ कर चुके थे। अस्कीका और अमरिका के मूल निवासियों को ईसाई

बना सेने से उमका साहस बढ़ गया था और अब ब भारत क इन हींदों पर ईसूमसीह के कास की छाया डालना चाहते थे । व उन दिनों यह सपना देख रहे थे—कि एक बार पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध से धमकूठ होकर हिन्दुस्तान के ये हीवन अपने धर्म पर सज्जित होंगे, उसे त्याग देंगे और वह कुरान की अपेक्षा इजीस को पवित्र मानेंगे । उनके मन्दिर-मस्जिद एक दिन गिरजा वन जाएँगे । इसी भावना से उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथमार्ध का प्रत्येक अंग्रेज अपने सत्वा भाषणों और भाषा में यही प्रकट करता था कि ईसाई-धर्म का झंडा भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक लहरान के लिए ही भारत का विनाश साध्याय्य—मुदावन्द करीम ने हमारे हाथों में दिया है । इसलिये समूचे भारत को ईसाई बनाने क महान् कार्य में डीम न टकराकित भर चेष्टा करनी चाहिए । इसी भावना से प्रेरित होकर सन् १८३६ में मेकाल ने यह गबौक्ति की थी कि तीस बरों में भारत में एक भी मूर्तिपूजक न बचेगा ।

भारत में ईसाई धर्म को फैलाने का इतना तीव्र आग्रह ईस्ट इंडिया कम्पनी का इसलिये था—कि अंग्रेज समझते थे कि यदि एक बार हिन्दुस्तान से धर्म का नाप हो जाय तो फिर बहो की राष्ट्रीय भावना अपनी मौस मर जायगी वनपने ही न पाएगी और आत्मतत्त्व और आत्माभिमान रहित जाति पर धामन करना आसान होगा । धसल में ईसाइयत क प्रचारका दृष्टिकान भी धार्मिक न था, शुद्ध राजनीतिक था । इसलिये अंग्रेज ने इस काम में पापुगीजा तथा औरंगजद की मोति तमबार का उपयोग नही किया—कृटिस राजनीति चरती । उस युव के साध्याय्य की राजनीति की व भसी-भोति जीव कर चुके थ और अत्यन्त धनुराई स धीरे-धीरे—मगातार हिन्दुस्तान को ईसाईस्तान बनाने का बारोबार प्रकृष कथ में उन्हने पारी रका था

इसी दृष्टिकोण को लेकर तत्कालीन रेवरेण्ड बेंगलडी ने कहा था—कि जब तक हमारा साम्राज्य भारत में है हमें किसी प्रकार की अड़चनो की परवाह न करके भारत में हिमायत से सका तक ईसाई-धर्म का बिस्तार करना होगा। और जब तक समूचा भारत ईसाई न बनेगा और हिन्दू-मुसलमानों के धर्म की निन्दा न करेगा, तब तक हमें अपना काम जोरा से करना चाहिए। हमें भी जान से वस और अधिकार के प्रयोग से ऐसे उपाय करना चाहिए कि भारत के पूर्व में ईसाइयों का एक मुद्दू गड़ बन जाय।

इसी बात को दृष्टिकोण में रख कर ईस्ट इंडिया कम्पनी की राजनीति बनी। उस घास को छाड़िए कि कितन ईसाई मिशनरियों ने भाति भाति के प्रमोदन धमकियाँ और धान्वासन देकर सागा का ईसाई बनाया। इनाम कमीशन और सप्लु की कृष्टिर् नीति के फलस्वरूप जब राजा नबाब मुरदार, आगीरदार, जमीदार गुप्त हो गए तो सबका मन्दिर पाठशाला मकतबा का आसहायता मिलती थी बन्द हो गई तथा ऐसी सस्यामा को जो गाँव जमीन और धार्मिक इनाम मिलना थे वे भी अस्त हो गए।

इसके बाद जब भती प्रथा को बन्द करने और विधवा विवाह जारी करने का कानून बन लाया वीरुधे हो गए और यह मानने लगे—कि ये बिन्धी हमारी सामाजिक और धार्मिक रीतियों में क्या इनाम बना चाहत है। जब बमकस में सता प्रथा बन्द होने का आग्योवन बन रहा था सभी सरकार ने यह भी घोषणा की थी—कि कदिया को धार्मिक रियाज पामन करने का हक नहीं है। और जब विधवा विवाह कानून कोमिन में पाम हो रहा था—रात्र गार्ड कौनिंग न गए थी थी—कि बहु-मतोत्थ विवाह का विबन्ध भा मेजिस्त्रटिव कोमिन में लाया जाय और इसके तुरन्त बाद ही बहु

साया भी गया । और काविविद्य की गई कि उस जस्य स जस्य बानून का रूप दे दिया जाय । इस कार्य में साइ कैनिंग न बड़ी तत्परता दिखाई थी ।

यद्यपि ये सुधार अत्यावश्यक थे और जन-जागरण के वास्तविक जन-नेताओं द्वारा हात । उस काल में भी राजा राममोहन राय और उनके साथी इन सुधारों में सहायक थे । पर जनता में आम तौर पर न तब जागरण था न राजा राममोहन राय जैसे सुधारकों को बहुमत प्राप्त था । जनता तो अधविश्वासों में जकड़ी पड़ी थी और सत्तास्थियों की रुढ़ियों ने उसकी विचारशक्ति को मृना दिया था । अब उनके जागरण से प्रथम ही विश्वासिया न जो इस प्रकार की चप्टाएँ का ता अपेक्ष और साधारण बोटि की बहुसंख्यक जनता में यह भावना फल गई कि यह स्पष्ट ही हिन्दू-मुसलमानों के धार्मिक रीति रिवाजा पर आप्रमण हो रहा है । और यह विदगी सरकार हमारे धर्म विषयों में भोग रीति-रिवाजों में दलम दगी है । स्पष्ट था कि इन धार्मिक रीति रिवाजा की छच्छाई-बुराई पर जनता विचार नहीं करती थी परन्तु इतना यह समझती थी कि धर्म-शास्त्रों में बनाए गए सामाजिक रीति-रिवाजों में किसी तरह हूर-फर करने का अधि कार कवम समाज के विद्वान् धर्म-शास्त्रियों ही को है विदगियों को महा । इमके अतिरिक्त एम मामला में जन्दा और जवरदस्ती करना भी किसी तरह उपयुक्त न था । जहाँ-नहीं भोग बहन मग—यो माह्य मता हाना बन्द हुआ आज विषबा विवाह का पत्तन हुआ गया कय बधी-बधनाभा को पूजा भी बन्द हागा । बस हिन्दू धर्म का बड़ा गर्व ।

आम लोगो की इस अमान्त भावना को ईसाई मिशनरिया ने भी बड़ा दिया । वे तुल्यमत्तुल्या डींग हाकते थे—कि नभूषा

नाष्ट ईसाई होने वाला है । मोग कहते थे—यह तो औरंगजेबी बुझ है । क्या आज कोई शिवाजी जैसा वीर और गुरु गाबिन्द सिंह जमा महापुरुष नहीं जन्म लेगा जो इन बिघर्षी, अत्याचारी विदितियों का दण्ड से निवास बाहर करे ?

धर्मी ये बातें जनता में खल ही रही थीं कि—रत्नगाड़ी चलने लगी और तार लग गए । रत्नगाड़ी में छूत-अछूत सभी एक साथ बैठने लग । इसकी रोक न होने से हिन्दू-जाति-निप्टा को भारी चोट पहुँची । रत्न की पट्टी और तारा के आस को देव कर मोग कहते थे सो यह अब तो ईदकर ही बुरा करे । भरती माता घापी जा रही है । कुछ लोग कहते—अजी सब हिन्दू-मुसलमान सोहे की पट्टी के द्वारा घुँव की गाड़ी में बँटा कर मज्र भेज दिए जाएँगे । जहाँ मामू उन्हें ला जाएँगे । हिन्दुस्तान में अब अंग्रेज रहेंगे ।

इस समय मिशनरियों के स्कूल-कासेज बन गए थे और उनमें पढ़ने से हिन्दू-मुसलमानों को धार्मिक पढ़ाई जाती थी । तथा माइं कैनिंग की सरकार ने उन्हें बड़ी-बड़ी रकमें महायत्नार्थ दी थीं, जब कि दमी पाठगामाएँ और मकतब तोड़ दिए गए थे । ईसाई धर्म व्याख्यानों में बहुत थे—कि जो हिन्दू-मुसलमान ईसाई हो जायगा उसकी जमीन-आयगाद धन-माल पर उसी का पूरा कब्जा रहेगा । ऐसा बामून बन चुका है । यह मन्थ भी था कि उन दिनों ईसाई मिशनरियों को मागी-मोटी तनख्वाहें भारतीय राजाने न दी जाती थी । उन दिनों साधारण गीरे सरकारी कामकारी में सेकर बड़े में बड़े अफसर तक की पट्ट बणा रहनी थी कि जल्द न जल्द उनसे मानहान सब काल आवमी ईसाई बन जाएँ । उस समय माइं कैनिंग और उनका कीमिशन ही सरकार थे । इन सब कारणों से सोलों में एक अज्ञान्ति थी, अंग्रेजों के प्रति विद्रोह की भावना पर

करती जाती थी और अब इस विचार से कि यदि कभी भारतीय प्रजा विद्रोह करे, तो उसकी आँच सैनिकों तक न पहुँचने पाए, देशी सैनिकों में भी ईसाई-धर्म का प्रचार जोरो से होने लगा था।

लड़ाई जब नहीं होती थी तो सिपाही लोग फुसंत में रहते थे, और तब अंग्रेज कप्तान उन्हें ईसाई-धर्म का उपदेश देते थे। ये उपदेश सीधी-सादी नर्म भाषा में नहीं होते थे। उनमें धमकी, कट्टे ध्यंग और हिन्दू देवी-देवता तथा मुसलमानों के पैगम्बर को गाली-गुफ्तार तक होती थी। बहुधा मूर्तियाँ भ्रष्ट कर दी जाती थीं। तिलक-ध्याप और छोटी हिन्दुओं की तथा दाढ़ी की मुसलमानों को मुमानियत की जाती थी। सिपाहियों को सब कुछ सुनना और सहना अनिवार्य था। पर ये पसेबर और इन बातों के कारण अंग्रेजों से घृणा करते तथा उनके प्रति विद्रोही बनत आते थे। यदि कोई सिपाही इन गोरों अफसरों के इन ध्यंगों का जवाब देना चाहता था, तो उसकी भी रोटी बन्द कर दी जाती थी। इस प्रकार हिन्दू-मुसलमान सभी सिपाही यह धाम राय रखते थे कि अंग्रेजी फौज की बँकरों में रहना अपने धर्म ईमान को छोड़कर ही हो सकता है। कोई सिपाही ईसाई हो जाता तो उस सुरत इसी कारण हवसदार-भूबदार बना दिया जाता और योग्य व्यक्ति मुँह ठाकठ रह जात।

उन दिनों प्रायः ये सब गरीब-भँवार असहाय और अत्यदर्शी, बसमम होत थे। उन्हें धमभ्रष्ट और पयभ्रष्ट करना भासान था। इसलिए एक बार अंग्रेजों की यह भावना दुःख हुई कि पहल इन सब सैनिकों को ही ईसाई बना लिया जाय। उन दिनों कुछ कमाण्डर और कर्नल खास तौर पर इसी अभिप्राय से भरती हुए थे और सिपाहियों को ईसाई बनाना अपना प्रधान कर्तव्य समझते थे। उन दिनों

देश में ऐसे बहुत-से मुस्लिम और हिन्दू पण्डित थे, जो फिरगियों का कत्ल करने का कृतबा दिया करते थे ।

ऐसा ही अशान्त वातावरण था जब इसहीजी में सुदिया से प्रचलित दत्तक पुत्र व अधिकारों को अमान्य करके उन्हें पिता की सम्पत्ति से बिरत कर दिया । इससे सारे देश का वातावरण दुःख और क्रुद्ध हो उठा । यह सब हो रहा था कि नए कारखूसों ने जैसे बघकठी प्रोबामिन पर भी हाथ दिया ।



३३

उन दिनों कसकसे के दक्षिण अंचल में जान बाजार में महारानी रासमणि दासी रहती थीं । रासमणि बड़ी धनी और धर्मरमा महिला थीं । उनकी धानशीलता की बड़ी भूम थी । उनके दरमुर वारेन हेस्टिंग्स के दाहिने हाथ थे । राजा नन्दकुमार को फौसी दिमाने में उनका प्रमुख हाथ था । वारेन हेस्टिंग्स की कृपा से उन्होंने बहुत धन-सम्पत्ति एकत्र कर ली थी तथा उन्हें महाराजा का सिताव भी मिस गया था । उनकी मृत्यु पर उनके पुत्र महाराजा राजचन्द्र बसु ने कम्पनी सरकार की अथक सेवा करके सम्पत्ति एकत्र की थी । उनकी मृत्यु को भी अब चार साल बीत चुके थे । इस समय रानी रासमणि दासी ही पति की सम्पूर्ण सम्पत्ति की अधिकारिणी थीं । इस समय उनकी अवस्था बालीस बरस की थी और उनकी सतति में चार कन्याएँ थीं । तीन कन्याओं का विवाह हो चुका था, किन्तु तीसरी बेटी का प्रयत्न बदना में देहान्त हो गया था । रानी ने सोचा कि अब उनके एकमात्र आधार दामाद मसुयनाथ बदायित् उनसे

ताता तोड़ कर अपने घर भसे जायें इसलिये उन्होंने अपनी कनिष्ठ कन्या जगदम्बा का विवाह उनके साथ कर दिया था ।

रानी जाति की केवट थीं । अग्नेजा की कृपा से बहुत केवट, चासे, वाग्शी आदि उन दिनों राजावहादुर और महाराजा हो गए थे । परन्तु बंगाल में ब्राह्मणों का श्रेष्ठत्व और जातपात का अहंकार अभी भी बहुत था । रानी रासमणि को देवी का इष्ट था । उनके जर्मोदारो के कागजों पर उनकी जो मुहर लगाई जाती थी उसमें— कासीपद भूमिनापी धीमती रासमणि दासी अंकित रहता था । रानी की बड़ी भूमिनापा थी कि वह काशी जा कर श्री विश्वनाथ का दान करें । इसके लिए उन्होंने बहुत मारी रजम रस छोड़ी थी । परन्तु उस समय बंगाल का कोई निष्ठावान ब्राह्मण उनके साथ जा कर उन्हें बिद्वनाथ जी के दान करने को राजी नहीं हुआ । इससे हताश हो कर उन्होंने कसकसे ही में गंगा तट पर बिद्वनाथ बाबा की प्रतिष्ठा कर के भोग-पूजा का बन्दोबस्त करने का इरादा किया । रानी न गंगा के पश्चिम तट को वाराणसी तुल्य समस्त मन्दिर के लिए जमीन की तलाश की । और उत्तरपाड़ा के गाँवों में स्थान ढूँढ़ाया । वे उचित से अधिक मूल्य भी देने को राजी हो गईं । परन्तु वहाँ के जर्मोदारा ने यह कह कर जमीन बेचने से इन्कार कर दिया कि हम साग अपने इलाके में केवट के घन से बने घाट पर पैर नहीं रखेंगे । तब साधारण हो रानी को दूसरे किनारे दक्षिणध्वर में ही जमीन लेनी पड़ी । जमीन पर भव्य मन्दिर बनाने लगा बागीचा भी लगाने लगा । कई साल तक काम चला । अभी बहुत काम दोष था—कि रानी न दान जीवन की दापमंगुरता पर विचार कर के प्रथम देवता की प्रतिष्ठा करने का निश्चय किया परन्तु वे जाति की केवट थीं, इसलिये प्रतिष्ठा और पूजा के लिए कोई ब्राह्मण नहीं मिला । रानी

मन्दिर में देवता की प्रतिष्ठा करा सकती हैं—इसकी किसी भी पण्डित ने व्यवस्था नहीं दी। बड़ी दौड़-भूप और मित्रत-बिरोरी करने से सामापुत्र की पाठशाळा के पण्डित जी ने यह व्यवस्था दी कि रानी यदि प्रतिष्ठा में पहले ही देवासय और सम्पत्ति किसी ब्राह्मण का दान में दे दें, और फिर वह ब्राह्मण मन्दिर की प्रतिष्ठा करा के भोग राग की व्यवस्था करे तो शास्त्र की मर्यादा भी रह जायगी और मन्दिर में ब्राह्मण आदि उच्च वर्ण के लोगों को प्रसाद ग्रहण करने में कुछ दोष भी न सगेगा।

निश्चय रानी ने अपने कुसगुरु को वह मन्दिर और सम्पत्ति दान कर दी और उनकी अनुमति से उनकी कर्मचारी की हैमियत से मन्दिर-निर्माण तथा प्रतिष्ठा का प्रवर्ण करने लगीं। परन्तु इतने पर भी बंगाल के पण्डितों का बिरोध कम न हुआ। उन्होंने कहा— शास्त्र बिद्वता की बठिनाई तो दूर हो गई परन्तु फिर भी कोई ब्राह्मण यहाँ न आएगा। निदान कोई ब्राह्मण गुरु द्वारा प्रतिष्ठित देवी-देवता को हाथ जोड़ने तथा पूजा करने को राजी नहीं हुआ। रानी के गुरुबराज वालों का भी दूसरे ब्राह्मण एक प्रकार से गुरु ही मानते थे। इसके अतिरिक्त उस बंस में कोई ऐसा बिद्वान् ब्राह्मण न था जो प्रतिष्ठा और पूजा का काय सम्पन्न करा सके। रानी ने अधिक वेतन और बहुत-सा पारितोषिक देना स्वीकार कर के पुजारी और भण्डारी के पद के लिए ब्राह्मण की तलाश की। परन्तु कोई कुसीन ब्राह्मण राजी न हुआ। बड़ी बठिनाई से अपनी पदबृद्धि की आशा में रानी की कचहरी के कारकुन महेशचन्द्र चट्टोपाध्याय ने अपने बड़े भाई दामनाथ को राधागोविन्द की मूर्ति का पुजारी नियत किया। बिन्तु वाली की पूजा करने के लिए पुजारी नहीं मिला। परन्तु अब ब्राह्मणों की मर्ती का मार्ग खुल गया था। सामापुत्र की पाठ-

गासा के अध्यापक रामकुमार भट्टाचार्य महेशचन्द्र के परिचित थे ।
 निर्मे परस्पर कुछ याँब का रिश्ता भी था । भट्टाचार्य शास्त थे ।
 वीर उन्हाने कमी-कमी चोरी-छिपे कमबलते के कायस्थों के यहाँ
 पुजारी का काम किया भी था । परन्तु भरोसा न था कि वह धूर्दा रानी
 के यहाँ भी आ कर काम स्वीकार कर लेंगे । फिर भी महेशचन्द्र
 कहने से रानी ने बड़ी धीनसा से रामकुमार के पाम पत्र द्वारा प्रार्थना
 की—कि जगन्माता की प्रतिष्ठा का कार्य आप की ही दी हुई व्यवस्था
 के अनुसार हा रहा है, सारी तैयारी हो चुकी है । राधागोविन्द की
 पूजा के लिए पुजारी मिस चुका है, परन्तु कामी की पूजा के लिए ब्राह्मण
 नहीं मिस रहा है । इसलिये आप इस कार्य में सहायता करें ।

महेशचन्द्र ने रानी का पत्र रामकुमार को देकर और समझा
 बुझा कर तथा सोम-सामन्य में बधा करके अन्त में उन्हें इस बात पर
 राजी कर लिया कि जब तक दूसरा उपयुक्त ब्राह्मण न मिले तब
 तक कामी के पुजारी पद का भार वे ही ग्रहण करें और अन्तत वे राजी
 हाकर दक्षिणेश्वर चले आए । रामकुमार भट्टाचार्य की असम्भावित
 शृपा से रानी को बड़ी प्रसन्नता हुई और फिर बड़ी धूमधाम से जगदम्बा
 कामी की प्रतिष्ठा की गई । बड़ा भारी दान भोजन का आयोजन
 हुआ । कसौज, कागी, सिसहट उड़ीसा आदि दूर से पण्डित लोग
 उस उत्सव में निमन्त्रित हुए । उन सबका रोगमी घोड़ी दुपट्टा और
 एक-एक मुहर विदाई में मिली । अनगिनत अतिथि अम्यागत और
 दीनदुखी जनों को रानी ने मुफ्तहस्त में दान दिया । मन्दिर बनवाने
 और प्रतिष्ठा कराने में रानी ने ५ लाख रुपया खच किया और दो
 लाख २६ हजार में त्रैलोक्यनाथ ठाकुर से उनका दीनाबपुर हिस्से
 का इमाका खरीद कर राग भोग के लिए मन्दिर को दे दिया ।

मन्दिर की प्रतिष्ठा होने से प्रथम ही रानी विधि से बठोर तपस्या
 करने लग गई थीं । वे तीन बार स्नान करतीं हविष्य भोजन करतीं,

भूमि पर सोतीं और हर समय जप-पूजन करती रहती थीं। परन्तु कैंसी अद्भुत बात थी कि इस धर्मशील परिवारकी रानी का सूत्रत्व तनिक भी कम न होता था। वे दूब्रा भी अच्छी थीं। उनके प्रतिष्ठित देवता भी ब्राह्मणों के लिए अस्पृश्य थे। इन दिनों बगास में छूत छात और जाठ-पाँठ का ऐसा ही असाध्य रोग फैल रहा था।



३४

दक्षिणेश्वर के बगीच में उत्तर की ओर, गंगा किनारे एक बहुत बड़ा बरगद का पड़ है। इसका तना भीर प्रयासाएँ कोई बीघे भर भूमि में फेंकी हुई है। बीच-बीच में जो बरोहें लटक कर जमीन में धा सगी हैं, वे उसके लिए घुनी का नाम दती हैं। इसके दक्षिण में एक छोटी-सी फूस की कुटिया थी अब उसकी जगह पक्का ईंटों का घर बन गया है। उसी कुटिया के आगे एक ब्राह्मण चुपचाप वहीं से धाबर बैठ गया था। तेजस्वी और गम्भीर था वह न किसी से कुछ बोसता था न किसी ओर देखता था। वह पान्त मुद्रा में चुपचाप बैठा मन्दिर की प्रतिष्ठा के समारोह की घूमघाम को देख रहा था। हजारों नर-नारियों की भीड़ उस समय मन्दिर में मरी थी। बहामोज हो रहा था। माँति-माँति के पकवान हर के बेर तैयार होते और भण्डार में बाहर भाते जा रहे थे। बड़े-बड़े चोटी चामे ब्राह्मण भोजन करने पट पर हाथ फेरते—और मुहर दक्षिणा म सते जा रहे थे। परन्तु यह ब्राह्मण चुपचाप सबको देन रहा था। उसने यहाँ भोजन भी ग्रहण नहीं किया था।

एक ओर बारह बरस का बालक उस दिन बड़ी थोड़भूप कर रहा था। उसका निवास इसी कुटिया में था। वह वारंवार वहाँ माता और तेजी से बसा जाता। उस बालक की आकृति और रूप रंग तो साधारण था—पर उसका व्यवहार में बड़ा आकर्षण था। जब-जब वह बालक उपर से गुजरता या कुटिया में आता-जाता तो यह ब्राह्मण बड़े ध्यान से उसको देखता पर बालक इतना व्यस्त था और अपने कार्य में कुछ ऐसा तल्लीन था कि इस बात पर उसका ध्यान ही नहीं गया—कि कोई आगन्तुक यहाँ बैठा है। ब्राह्मण ने भी उसे टोका नहीं। पर वह बड़े ध्यान से उस बालक को देख रहा था।

दोपहर ढल गयी और अतिथियाँ भी मीठ माड़ छँट गई। बालक की व्यस्तता कुछ कम हुई तो कुटी की ओर आत हुए उसका ध्यान इस ब्राह्मण पर गया। बालक ने ब्राह्मण के पास आकर कहा—

“आप कौन हैं ?”

“एक अम्यागत अतिथि ?”

‘क्या आप ब्राह्मण हैं ?’

‘जन्म तो ब्राह्मण के घर हो हुआ था, पर उसका मुझ अभिमान नहीं है।’

“भोजन हुआ ?”

‘न’।

‘क्यों ? सब ब्राह्मण तो भोजन कर गए।’

‘तो हमसु मुझे क्या ?’

‘माप भी भोजन कीजिए, दक्षिणा सीजिए, रानी मोहर दक्षिणा प रही है।’

‘मैं भिक्षुक ब्राह्मण नहीं हूँ। भोजन और दक्षिणा के लिए यहाँ नहीं आया।’

‘तो किसलिए आए हैं ?’

‘दर्शन करने के लिए ।’

‘तो किसलिए, देवदर्शन कीजिए ।

‘मैं देवीदर्शन करने आया हूँ ।

‘उधर कासीमाई का दर्शन है । घबरा कर उन्हीं का दर्शन कीजिए ।

कासी माँ क दर्शन की मुझ उरसुकता नहीं है । म बड़ी माँ के दर्शन करना चाहता हूँ ।

‘बड़ी माँ कौन ?’

जिनके पुष्प प्रताप का यह सुफन शील रहा है । जिनका हृदय की उदारता पवित्रता सोच्य तथा साधुता का सीरम इस भूमि में व्याप्त हो रहा है । मैं उन्हीं धर्मिमा रानी माता के दर्शन करना चाहता हूँ ।

रानी माँ पूजा में है । तीन दिन से वे निराहार हैं । जब तक सब प्राहण भोजन नहीं कर लेंगे वे जम भी ग्रहण नहीं करेंगी । घबरा अभी उनका दर्शन नहीं हो सकता ।

‘तो जब हो सकता है तभी सही ।’

‘क्या आप उनसे कुछ माँगना चाहते हैं ?’

‘मैं उन्हें कुछ भेंट अर्पण किया चाहता हूँ ।

‘कैसी भेंट ?’

‘यह उन्हीं को पताई जा सकती है ।

अच्छी बात है म अक्सर पाते ही उनसे कहूँगा । किन्तु आप भोजन ता कीजिए ।

‘उनके दर्शन करने क बाद भोजन भी हो जायगा ।’

बासक जाने सगा तो ब्राह्मण ने पूछा— 'तुम्हारा नाम क्या है भैया ?'

“मैं रामकृष्ण हूँ । और यहाँ दक्षिणद्वार में रायामाधव के श्रृंगार करने के काम पर नियुक्त हूँ ।

तुम्हारे नीतर ता भैया कोई महान् आत्मा वास कर रही है । क्या तुमने भोजन किया ?

नहीं ' कह कर वासक तभी स भाग गया ।

— ० —

३५

सूर्यास्त से कुछ पहले ही वह वासक रानी रासमणि को ले कर ब्राह्मण के पास आया । रानी ने दानों हाथ जोड़ कर ब्राह्मण को प्रणाम किया । पर इससे प्रथम ही ब्राह्मण स घरती में लोट कर रानी को साष्टांग प्रणाम किया ।

रानी ने दाना बाना पर हाथ धर कर कहा—

“यह आपने क्या किया ब्राह्मण दवता ? मैं दूदा हूँ अम्पूदया हूँ । आपने मुझ प्रणाम किया मुझ पर पातक पड़ाया ।

आप दिव्यरूपा हूँ सब मनुष्या में धष्ट और पूज्या ह । आपने दर्शन स मनुष्य की मुक्ति हा सनपी है । स प्रातःकाल ही से आपने दर्शन करन की अमिताया से यहाँ बठा हूँ ।

आपने भोजन नहीं किया ?

“नहीं ।

‘तो भोजन कीजिए ।

आप अपने हाथ से राँध कर भात दें, तो भोजन कर सकता हूँ।”

‘किन्तु यह कैसे हो सकता है, मैं जाति की केबट हूँ।

‘तो इससे क्या ? मैं ब्राह्मण हूँ। परन्तु ओ आत्मा मेरे अन्तर में बास करता है वही आपके अन्तर में भी है। अन्तर इतना ही है कि आप धर्मात्मा और पवित्र हैं और मैं अधम हूँ।

दिव दिव यह आप बँसी बात कहते हैं आप ब्राह्मण हैं।’

‘ब्राह्मण तो मया मय बोलता है। मैंने भी सरय कहा है। मैंने आपके सम्बन्ध में मय बातें सुनीं। ब्राह्मणों ने आपका कितना तिरस्कार किया यह भी मुना। जाति-अभिमान में ये मूढ अन्ध-धुरे और धर्मधम का विचार भी तो बँटे हैं। फिरंगी लोग इनके सिर पर पैर रख कर जो दासन बना रहे हैं वहाँ इन ब्राह्मणों की बास नहीं चलती। उन्हें भाई-बाप बनाते इनको सज्जा नहीं जाती। जिस दिन मण्डिक ब्राह्मण नन्दकुमार को कसबता में पँसी दी गई तब ये ब्राह्मण भीर इनके घाम्ब वहाँ चले गए थे। इन्होंने दाप देकर अंग्रेजों को क्यों नहीं भस्म कर लिया। ये हॉंगी पासण्डी, मूर्ख, धमण्डी ब्राह्मण एक धर्मात्मा रानी का ही नहीं देवता का भी तिरस्कार करने में नहीं दम्राए। आप जाति से गूढ़ हैं इसलिए आप द्वारा प्रतिष्ठित देवता का पूजन-नमन भी ये नहीं करेंगे ? मैं चाहता हूँ कि मैं इन मय ब्राह्मणों को गोली से उबा दूँ और हिन्दू धम को इसकी घामता से मुक्त कर दूँ।

रानी ने हाथ जोड़ कर कहा—“जाप तत्रम्बी ब्राह्मण है। जो चाह कहें पर म स्त्री हूँ गूढ़ हूँ अमहाम हूँ मैं कुछ नहीं कह सकती। म तो मही ममजती हूँ कि मरा पुण्य-गाम हो गया, देवता की प्रतिष्ठा हा गई और मरा धन मरकम में लग गया। अब मैं प्रसन्न हूँ।

“आप केवल शरीर से ही घुड़ नहीं हैं आपका मन भी इन ब्राह्मणों की बासता में फँसा है। आप धारम-सम्मान खो चुकी हैं। नहीं तो इतना अपमान करने वाले इन ब्राह्मणों का तो आप को मुँह भी न देखना चाहिए था।”

“ऐसा मत कहिए। ब्राह्मण पृथ्वी का स्वामी है। वह भूसुर है।

“पर वह ब्राह्मण ही भी तो। जिमने अपनी इन्द्रिया को बन्ध में करके बासना से मुक्ति पा ली हो और जो सब बन्धनों से मुक्त भीतराग दान्त महारमा हो वही तो ब्राह्मण है। ये दक्षिणा के लोभ में निमग्न स्वान्त वाले पेटू ब्राह्मण थोड़े ही हैं। ब्राह्मण के रूप में बँस हैं।”

“आप समर्थ हैं जो चाहे कहिए। परन्तु कृपा कर भोजन कर लीजिए। आप भोजन कर लें तो मैं भी ठाकुर का घरनामृत लूँ।

कह तो चुका—अपने हाथ से मात रीझ कर देंगी तो ही भोजन करूँगा नहीं तो नहीं।

‘मेरे ब्राह्मण को अपने हाथ का मात किस खिला सकती हूँ ?

“बिश्वास रखिए महाराजी आपका मात खाकर मैं भी ऐसा ही ब्राह्मण रहूँगा। मैं कबूचा ब्राह्मण नहीं हूँ। मेरा ब्राह्मणत्व पूरा पक्का है।।

“परन्तु ब्राह्मण सुनेंगे तो आपको जातिभ्युत कर देंगे ?

‘मैं तो प्रथम ही इन सब भोजन नष्टों को जातिभ्युत कर चुका हूँ। वे अब मेरा कुछ नहीं विगाड़ सकते।’

म ब्राह्मण का हाथ से पूषक भोजन आपक लिए बनबाएँ दती हूँ।”

‘ब्राह्मण का हाथ का मैं खाऊँगा नहीं। आप ही मेरे हाथ का भाग खाऊँगा। आप मातुरूपी हैं। जगदुपात्री का स्वरूप हैं।

गए । वे बड़ी देर तक गर्जन-उर्जम करते रहे और फिर चले गए ।

ब्राह्मण ने भोजन करने कहा— यस माँ अब में जाऊँगा । आपसे एक अनुरोध करता हूँ, आप मानेंगी ?

आप जो कहेंगे वही मैं करूँगी ।'

'तो सुनिए । बैरकपुर की छावनी में जो वड़े साहव हैं कर्मांडिंग जनरल उमकी स्त्री का नाम शुभदा देवी है । वह ब्राह्मण कन्या हैं । वह आप ही की भक्ति तिष्ठावासी स्त्री हैं । भारत में क्षीय ही एक महा उत्पात उठेगा । एक ज्वालामुखी का बिस्फोट होगा । जिसमें सब अंग्रेज फिरंगी भस्म हो जाएँगे । मरा आपसे अनुरोध है कि आप उनसे जाकर मिलें । उन्हें अपनी सखी और मित्र बनाएँ, और विपत्ति के समय उन्हें अपने यहाँ रक्षण दें । मैंने उन्हें सीमाग्य बनी रहने का आशीर्वाद दिया है । मेरे इस आशीर्वाद को आप सफल कीजिए । समय है मैं समय पर उन तक न पहुँच सकूँ । इसी से यह मार आपको सौंपता हूँ ।'

इतना कह कर वह ब्राह्मण तजी से वहाँ से चम दिया । उसने मुह फेर कर भी नहीं देखा । रामी एक मुहूर्त भर उसी ओर बेसती रही जिस ओर यह अद्भुत ब्राह्मण गया था ।



जान बाजार की रानी रासमणि मुलाकात के लिए आई हैं यह सूचना पात्र ही शुभदा एवबारगी ही ब्यस्त हो उठी । और वह धँगसे क बाहर घाँसी धाई । बाहर भा कर देगा—अहमूस्य

किमलभाव से डकी एक पालकी सेहम में लगी थी और सबदक सुनहरी पोशाक पहने आठ कहार उसकी बगल में खड़े थे। उनके पीछे पन्द्रह-बीस सवार बन्दूकों लिए लाल और हरी घनास के अगे पहने साफा बांध कर खड़े थे। सेहन से बाहर मैदान में एक हाथी सुनहरी झोस से सुसज्जित सूँड़ हिला रखा था। पाटक स घट कर रानी क दीवान महेशचन्द्र घट्टोपाध्याय मूल्यवान रेशमी चादर कन्ये पर बाल धुपचाप लड़े थे। उनके पीछे आठ-बस वेहंगी रलीं थीं। उन पर बहुत स धान झावे और सन्दूक थ। धाला और झावों में मिठाइयाँ, पकवान और बकसों में कीमती बन्ध भरे थे।

धुमदा बेबी को देखते ही रानी रासमणि पालकी से निकल आई, उन्होंने धुमदा की चरण रज मी। धुमदा बेबी ने उन्हें रोक कर कहा—“हे-हे यह आप क्या कर रही है ?”

“रानी ने हँसते हुए कहा— आप उन्न में मरी बेटी के बरबर हैं, पर आप ब्राह्मण की बटी हैं मैं सूत्र हूँ। आपकी चरण रज लेना मेरा धर्म है। मैं जान बाजार की रानी रासमणि हूँ। आपके पिता का गाँव मरी ही जमींदारी में है। आपके पिता मरे पति के विद्या-गुरु थे। आपके सम्बन्ध में बहुत दिन हुए मने सुना था। पर आप यहाँ हैं यह नहीं जानती थी। अब जाना तो दगन करने पली आई।”

‘मेरा बड़ा भाग्य जो आपने दर्शन दिए। वही कृपा की आपने। आपका धूम नाम और धवन मंग में सुन चुकी हूँ—आप तो पुण्य-दर्शना हैं। दक्षिणद्वार भी मैं देख आई हूँ—बड़ा सुन्दर वेव घाम बनाया है आप ने। किन्तु आप मुझ बेटी पहती ह—फिर भी ‘आप’ कह कर क्यों बोसती ह तथा दगन करने आई ह दर्शन देने आई हैं यह क्यों नहीं कहती।

तुम्हारे पति से यह अनुरोध करने आई हूँ कि भगवान् न करे यदि कभी ऐसा दुर्दिन आए, तो तुम जानवाजार के महल को अपना ही समझना । मेरे तहत में वो सौ सिपाही हैं । और भी आवमी हैं । वहाँ कोई तुम्हारा काम भी वीका नहीं कर सकेगा । तुम अपने पति और इष्ट मित्रों सहित वहीं आ जाना ।'

आपका आश्वासन और कृपा असाधारण है । मैं अपनी ओर से तथा अपने पति की ओर से आप को धन्यवाद देती हूँ ।

'बेटी हो कर माँ को धन्यवाद देती हो ? कलिसुगी बटी हा तुम बिटिया ।' यह कह कर रानी हँस दी । फिर कहा— 'इस समय तुम्हारे पति से भेंट न हो सकी । पर मेरा संदेश तुम उससे कह दना । जबवा यह अधिक अच्छा होगा—कि एक बार तुम उन्हें से कर जान वाजार आ ही जाओ तो आवश्यकता होने पर क्या-क्या प्रबन्ध व्यवस्था करनी होगी, इसका ठीक ठिकाना कर लिया जाय ।

मैं जरूर उनसे कहूँगी ।"

'मुझे पत्र सिलोगी या मैं बट्टीपाध्याय महाशय को तुम्हारे पास भेजू ?'

"मैं ही आवमी भेजूगी ।

"तो बेटी, भूल न करना । कहीं ऐसा न हो—ब्राह्मण की आज्ञा-पालन में मुझसे कुछ हा जाय—और मरत धर्म-कर्म सब नष्ट हो जाय ।"

'नहीं महारानी ऐसा नहा होगा । किन्तु आप क्या इस मर्यादा ब्राह्मणी के यहाँ कुछ भी लाएँ-पिएँगी नहीं ?

'नहीं बेटी । नाराज मत होना । मैं तीसरे पहर मंगोजल से स्नान करके कबल एक जून हविष्नाथ भोजन करती हूँ । तथा कबल गंगाजल का छोड़ और कुछ ग्रहण नहीं करती । दूर हूँ बेटी गत

ग्यारह बरस से मेरा यही नियम चल रहा है। स्वार्थबरा ही यह कर रही हूँ—इससे कदाचित् मेरा सुद आदि से उधार हो जाय।” यह कह कर रानी आसन छोड़ उठ खड़ी हुई।

शुभदा ने कहा—‘माँ, आप दिव्यरूपिणी हैं। कौन आपको सुद कहता है। जहाँ आप जैसी साम्नी की चरण रज पड़ेगी—वह भूमि तो एक बोजन तक पवित्र हो जायगी। इसमा कह कर हठात् शुभदा देवी ने गले में आभूषण डाल कर मू-यतित हो रानी के चरणों में मस्तक टेक दिया।

‘यह क्या किया यह क्या किया बेटी—गोविन्द गोविन्द, तुम ने तो मझे पातकी बना दिया। ब्राह्मण की कन्या हो कर मेरे पैरों में सिर बे दिया। छी, छी।”

‘माँ अपने सारे जीवन में आज मुझ से एक पुष्प-काय हुआ। मेरा जीवन धम्य हुआ।”

शुभदा की आँसों से आँसू बह पसे। रानी ने फिर उसकी ठोड़ी छू कर अपनी उँगलियाँ चूमीं। और आकर पालकी में बैठ गई।

— ० —

३८

मेजर जनरल ब्यम्स भाव से बँगले में आए। उनके चहरे पर स्पष्ट ही परेशानी की रेगार दिख रही थीं। शुभदा ने शक्ति पित्त से उनका ओर बस कर कहा—‘बया कोई और दुपटना हो गई है?’

‘संगस पाण्डे का कोर्ट मामला हो गया। उसे फाँसी का हुकम हुआ है।’

‘क्या उस बधा नहीं सके ?’

‘मेरी तो सभी कोयिलों बेकार गईं ।’

‘बड़ी बुराव बात है । ब्राह्मण को फाँसी होगी । बंगाल की भूमि को अंग्रेज ब्राह्मण ही के रक्त से क्यों सींच रहे हैं ! महाराज मन्दकुमार के बाद अब मंगल पाण्डे !’

‘इस तरह नामों की सूची एकत्र करने से क्या साम है शुभदा भिन्न-भिन्न समयों में भिन्न-भिन्न कारण परिस्थिति वध उत्पन्न हो पाते हैं ।’

‘तो क्या तुम भी पाण्डे को फाँसी देने के पक्ष में थे ?’

‘मैं तो कमीशन का सदस्य नहीं था । फिर मैं तो तुम्हारे अनुरोध की रक्षा कर रहा था । पाण्डे के दोष पर मेरी नजर नहीं थी ।’

‘तो पाण्डे को अब फाँसी ही होगी ?’

‘एक भूमि-किस आ पड़ी है शुभदा बैरक का कोई जल्साद पाण्डे को फाँसी पर लटाने को राजी नहीं होता ।’

‘क्या ही अच्छा हो कि कमीशन के सदस्य की भी यही राय हो जाय ।’

‘यह संभव नहीं है परन्तु कमकत से जल्साद बुलाए गए हैं ।’

‘सकित वह तो अभी घायल है । घायल आदमी को फाँसी दी जायगी ? यह तो अमानुषिकता की हद है ।’

‘कमी-कमी अमानुषी काम भी करने पड़ते हैं शुभदा । मैजिक अनुशासन बड़ कठोर हैं ।’

‘इसका परिणाम क्या होगा । क्या यह कोई नहीं साबता ?’

‘विचारक का अपनी सीमा में बाहर साबने का अधिकार नहीं है ।’

“तो आप क्या समझते हैं कि कसकल से जस्वाद आ जायगा ?”

“मैं समझता हूँ आ जायगा ।

“कब तक ?

“परसा तक ।

“तो उसे हम कही मगा या छिपा नहीं सकते ?”

‘इससे क्या होगा ? पाण्डे का प्राण तो बचगा नहीं उसे दूँके

मिचाला जायगा ।”

“तब तक न जाने क्या हो जाय । क्या उसे ममा देने की अनुमति दते हा ?

‘इससे प्रथम मुझे मौजूरी स इस्तीफा देना होगा ।”

“क्यों ?”

“मैं अपन दायित्व को बँस मुमा सकता हूँ । धूमका तुम्हीं कैसे इस बर्दास्त कर सकोगी ।

‘उसमे तो गोली मार सी थी । बख्शा होता, उसी से यह अभाग बाइएन मर जाता साण्डाम का स्पर्ण तो उसे न करना होगा ।

धूमका देवी का मुँह बाइमो ने भरे आवाज के समान गम्भीर हो गया । फिर उन्होंने कहा— ‘क्या आपने यह भी सीखा है कि उसकी प्रतिश्रिया क्या होगी ?”

‘तुम्हारा अभिप्राय मैं समझता हूँ परन्तु यह अजस मेर ही करने की बात नहीं है । इसका मन्वन्व्य ब्रिटिस राजनीति से है ।

सचिन तुम तो स्वयं अंग्रेज हा और माय ही बिचारशील बड़े अफसर हो । क्या नहीं तुम मरकार मे रहत ?

“मे सिपाही हूँ । मरकार को समाह देना मेरा काम नहीं है । सरकार की आज्ञा-पामन करना मेरा काम है ।

‘मसे ही वह आशा अनुचित हो ?’

“भाजा के औचित्य पर भी विचार करने का मुझे अधिकार नहीं है। हाँ में मौकरी छोड़ सकता हूँ।

“इसका मतलब यह—कि बिना धारमजात किए हम सीधी राह नहीं चल सकते।’

“तुमने संसार की राजनीति की सबसे सुन्दर व्याख्या कर दी धुमरा।

क्या मैं उस ब्राह्मण से मिल सकती हूँ ?

नहीं।

‘क्या उसे कुछ सहायता पहुँचा सकती हूँ ?’

नहीं।

धुमरा बड़ी देर तक गुमसुम चुप बँठी रही। फिर उसने कहा—
“भीतर आओ।’

मेकडानरुड ने भीतर जा कर देखा—घालों में बहुत-सी मिठाइयाँ कीमती साड़ियाँ और बस्त्र हैं।

‘कहाँ से आए ये सब ?’

‘वहेज भाया है।’

‘वहेज ?’

‘मैं तो यही कहना चाहती हूँ।’ उसने रानी रासमणि का आना उनकी स्नेहनिष्ठा और सदैव ममी कुछ पसि को बता दिया।

मुम कर मेकडानरुड ने कहा—‘तुमने उन्हें रोका नहीं।’

‘बहुत कहा। अब उचित है कि एक बार उनके यहाँ लमो।’

‘यही मुनासिब है। तो खर चलो अब लाना ला में। मुझे अभी आफिम जाना है। कुछ अत्यन्त आवश्यक हुकम आए हैं। उनकी सामीप्य करनी है।

दोनों पति-पत्नी भोजन करने बैठे।

३४वीं रेजीमण्ट जिसमें मंगल पाण्डे सिपाही का अपन उत्तम आचरण के लिए प्रामाणिक थी । अपने कमाण्डर ह्वेस्टर के आधीन इस रेजीमण्ट में उत्तम सिपाया पाई थी । तथा इसके सूबदार में द्वितीय प्रनेडियर का दो सैनिका को जो राजद्रोह के लिए उकसाने आए थे सजा दिनाई थी । जाँच-अधिकारियों का समक्ष भी यह प्रमाणित नहीं हुआ कि बरहमपुर के उपद्रवों के साथ उनका कोई सम्बन्ध है । यह एक आकस्मिक घटना ही थी कि इस रेजीमण्ट के वहाँ पहुँचते ही मंगल पाण्डे ने यह उत्तेजनापूर्ण काम किया । परन्तु मंगल पाण्डे के उपद्रव करने पर ईदगरी पाण्डे तथा उसके साथियों की उदासीनता से रेजीमण्ट पर सदेह हो गया । इसमें संशय नहीं कि सिपाही अपने अप्रज अफसरों में भ्रूणा करते थे । यही कारण था कि जब मंगल पाण्डे ने सेफ्टीनेष्ट बफ पर प्राणघातक आक्रमण किया तो अन्य सिपाही उदासीनता से चुपचाप देखते रहे । क्या उसको सैनिक अनुशासन की याद दिला कर नहीं रोका जा सकता था ?

मजूर का सभी प्रयत्न व्यर्थ हुए और मंगल पाण्डे के गले में फौसी का फन्दा डालने का समय आ पहुँचा । तुझे मजाम में बहुत-से आदमी जमा थे । मजिस्ट्रेट, जमर और जेस का डाक्टर परस्पर की मूर्ति बन पास ही पड़े थे । अपने बच-स्वयं पर मंगल पाण्डे अविचल भाव से शान्त मुद्रा में गड़ा हुआ था ।

मजिस्ट्रेट ने प्रश्न किया— “पर सदा भ्रमना चाहते हो ?” मंगल की आँखें सात हा गई । उसने एक बार धूर कर अंग्रेज मजिस्ट्रेट की ओर देखा और कहा—

‘बर को नहीं बेश-भाइयो को । देवा भाइयों को मेंच खून
वेना और कहना—जब तक बदमा न लें धूप न बैठें । मरना है, तो
कुत्तों की मौत नहीं इंसान की मौत मरना चाहिए ।

जस्माद कासी टोपी से कर आगे बढ़ा तब उसने हाथ बढ़ा कर
जस्माद से टोपी से ली और स्वयं पहन कर गले तक मुस को डक
सिया । उसका दूसरा सकेत पाकर जस्माद ने फाँसी का फँदा उसके
हाथ में दे दिया और मंगल न उसे अपने गले में डाल सिया ।

स्मास हिला और लड़ता हुआ । नीर पुरुष का शरीर रस्ती पर
झूल गया । न जाने मानव-जीवन में कब से यह बर्बरता समाई बँठी है
कि जीवित खादमी को मार डालना न्याय का एक अंग माना गया है ।

— ० —

४०

मेजर उदास मन अपने घर के आँगन में घूमदा के सम्मुख आ
बढ़े हुए । घूमदा की आँखों में आँसू थे और वह एक शब्द भी बोल
नहीं पा रही थी ।

मेजर अपनी पत्नी का यह दुःख नहीं बेल सक । यद्यपि वे
अग्रज थे और अग्रज सेना में एक बहुत बड़ आफीसर, परन्तु घूमदा
के सान्निध्य में उन्होंने अपने हृदय में इस महान् मंत्र को स्वीकार
कर लिया था कि सबसे पवित्र तीर्थ मानव-हृदय है ।

बहुत देर तक वे अपनी पत्नी और अपने घर को दगल रहे ।
उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा था—मानो वे अपने अति प्रिय सम्बन्धी
का मृत्यु-संस्कार करके लौटे ह । धीरे-धीरे आग बड़ कर उन्होंने
अपनी पत्नी का हाथ पकड़ लिया और कहा—

“शुभदा, मैं अपने सैनिक पथ से इस्तीफा दे आया हूँ और उस
भार से मुक्त हूँ। आओ अब चर्चे।”

“रानी राजमणि के घर ?”

“नहीं।”

“इंग्लैंड—अपने घर ?”

“नहीं।”

“तब कहाँ ?”

“नैनीताल में, सन्त पाल के बर्ष में।”

“वहाँ क्यों ?”

‘वहाँ मेरे अकल रहते हैं। उन्होंने अपना अंग्रेजी नाम त्याग
कर भारतीय नाम मोरा सन्त रखा है। मेरी ही भाँति, एक त्यक्त और
पीड़ित भारतीय नारी से विवाह किया है और अब दोनों व्यक्ति
दीन-दुस्त्रियों की सेवा में भगे हुए हैं। वहाँ एक अस्पताल, एक प्रसूति-
गृह और एक स्कूल उन्होंने भारतीयों के लिए खोल दिया है। तुमने
जो मुझे यह गुरु-मंत्र दिया है, कि सबसे पवित्र तीर्थ मानव-हृदय है,
उसका पासन न तो मैं रानी राजमणि के राजमहल में कर सकूँगा,
न अपने पैर इंग्लैंड में जाकर। मैं भारतीय भूमि में अपने प्राणों
का विसर्जन किया चाहता हूँ। यदि मैं अभी इससे विवक्षित भी
होऊँ, तो प्रिये शुभदा, तुम मुझे उससे बचाना।”

